टिप्पणी

1

विषय के रूप में भूगोल का स्वरूप

प्रस्तावित पाठ का उद्देश्य विषय के स्वरूप की व्याख्या करना है। यह भूगोल के महत्व पर प्रकाश डालता है तथा एक विषय के रूप में भूगोल की प्रकृति का वर्णन करता है। यह ज्ञान को विस्तृत करने का प्रयास करता है और आधारभूत संकल्पनाओं के साथ–साथ तकनीकी शब्दों की व्याख्या करता है, जो भौगोलिक ज्ञान के घटक हैं। इसके अलावा अवधारणाओं को क्रमबद्ध व व्यवस्थित व्यवहारों में विकसित करने का प्रयास करता है और विषय की रोचकता को बढ़ाता है।

भूगोल एक प्राचीनतम भू–विज्ञान है और इसकी नींव प्रारंभिक यूनानी विद्वानों के कार्यों में दिखाई पड़ती है। भूगोल शब्द का प्रथम प्रयोग यूनानी विद्वान इरेटॉस्थनीज ने तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में किया था। Geo ''पृथ्वी'' और Graphy ''वर्णन करना'' भूगोल का शाब्दिक अर्थ है, जो पृथ्वी के धरातलीय सतहों का वर्णन करता है। दूसरे शब्दों में ''भूगोल विस्तृत पैमाने पर सभी भौतिक व मानवीय तथ्यों की अन्तर्क्रियाओं और इन अन्तर्क्रियाओं से उत्पन्न स्थलरूपों का अध्ययन करता है।'' यह बताता है कि कैसे, क्यों और कहाँ मानवीय व प्राकृतिक क्रियाकलापों का उद्‌भव होता है और कैसे ये क्रियाकलाप एक दूसरे से अन्तर्संबंधित हैं।

भूगोल की अध्ययन विधि परिवर्तित होती रही है। प्रारंभिक विद्वान वर्णनात्मक भूगोलवेत्ता थे। बाद में, भूगोल विश्लेषणात्मक भूगोल के रूप में विकसित हुआ। आज यह विषय न केवल वर्णन करता है, बल्कि विश्लेषण के साथ-साथ भविष्यवाणी भी करता है।

इस पाठ में आप दैनिक जीवन में भूगोल के महत्व के बारे में सीख सकेंगे। यह अध्ययन आपको अपने स्थान के बारे में बड़ी रोचकता से समझने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आपः

- दैनिक जीवन में भूगोल की उपयोगिता बता सकेंगे;
- विषय के रूप में भूगोल के विकास का पता लगा सकेंगे;
- मानव–वातावरण के संबंधों और उसके एक दूसरे पर प्रभाव को समझ सकेंगे;
- भूगोल के क्रमबद्ध और प्रादेशिक उपागम की व्याख्या कर सकेंगे;
- भूगोल में विभिन्न विश्लेषणात्मक तकनीकों को समझ सकेंगे;
- भूगोल की विभिन्न शाखाओं और इसके विषयक्षेत्र को पहचान सकेंगे।

1.1 दैनिक जीवन में भूगोल

आपने अवश्य ध्यान दिया होगा कि पृथ्वी की सतह पर लगातार परिवर्तन हो रहा है। सामान्यतः प्राकृतिक तत्वों जैसे पर्वतों, नदियों, झीलों आदि में धीरे–धीरे परिवर्तन होता है जबकि सांस्कृतिक तत्वों जैसे भवनों, सड़कों, फसलों आदि में तेजी से परिवर्तन होता है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर यात्रा करते समय आप महसूस करते होंगे कि वृक्षों की संख्या व प्रकार एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में परिवर्तित हो रहे हैं। यह सब पर्यावरण, जिसमें कि हम रहते तथा उसका प्रयोग करते हैं, की लगातार अन्तर्क्रियाओं के फलस्वरूप हो रहा है। भूगोल इस प्रकार के प्रतिरूपों का अध्ययन करता है। भूगोल का एक अन्य पक्ष क्षेत्रीय विभिन्नता के कारकों या कारणों को समझने में है कि किस प्रकार सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और जनांकिकी कारक भौतिक स्थलरूप को परिवर्तित कर रहे है और मानवीय हस्तक्षेप के फलस्वरूप नवीन स्थलरूपों का निर्माण हो रहा है। उदाहरण के लिए मानव, वन या बंजर भूमि का प्रयोग मानवीय अधिवास के रूप में कर रहा है।

भूगोल को प्रायः मानचित्र निर्माण और अध्ययन की कला के रूप में जाना जाता है। मानचित्र हमें रेखाचित्रों की अपेक्षा पृथ्वी के धरातल का अधिक सही व सुस्पष्ट चित्रण प्रस्तुत करते है। पूर्व की भाँति आज भी किसी क्षेत्र का भौगोलिक विवरण रिपोर्टों, यात्रा डायरियों और गजेटियरों में उपलब्ध है। वर्तमान में मानचित्र की रचना भौगोलिक सूचना तंत्र (जी.आई.एस.) के उपकरणों द्वारा उपग्रह छायाचित्रों के प्रयोग से किया जा सकता है। कम्प्यूटर सरलता से उपग्रह छायाचित्रों की सूचनाओं को मानचित्र में परिवर्तित कर देते हैं जो विकास में हुए परिवर्तनों का दर्शाते हैं। इस प्रकार की सूचना से समाज को लाभ होता है। वर्तमान में इस प्रकार के मानचित्रकारों की बड़ी माँग है। आजकल, पृथ्वी को बेहतर ढंग से समझने के लिए भूगोलवेत्ता, अभियंता, पर्यावरण वैज्ञानिक, नगर योजनाकार, सामाजिक वैज्ञानिक तथा अन्य लोग भी भौगोलिक सूचना तंत्रों का प्रयोग सीख रहे हैं।

टिप्पणी

भूगोल न केवल इस बात की खोज करता है कि पृथ्वी पर कहाँ क्या है बल्कि यह भी कि यहाँ क्यों है? भूगोलवेत्ता क्रियाकलापों की अवस्थिति का अध्ययन करते हैं। मानचित्रों के सावधानीपूर्वक प्रयोग से प्रतिरूपों की पहचान और साथ ही इन प्रतिरूपों के बनने के कारणों का पता लगाते है। इसके बाद क्षेत्रों का वर्णन स्थलरूपों के वितरण, जनसंख्या, मकानों के प्रकार और कृषि के आधार पर किया जाता है। वे स्थानों के बीच के सम्बंधों और आवागमन की जानकारी प्राप्त करते है तथा उस क्षेत्र में होने वाली स्थानिक प्रक्रियाओं के विषय में निष्कर्ष निकालते है।

वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य, उर्जा के प्रभावकारी उपयोग और पर्यावरण संरक्षण जैसी समस्याओं से जूझ रहा है। समानता के मुद्दे और टिकाऊ विकास भी समान महत्व रखते है। इन सभी की प्राप्ति संसाधनों के सतत् रूप में प्रयोग द्वारा ही की जा सकती है। पर्यावरणीय प्रक्रियाओं के बारे में अधिक जानकारी तथा यह समझने में कि समस्याओं के समाधान में भूमि उपयोग योजना किस प्रकार सहायक हो सकती है, भूगोल का अध्ययन आवश्यक है।

संक्षेप में :

1. भूगोल स्थान का विज्ञान है।
2. मानचित्र भूगोलवेत्ताओं के लिए आवश्यक उपकरण है।
3. मानचित्रों को बनाने के लिए अंकीय भौगोलिक सूचना तंत्र नये उपकरण है।
4. भूगोल के अध्ययन और मानचित्रों के उपयोग से स्थानिक योजना बनाई जा सकती है।

आधारभूत संकल्पनाएँ

इतिहास के भिन्न कालों में भूगोल को विभिन्न रूपों में परिभाषित किया गया है। प्राचीन यूनानी विद्वानों ने भौगोलिक धारणाओं को दो पक्षों में रखा था। प्रथम गणितीय पक्ष, जो कि पृथ्वी की सतह पर स्थानों की अवस्थिति को केन्द्रित करता था तथा दूसरा यात्राओं और क्षेत्रीय कार्यों द्वारा भौगोलिक सूचनाओं को एकत्र करता था। इनके अनुसार, भूगोल का मुख्य उद्देश्य विश्व के विभिन्न भागों की भौतिक आकृतियों और दशाओं का वर्णन करना है। भूगोल में प्रादेशिक उपागम का उद्भव भी भूगोल की वर्णनात्मक प्रकृति पर बल देता है। हम्बोल्ट के अनुसार, भूगोल प्रकृति से सम्बंधित विज्ञान है और यह पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी साधनों का अध्ययन व वर्णन करता है। अन्य महत्वपूर्ण विचारकों ने भूगोल को मानव–पर्यावरण अन्तर्सम्बन्धों के रूप में परिभाषित किया है।

- भूगोल पृथ्वी तल के अध्ययन के रूप में।
- भूगोल मानव–पर्यावरण–अन्तर्सम्बन्धों के अध्ययन के रूप में।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 1.1

1. भूगोल क्या है?

   _____

2. पृथ्वी–तल क्यों परिवर्तित हो रहा है?

   _____

3. यूनानियों द्वारा अनुसरण की गई दो भिन्न प्रवृत्तियों कौन सी है?

   (i) _____ (ii) _____

1.2 भूगोल का विकास

(अ) प्राचीन काल

आरंभिक प्रमाणों के अनुसार इस समय के विद्वान मानचित्र निर्माण और खगोलीय मापों द्वारा पृथ्वी के भौतिक तथ्यों को समझते थे। भूगोल में आरंभिक विद्वान देने का श्रेय यूनान को ही जाता है, जिसमें प्रमुख थे होमर, हेरोडोटस, थेल्स, अरस्तु और इरेटॉस्थनीज।

(ब) पूर्व-आधुनिक काल

यह काल 15 वीं सदी के मध्य से शुरू होकर 18 वीं सदी के पूर्व तक चला। यह काल आरंभिक भूगोलवेत्ताओं की खोजों और अन्वेषणों द्वारा विश्व की भौतिक व सांस्कृतिक प्रकृति के बारे में वृहत ज्ञान प्रदान करता है। 17 वीं सदी का प्रारंभिक काल नवीन वैज्ञानिक भूगोल की शुरूआत का गवाह बना। क्रिस्टोफर कोलम्बस, वास्कोडिगामा, मैगलेन और थॉमस कुक इस काल के प्रमुख अन्वेषणकर्त्ता थे। वारेनियस, कान्ट, हम्बोल्ट और रिटर इस काल के प्रमुख भूगोलवेत्ता थे। इन विद्वानों ने मानचित्रकला के विकास में योगदान दिया और नवीन स्थलों की खोज की, जिसके फलस्वरूप भूगोल एक वैज्ञानिक विषय के रूप में विकसित हुआ।

(स) आधुनिक काल

रिटर और हम्बोल्ट का उल्लेख बहुधा आधुनिक भूगोल के संस्थापक के रूप में किया जाता है। सामान्यतः 19 वीं सदी के उत्तरार्ध का काल आधुनिक भूगोल का काल माना जाता है। वस्तुतः रेट्जेल प्रथम आधुनिक भूगोलवेत्ता थे, जिनने चिरसम्मत भूगोलवेत्ताओं द्वारा स्थापित नींव पर आधुनिक भूगोल की संरचना का निर्माण किया।

(द) नवीन काल

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद भूगोल का विकास बड़ी तीव्र गति से हुआ। हार्टशॉर्न जैसे

टिप्पणी

अमेरिकी और यूरोपीय भूगोलवेत्ताओं ने इस दौरान अधिकतम योगदान दिया। हार्टशॉर्न ने भूगोल को एक ऐसे विज्ञान के रूप में परिभाषित किया जो क्षेत्रीय विभिन्नताओं का अध्ययन करता है। वर्तमान भूगोलवेत्ता प्रादेशिक उपागम और क्रमबद्ध उपागम को विरोधाभासी की जगह पूरक उपागम के रूप में देखते हैं।

1.3 भूगोल का क्षेत्र

भूगोल ने आज विज्ञान का दर्जा प्राप्त कर लिया है, जो पृथ्वी तल पर उपस्थित विविध प्राकृतिक और सांस्कृतिक रूपों की व्याख्या करता है। भूगोल एक समग्र और अन्तर्सम्बंधित क्षेत्रीय अध्ययन है जो स्थानिक संरचना में भूत से भविष्य में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन करता है। इस तरह भूगोल का क्षेत्र विविध विषयों जैसे सैन्य सेवाओं, पर्यावरण प्रबंधन, जल संसाधन, आपदा प्रबंधन, मौसम विज्ञान, नियोजन और विविध सामाजिक विज्ञानों में है। इसके अलावा भूगोलवेत्ता दैनिक जीवन से सम्बंधित घटनाओं जैसे पर्यटन, स्थान परिवर्तन, आवासों तथा स्वास्थ्य सम्बंधी क्रियाकलापों में सहायक हो सकता है।

1.4 भूगोल के अध्ययन की विधियां

आज, भूगोल ही एकमात्र ऐसा विषय है जो धरातल के स्थानिक विन्यास की गत्यात्मता को समझने के लिए सभी प्राकृतिक व मानवीय विज्ञानों को एक मंच पर लाता है। भूगोल में अध्ययन की दो मुख्य विधियाँ है :

(अ) क्रमबद्ध (ब) प्रादेशिक

(अ) क्रमबद्ध उपागम

धरातल पर स्थित विशिष्ट प्राकृतिक व मानवीय तथ्यों जो कि कुछ स्थानिक प्रतिरूप या संरचना बनाते हैं, का अध्ययन क्रमबद्ध अध्ययन कहलाता है। साधारणतः क्रमबद्ध भूगोल को चार शाखाओं में विभाजित किया जाता है:

(i) भौतिक भूगोल,

(ii) जैव भूगोल, पर्यावरण भूगोल सहित

(iii) मानव भूगोल,

(iv) भौगोलिक विधियाँ और तकनीक

(i) यह पृथ्वी के विभिन्न तंत्रों जैसे वायुमंडल (वायु), जलमंडल (जल), स्थलमंडल (पृथ्वी की ठोस चट्टान) और जैवमंडल का अध्ययन करता है, जो पृथ्वी पर जीवित जीवों के लिए आवश्यक है।

(ii) यह विभिन्न प्रकार के वनों, घासों, वनस्पतियों और वन्य जीवों के वितरण, मानव

टिप्पणी

प्रकृति सम्बंधों और जैविक पर्यावरण की गुणवत्ता और इसके मानवीय कल्याण के निहितार्थ का अध्ययन करता है।

(iii) यह किसी स्थान की संस्कृति, जनसंख्या, वहाँ के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक पक्षों की गतिशीलता का वर्णन करता है।

(iv) यह क्षेत्र अध्ययन की विधियों व तकनीकों, गुणात्मक, मात्रात्मक, मानचित्रकला विश्लेषण, भौगोलिक सूचना तंत्र और भूमंडलीय सूचना तंत्र (जी. आई. एस. और जी. पी. एस.) और सुदूर संवेदन का अध्ययन करता है।

- भूगोल का विकास चार कालों में हुआ है –
  प्राचीन काल, पूर्व–आधुनिक काल, आधुनिक काल तथा नवीन काल।
- नवीन काल में भूगोल के क्षेत्र में हार्टशॉर्न का प्रमुख योगदान है।
- भूगोल एक समग्र और अन्तर्सम्बंधित क्षेत्र का अध्ययन है जो कि विभिन्न स्तरों पर स्थानिक संरचनाओं में होने वाले परिवर्तनों के अध्ययन से जुड़ा हुआ है।

(ब) प्रादेशिक भूगोल

क्रमबद्ध भूगोल के समान, प्रादेशिक भूगोल स्थानिक छापों तथा सभी क्रमबद्ध भौगोलिक प्रक्रियाओं का प्रदेश के विभिन्न आकारों के रूप में अध्ययन की शुरूआत है। प्रदेश किसी एक कारक जैसे, उच्चावच, वर्षा, वनस्पति, प्रति व्यक्ति आय पर आधारित हो सकते हैं। वे दो या अधिक कारकों के संयोग से निर्मित बहु–प्रकार्यात्मक प्रदेश भी हो सकते हैं। प्रशासनिक इकाई जैसे राज्य, जिला, तहसील को भी प्रदेश के रूप में सम्मिलित किया जा सकता है। प्रादेशिक भूगोल की मुख्य उपशाखायें है :

(i) प्रादेशिक अध्ययन

(ii) प्रादेशिक विश्लेषण

(iii) प्रादेशिक विकास

(iv) प्रादेशिक नियोजन (क्षेत्रीय व समुदाय नियोजन)

- भूगोल में दो प्रमुख उपागम जैसे (अ) क्रमबद्ध और (ब) प्रादेशिक है।
- क्रमबद्ध भूगोल चार उपविभागों में विभाजित है
- प्रादेशिक भूगोल के भी चार उपविभाग है।

पाठगत प्रश्न 1.2

1. क्रमबद्ध भूगोल की कौन–सी चार शाखायें है?

टिप्पणी

(i) _____ (ii) _____ (iii) _____ (iv) _____

2. प्रादेशिक भूगोल की मुख्य शाखाओं के नाम बताइए।

_____

[redacted]

भौगोलिक चिंतन और अवधारणाएँ हमारे दिन–प्रतिदिन के निर्णयों को विविध प्रकार से प्रभावित करते है। उदाहरण के लिए नगरीय मास्टर प्लान बनाते समय या ग्रामीण विकास पर विचार करते समय भौतिक स्थलाकृतियों, जलवायु, संसाधनों की उपलब्धता तथा लोगों की आवश्यकताओं के बारे में जानना बहुत जरूरी है। नगरीय क्षेत्रों से उद्योगों को हटाने का निर्णय लेने पर औद्योगिक भूमि उपयोग के विस्तार के लिए कृषि क्षेत्रों की जरूरत होती है। इससे किसान विस्थापित हो जाएँगे तथा उनकी आय के स्रोत नष्ट हो जाएँगे। इसी प्रकार रेलमार्गों या महामार्गों के निर्माण से दोनों ओर मकान बन जाते है। ऐसे गलियारों पर कई आर्थिक क्रिया कलाप केन्द्रित हो जाते हैं। बाढ़ या भूकम्प के बाद सभी व्यक्तियों को राहत सामग्री की जरूरत होती है। लोगों की जरूरत के अनुसार राहत सामग्री के उचित वितरण के लिए उस क्षेत्र के भूगोल का ज्ञान होता आवश्यक है। राहत सामग्री का वितरण भी प्रभावित क्षेत्रों की जलवायु व [redacted]

[redacted]

व्यवस्थित ज्ञान की प्रत्येक शाखा की कुछ विधियाँ/यंत्र और तकनीक होती है, जिन पर इसकी बुनियाद आधारित होती है। भूगोल का भी अपना एक यंत्र, तकनीक व विधियां है। इसमें ग्लोब, मानचित्र, आरेख, उच्चावच प्रतिमान और स्थानिक अन्वेषण विधियाँ है। मानचित्र विज्ञान का सम्बंध मानचित्र और आरेख तैयार करने से है, जो भौगोलिक परिघटनाओं के वितरण को दर्शाते हैं। भूगोल की मुख्य विधियाँ आगमनिक व निगमनिक है। विभिन्न सांख्यिकीय तकनीक और प्रतिमानों का प्रयोग प्रादेशिक अन्वेषण और स्थानिक वितरणों और अन्तः क्रियाओं के लिए किया जाता है।

अ. मानचित्र विज्ञान

हममें से अधिकतर मानचित्रों द्वारा आकर्षित होते है। ''मानचित्र'' विज्ञान मानचित्र व आरेख निर्माण करने का प्रयोगात्मक अध्ययन है। यह मानचित्रों और प्रतीकाक्षरों की सहायता से पृथ्वी को प्रस्तुत करता है। पारंपरिक रूप से मानचित्रों का निर्माण कलम, स्याही और कागज की सहायता से होता रहा है, परन्तु कम्प्यूटर ने मानचित्र विज्ञान में क्रांति ला दी है। जी. आई. एस. विधि के द्वारा कोई भी व्यक्ति मानचित्र व आरेख अपनी इच्छानुसार पूर्ण दक्षता से तैयार कर सकता है।

स्थानिक आँकड़े मापन और अन्य प्रकाशित स्रोतों द्वारा प्राप्त किये जाते हैं और उसे

विभिन्न उद्देश्यों के लिए प्रयोग हेतु डाटाबेस में भंडारित किया जा सकता है। स्याही और कागज द्वारा मानचित्र बनाने की परंपरा अब समाप्त होती जा रही है। इसका स्थान कम्प्यूटर निर्मित मानचित्र ले रहे है। ये मानचित्र अधिक गत्यात्मक और अंतः क्रियात्मक होते है तथा अंकीय युक्ति से इसमें परिवर्तन किये जा सकते हैं। आज अधिक व्यापारिक गुणवत्ता वाले मानचित्र कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर की सहायता से बनाये गये है। ये कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर कम्प्यूटर आधारित आंकड़ा प्रबंधन (CAD), भौगोलिक सूचना तंत्र (GIS) और भूमंडलीय स्थिति तंत्र (GPS) है।

मानचित्रकला, आरेखण तकनीक के संग्रहण से निकलकर वास्तविक विज्ञान बन गई है। एक मानचित्रकार को अवश्य समझना चाहिए कि कौन सा संकेत पृथ्वी के बारे में प्रभावशाली सूचना देता है और उन्हें ऐसे मानचित्र तैयार करने चाहिए जिनसे प्रत्येक व्यक्ति मानचित्रों के प्रयोग हेतु उत्साहित हो और वह इसका प्रयोग स्थानों को ढूँढ़ने तथा अपने दैनिक जीवन में करे। मानचित्रकारों को भूगणित के साथ–साथ आधुनिक गणित में भी पारंगत होना चाहिए ताकि वे समझ सकें कि पृथ्वी की आकृति, निरीक्षण के लिए चौरस सतह पर प्रक्षेपित मानचित्र के चिन्हों की विकृति को किस प्रकार प्रभावित करती है।

''भौगोलिक सूचना तंत्र'' पृथ्वी के विषय में सूचनाओं का भंडार है, जो कम्प्यूटर द्वारा स्वचालित व उचित रीति से पुनः प्राप्त किया जा सकता है। एक जी. आई. एस. विशेषज्ञ को भूगोल के अन्य उपविषयों के साथ–साथ कम्प्यूटर विज्ञान तथा आंकड़ा संचय तंत्र की समझ होनी चाहिए। पारंपरिक रूप में मानचित्रों का उपयोग पृथ्वी की खोज और संसाधनों के दोहन में होता रहा है। जी. आई. एस. तकनीक मानचित्र विज्ञान का विस्तार है, जिसके द्वारा पारंपरिक मानचित्रण की क्षमता और विश्लेषणात्मक शक्ति काफी बढ़ गई है। आजकल वैज्ञानिकों का समुदाय मानवीय क्रियाकलापों के फलस्वरूप पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को जान गये है तथा जी. आई. एस. तकनीक भूमंडलीय परिवर्तनों की प्रक्रियाओं को समझने का अनिवार्य उपकरण बन गया है। विविध प्रकार के मानचित्रों और उपग्रह सूचना तंत्रों को मिलाकर प्राकृतिक तंत्रों की जटिल अन्तः क्रियाओं की पुनर्रचना की जा सकती है। इस प्रकार की सजीव कल्पना से यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि बार–बार बाढ़ से ग्रस्त होने वाले क्षेत्र का क्या होगा या किसी विशेष उद्योग के किसी क्षेत्र में स्थापित या विकसित होने से क्षेत्र में क्या परिवर्तन होंगे।

ब्रिटिश आर्डिनेन्स सर्वेक्षण के आधार पर स्थापित भारतीय सर्वेक्षण विभाग के बाद राष्ट्रीय एटलस एवं विषयक मानचित्रण संगठन (एन. ए. टी. एम. ओ.) भारत में मानचित्र निर्माण की प्रमुख संस्था है। इसके दस लाख श्रृंखला के मानचित्र बहुत प्रसिद्ध हैं। 1960 में पांडिचेरी के फ्रांसीसी संस्थान के मानचित्रण इकाई ने भूगोल के विकास में उल्लेखनीय प्रभाव डाला। इस संस्थान ने 1:1,00,000 के पैमाने पर वनस्पति और मृदा मानचित्र बनाये थे। इस संस्थान को संसाधनों के मानचित्रण के लिए खूब प्रशंसा मिली। 1995 में इस इकाई का दर्जा बढ़ाकर ज्योमेटिक्स (Geomatics) प्रयोगशाला कर दिया गया, जिसमें कम्प्यूटर मानचित्र और भौगोलिक सूचना तंत्र पर

टिप्पणी

विशेष बल दिया जाता है।

ब. भूगोल में मात्रात्मक विधियाँ

भूगोल की इन तकनीकों का सम्बंध मुख्यतः संख्यात्मक विधियों से है। स्थानिक विश्लेषण के अलावा भौगोलिक अध्ययनों में गुच्छ विश्लेषण और भेदमूलक विश्लेषण भी शामिल है। इन सांख्यिकीय तकनीकों को आप आगामी अध्यायों में पढ़ेंगे। इसके द्वारा आप क्षेत्र में होने वाले क्रियाकलापों और क्षेत्रों के बीच अन्तर्सम्बंधों को जान सकेंगे तथा प्रतिरूपों को पहचान सकेंगे।

स. प्रादेशिक विज्ञान विधि

प्रादेशिक विज्ञान आंदोलन का प्रारंभ 1950 में वाल्टर इसार्ड के नेतृत्व में हुआ। इसने पारंपरिक भूगोल की गुणात्मक प्रवृत्तियों के विपरीत भौगोलिक प्रश्नों को और अधिक मात्रात्मक और विश्लेषणात्मक आधार प्रदान किया। प्रादेशिक विज्ञान ने ज्ञान के एक ऐसे तंत्र का निर्माण किया जिसमें प्रादेशिक विकास हेतु प्रादेशिक अर्थशास्त्र, संसाधन प्रबंधन, स्थानीयकरण सिद्धांत, नगरीय तथा प्रादेशिक नियोजन, परिवहन और संचार, मानव भूगोल, जनसंख्या वितरण, भूदृश्य पारिस्थितिकी और पर्यावरणीय गुणवत्ता का

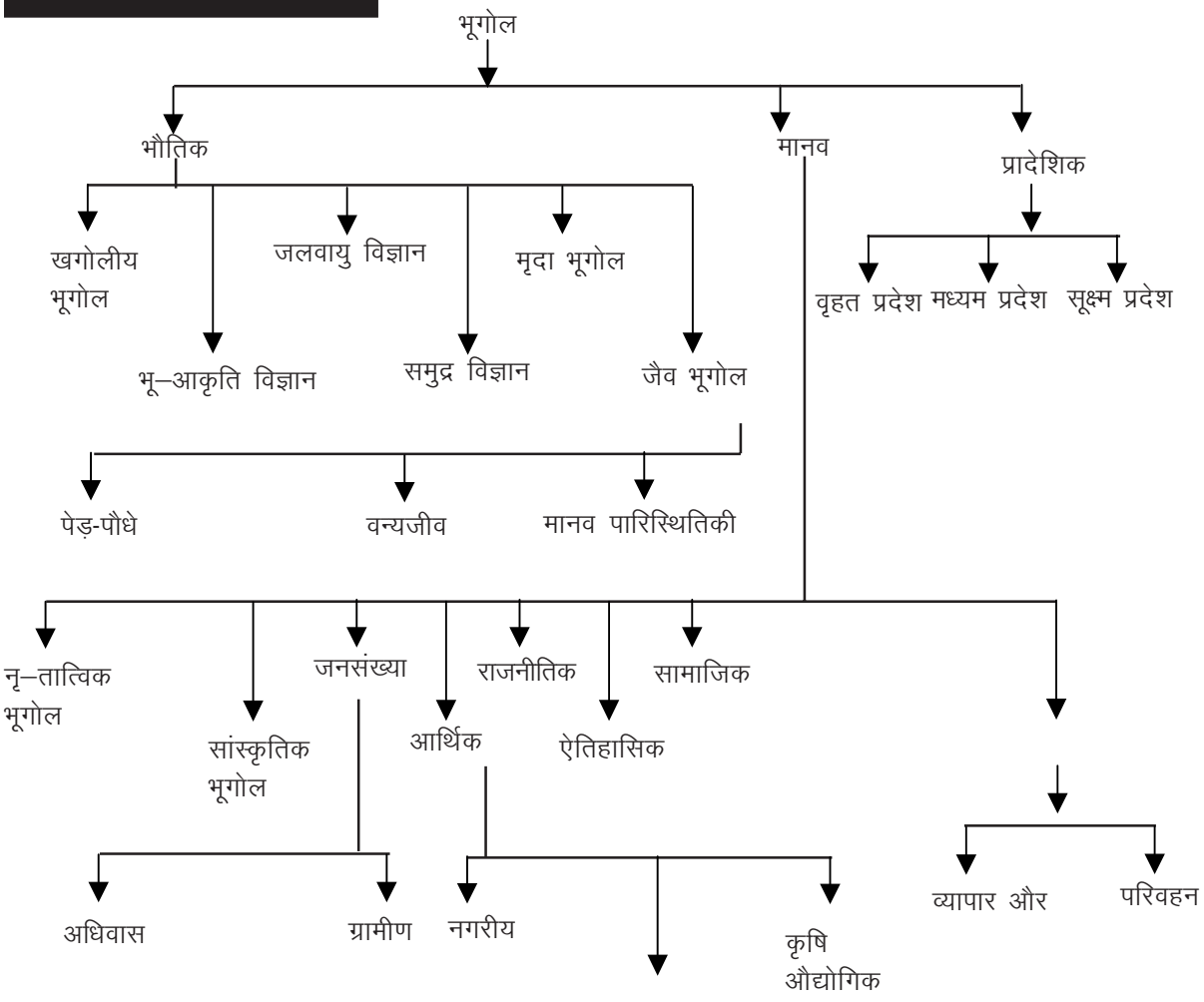

चित्र 1.1 भूगोल की शाखाएँ

टिप्पणी

धरातल की विभिन्न परिघटनाओं को अलग–अलग या सामूहिक रूप में लिया जा सकता है। इन्हें भौतिक तथा मानवीय परिघटनाओं के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। इस प्रकार भूगोल की तीन प्रमुख शाखाएँ है : भौतिक भूगोल, मानव भूगोल और प्रादेशिक भूगोल।

(अ) भौतिक भूगोल

भौतिक भूगोल, भौतिक परिघटनाओं की व्याख्या व अध्ययन करता है, साथ ही यह भूगर्भशास्त्र, मौसम विज्ञान, जन्तु विज्ञान और रसायनशास्त्र से भी जुड़ा हुआ है। 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यह विषय बहुत लोकप्रिय हुआ। इसकी कई उपशाखाएँ हैं, जो विविध भौतिक परिघटनाओं की विवेचना करती हैं।

(i) खगोलीय भूगोल : यह पार्थिव घटनाओं का अध्ययन करता है, जिसमें मुख्य रूप से पृथ्वी की सतह के साथ–साथ सूर्य, चन्द्रमा और सौरमंडल के ग्रहों को शामिल किया जाता है।

(ii) भूआकृति विज्ञान : यह पृथ्वी के स्थलरूपों का अध्ययन करता है। इसके अन्तर्गत जल, वायु और हिमानी के अपरदनात्मक, परिवहनात्मक और निक्षेपात्मक कार्यों द्वारा स्थलरूपों की उत्पत्ति व विकास शामिल है।

(iii) जलवायु विज्ञान : जलवायु विज्ञान वायुमंडलीय दशाओं और सम्बंधित जलवायविक और मौसमी परिघटनाओं का अध्ययन है। इसके अन्तर्गत वायुमंडलीय संघटन, जलवायविक प्रदेशों तथा मौसमों आदि का अध्ययन शामिल है।

(iv) समुद्र विज्ञान : यह महासागरीय तल की गहराइयों, धाराओं, प्रवाल भित्तियों और महाद्वीपीय विस्थापन आदि से सम्बंधित महासागरीय संघटकों का अध्ययन करता है।

(v) मृदा भूगोल : यह विविध मृदा निर्माण प्रक्रियाओं के साथ–साथ इसके भौतिक, रासायनिक और जैविक संघटकों, रंग और प्रकार, संरचना व वितरण और वहन क्षमता आदि का भी अध्ययन करता है।

(vi) जैव भूगोल : यह स्थान की जैविक घटनाओं के अध्ययन से सम्बंधित है, विशेष तौर पर विविध प्रकार के वनस्पतियों और वन्य जीवों के वितरणों का अध्ययन करता है। जैव भूगोल को पादप या वनस्पति भूगोल, जन्तु भूगोल और मानव पारिस्थितिकी के रूप में उपविभाजित किया जा सकता है।

(ब) मानव भूगोल

मानव भूगोल पृथ्वी की सतहों और मानव समुदायों के बीच सम्बंधों का संश्लेषित अध्ययन है। यह तीन संघटकों से निकटतम रूप में जुड़ा है: मानवीय जनसंख्या का स्थानिक विश्लेषण; मानवीय जनसंख्या और पर्यावरण के बीच के संबंधों का पारिस्थितिक

टिप्पणी

विश्लेषण और प्रादेशिक सश्लेषण, जो कि धरातल के क्षेत्रीय विभेदीकरण में पहली दोनों विषयवस्तुओं को जोड़ता है।

मानव भूगोल की कई उप–शाखायें है :

(i) मानवविज्ञान भूगोल : यह बड़े पैमाने पर स्थानिक सन्दर्भ में विविध प्रजातियों का अध्ययन करता है।

(ii) सांस्कृतिक भूगोल : यह मानवीय संस्कृतियों की उत्पत्ति, संघटकों और प्रभावों की चर्चा करता है।

(iii) आर्थिक भूगोल : यह स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय और विश्व स्तर पर आर्थिक गतिविधियों की अवस्थिति व वितरण का अध्ययन करता है। आर्थिक भूगोल का अध्ययन निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है: संसाधन भूगोल, कृषि भूगोल, औद्योगिक व परिवहन भूगोल।

(iv) राजनीतिक भूगोल : यह स्थानिक सन्दर्भ में राजनीतिक परिघटनाओं का अध्ययन करता है। इसका मुख्य उद्देश्य राजनीतिक व प्रशासनिक प्रदेशों के उद्भव व रूपान्तरण की व्याख्या करना है।

(v) ऐतिहासिक भूगोल : भौगोलिक परिघटनाओं का स्थानिक व कालिक अध्ययन ऐतिहासिक भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है।

(vi) सामाजिक भूगोल : यह स्थान की सामाजिक परिघटनाओं का विश्लेषण करता है। निर्धनता, स्वास्थ्य, शिक्षा, जीवनयापन सामाजिक भूगोल के कुछ मुख्य क्षेत्र हैं।

(viii) जनसंख्या भूगोल : यह जनसंख्या के विविध पक्षों जैसे जनसंख्या वितरण, घनत्व, संघटन, प्रजनन क्षमता, मर्त्यता, प्रवास आदि का अध्ययन करता है।

(viii) अधिवास भूगोल : यह ग्रामीण/नगरीय अधिवासों के आकार, वितरण, प्रकार्य, पदानुक्रम और अधिवास व्यवस्था से सम्बंधित अन्य आधारों का अध्ययन करता है।

(स) प्रादेशिक भूगोल : प्रादेशिक भूगोल के अन्तर्गत प्रदेशों का सीमांकन [redacted] विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है।

1. भूगोल की दो शाखाएँ कौन सी हैं?

   (i) _____ (ii) _____

2. भौगोलिक अध्ययन की दो तकनीकों के नाम बताइए?

   (i) _____ (ii) _____

टिप्पणी

3.

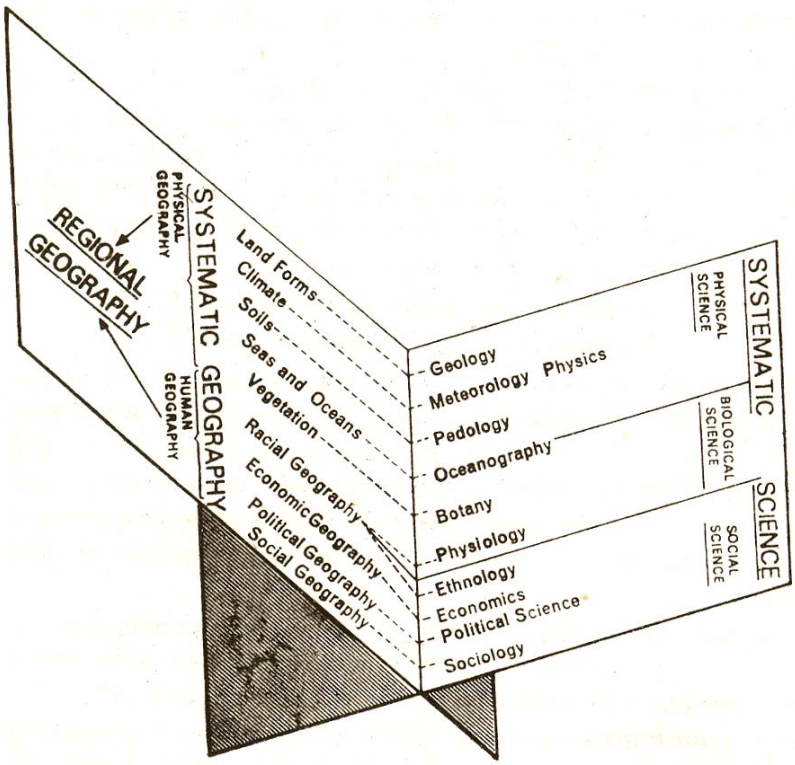
REGIONAL GEOGRAPHY
SYSTEMATIC GEOGRAPHY
PHYSICAL GEOGRAPHY
HUMAN GEOGRAPHY
Land Forms
Climate
Soils
Seas and Oceans
Vegetation
Racial Geography
Economic Geography
Political Geography
Social Geography
SYSTEMATIC SCIENCE
PHYSICAL SCIENCE
Geology
Meteorology
Physics
BIOLOGICAL SCIENCE
Pedology
Oceanography
Botany
Physiology
SOCIAL SCIENCE
Ethnology
Economics
Political Science
Sociology

टिप्पणी

भूगोल एक अन्तर्सम्बंधित विज्ञान के रूप में
(हेटनर और हार्टशॉर्न पर आधारित)

- भूगोल की तीन मुख्य शाखाएँ है : भौतिक, मानव और प्रादेशिक।
- भौतिक भूगोल में प्राकृतिक परिघटनाओं का उल्लेख होता है, जैसे कि जलवायु विज्ञान, मृदा और वनस्पति।
- मानव भूगोल भूतल और मानव समाज के सम्बंधों का वर्णन करता है।
- भूगोल एक अन्तरा–अनुशासनिक विषय है।

भूगोल का गणित, प्राकृतिक विज्ञानों और सामाजिक विज्ञानों के साथ घनिष्ठ सम्बंध है। जबकि अन्य विज्ञान विशिष्ट प्रकार की परिघटनाओं का ही वर्णन करते हैं, भूगोल विविध प्रकार की उन परिघटनाओं का भी अध्ययन करता है, जिनका अध्ययन अन्य विज्ञानों में भी शामिल होता है। इस प्रकार भूगोल ने स्वयं को अन्तर्सम्बंधित व्यवहारों के संश्लेषित अध्ययन के रूप में स्थापित किया है। चित्र 1.2 अन्तर्सम्बंधित विज्ञान के बारे में एक विचार देता है।

भूगोल स्थानों का विज्ञान है। भूगोल प्राकृतिक व सामाजिक दोनों ही विज्ञान है, जो कि मानव व पर्यावरण दोनों का ही अध्ययन करता है। यह भौतिक व सांस्कृतिक विश्व को जोड़ता है। भौतिक भूगोल पृथ्वी की व्यवस्था से उत्पन्न प्राकृतिक पर्यावरण का अध्ययन करता है। मानव भूगोल राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और जनांकिकीय प्रक्रियाओं से सम्बंधित है। यह संसाधनों के विविध प्रयोगों से भी सम्बंधित है।

प्रारंभिक भूगोल सिर्फ स्थानों का वर्णन करता था। हालाँकि यह आज भी भूगोल के अध्ययन में शामिल है परन्तु पिछले कुछ वर्षों में इसके प्रतिरूपों के वर्णन में परिवर्तन हुआ है।

[redacted]नाओं का वर्णन सामान्यतः दो उपागमों के आधार पर किया जाता है जैसे (i) प्रादेशिक और (ii) क्रमबद्ध। प्रादेशिक उपागम प्रदेशों के निर्माण व विशेषताओं की व्याख्या करता है। यह इस बात का वर्णन करने का प्रयास करता है कि कोई क्षेत्र कैसे और क्यों एक दूसरे से अलग है। प्रदेश भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, जनांकिकीय आदि हो सकता है।

क्रमबद्ध उपागम परिघटनाओं तथा सामान्य भौगोलिक महत्वों के द्वारा संचालित है। प्रत्येक परिघटना का अध्ययन क्षेत्रीय विभिन्नताओं व दूसरे के साथ उनके संबंधों के

टिप्पणी

आधार पर किया जाता है।

अब हम समझ सकते है कि प्राकृतिक व मानवीय परिघटनाओं के कारणों व प्रभावों के फलस्वरूप भौतिक व मानवीय स्थलरूपों का निर्माण होता है।

भूगोल की तीन मुख्य शाखायें हैः भौतिक, मानव और प्रादेशिक। भौतिक भूगोल विविध उपशाखाओं में विभाजित है, जिनके नाम इस प्रकार है : भूआकृतिविज्ञान, जलवायु विज्ञान, समुद्र विज्ञान, मृदा और जैव भूगोल। मानव भूगोल भी विविध उपशाखाओं में विभाजित है, जैसे सांस्कृतिक, जनसंख्या, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक। प्रादेशिक भूगोल भी अन्य शाखाओं में विभाजित है जैसे वृहत्, [redacted] एक दूसरे से अन्तर्सम्बंधित है।

1. निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दीजिए:
   (i) भूगोल शब्द को परिभाषित कीजिए।
   (ii) भूगोल को सभी विज्ञानों की माता क्यों कहा जाता है?
   (iii) भूगोल की दो मुख्य अध्ययन विधियाँ कौन सी है?
   (iv) भूगोल के विकास की चार अवस्थाएँ क्या है?
   (v) भौतिक व मानव भूगोल को परिभाषित कीजिए।
2. निम्नलिखित में अंतर स्थापित कीजिए
   (i) क्रमबद्ध और प्रादेशिक भूगोल
   (ii) भौतिक भूगोल और जैव भूगोल
   (iii) जनसंख्या और आर्थिक भूगोल
3. मानव भूगोल भूगोल का एक महत्वपूर्ण अंग क्यों है? उपयुक्त उदाहरणों के साथ व्याख्या कीजिए।
4. भौगोलिक अध्ययनों की तकनीकों का विश्लेषण कीजिए।

1.1

1. भूगोल मुख्यतः सभी भौतिक और मानवीय परिघटनाओं के अन्तर्सम्बंधों और इन अन्तर्सम्बधों के फलस्वरूप बनने वाले स्थलरूपों का अध्ययन है।
2. जिस पर्यावरण में हम रहते हैं, उसकी निरन्तर अन्तर्क्रियाओं और हमारे प्रयोग के तरीकों के कारण धरातल परिवर्तित हो रहा है।
3. (i) गणितीय प्रवृत्ति
   (ii) यात्रा व क्षेत्रीय कार्यों के द्वारा भौगोलिक सूचना

1.2

1. (i) भौतिक भूगोल, (ii) जैव भूगोल, (iii) मानव भूगोल और (iv) भौगोलिक विधि व तकनीक
2. (i) प्रादेशिक अध्ययन (ii) प्रादेशिक विश्लेषण

टिप्पणी

2

भूगर्भ और उसके पदार्थ

संभवतः पृथ्वी ही पूरे ब्रह्मांड का एक ऐसा ज्ञात ग्रह है जिस पर विकसित जीवन पाया जाता है। अन्य आकाशीय पिण्डों की भाँति पृथ्वी की आकृति भी गोलाकार है। आप यह भी जानते हैं कि स्रोतों से गर्म जल और ज्वालामुखियों से अत्यन्त गर्म लावा पृथ्वी के भीतरी भागों से निकलकर धरातल पर पहुँचता है। इससे स्पष्ट होता है कि धरातल के नीचे तापमान बहुत ऊँचा है। संसार में खनन कार्य 5 किलोमीटर से भी कम गहराई तक ही सीमित है। जैसा कि हम जानते हैं, स्थलाकृतियों का स्वरूप सदैव एक जैसा नहीं रहता। उनका रूप लगातार बदलता रहता है। बाह्य शक्तियों के एक समूह में वे शक्तियाँ सम्मलित हैं जो शैलों को कमजोर कर देती हैं, विखंडित कर देती हैं। दूसरे प्रकार की शक्तियाँ टूटी–फूटी शैलों को ऊँचे भू भागों से हटाकर नीचे के भू भागों में जमा करती रहती हैं। ये दोनों प्रक्रिया ही शैलों की टूट फूट और नई स्थलाकृतियों के निर्माण के लिए जिम्मेदार हैं। हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण मृदा का निर्माण भी एक सीमा तक इन्हीं प्रक्रियाओं द्वारा होता है। इस पाठ में हम पृथ्वी के भूगर्भ और उसके ऊपरी भाग–भूपर्पटी के पदार्थों का अध्ययन करेंगे। हम अपक्षय और उसके प्रकार, तल संतुलन की प्रक्रिया और मृदा के निर्माण तथा उसके महत्व के विषय में भी अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- पृथ्वी के आन्तरिक भाग या भूगर्भ के संबंध में प्रत्यक्ष प्रेक्षण करने की सीमाओं को समझा सकेंगे;
- भूगर्भ की विभिन्न परतों की तुलना उनकी मोटाई, तापमान, घनत्व और दबाव के संदर्भ में कर सकेंगे;
- शैल और खनिजों में अन्तर कर सकेंगे;

- रचना के आधार पर शैलों का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- शैलों का आर्थिक महत्त्व बता सकेंगे;
- अपक्षय शब्द की व्याख्या की व्याख्या कर सकेंगे और उपयुक्त उदाहरणों द्वारा उसके प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे;
- धरातल के स्वरूप को बदलने वाली तलसंतुलन की विभिन्न प्रक्रियाओं की व्याख्या कर सकेंगे;
- निम्नीकरण और अधिवृद्धि में अन्तर कर सकेंगे;
- मृदा निर्माण और अपक्षय के बीच सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे;
- मृदा निर्माण में सहायक विभिन्न कारकों की व्याख्या कर सकेंगे।

2.1 पृथ्वी का आन्तरिक भाग या भूगर्भ

पृथ्वी के आन्तरिक भाग को प्रत्यक्ष रूप से देखना सम्भव नहीं है; क्योंकि यह बहुत बड़ा गोला है और इसके भूगर्भीय पदार्थों की बनावट गहराई बढ़ने के साथ बदलती जाती है। मनुष्य ने खनन् एवम् वेधन क्रियाओं द्वारा इसके कुछ ही किलोमीटर तक के आन्तरिक भाग को प्रत्यक्ष रूप से देखा है। गहराई के साथ तापमान में तेजी से वृद्धि के कारण अधिक गहराइयों तक खनन और वेधन कार्य करना संभव नहीं है। भूगर्भ में इतना अधिक ऊँचा तापमान है कि वह वेधन में प्रयोग किए जाने वाले किसी भी प्रकार के यंत्र को पिघला सकता है। अतः वेधन कार्य कम गहराइयों तक ही सीमित है। इसलिए पृथ्वी के गर्भ के विषय में प्रत्यक्ष जानकारी के मिलने में कई कठिनाइयाँ आती हैं। पृथ्वी के विशाल आकार और गइराई के साथ बढ़ते तापमान ने भूगर्भ की प्रत्यक्ष जानकारी की सीमाएँ निश्चित कर दी हैं।

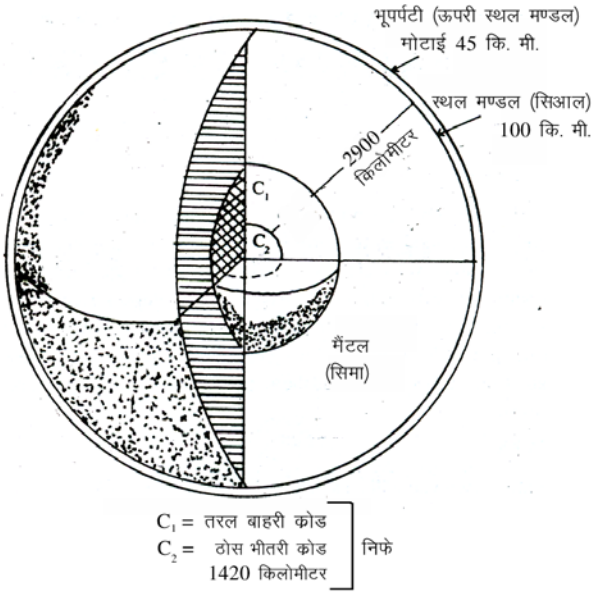

चित्र 2.1 पृथ्वी के आन्तरिक भागों की संकेन्द्रीय परतें

टिप्पणी

2.2 भूगर्भ की संरचना

पृथ्वी की आन्तरिक परतों का वर्गीकरण और उनकी मोटाइयों को चित्र संख्या 2.1 में दर्शाया गया है। पृथ्वी की सबसे अधिक गहराई वाली परत को **क्रोड** कहते हैं। यह सबसे अधिक घनत्व वाली परत है। इसका घनत्व 11.0 से भी अधिक है। यह लोहा और निकिल धातुओं से बनी है। इसीलिये क्रोड़ को **निफे** (निकिल+फेरम, लोहा) कहते हैं। क्रोड को पुनः दो परतों में बाँट सकते हैं। इसकी भीतरी परत ठोस है जिसे चित्र सी2 से दिखाया गया है। दूसरी परत अर्द्ध तरल है जिसे चित्र सी1 से दिखाया गया है। जो परत क्रोड को घेरे हुए है, उसे **मैंटल** कहते हैं। यह परत मुख्यतः सिलीका और मैगनीशियम से बनी है। इसलिए इस परत को **सीमा** (सिलीका+मैगनीशियम) भी कहते हैं। इसका घनत्व 3.1 से 5.1 तक है। मैंटल पृथ्वी की सबसे ऊपरी परत से घिरा है। इसे **स्थलमण्डल** कहते हैं, जिसका घनत्व 2.75 से 2.90 है। स्थलमण्डल के प्रमुख निर्माणकारी तत्व सिलीका (सि) एल्यूमीनियम (एल) हैं। इसलिए इस परत की **स्याल** (सिलीका+एल्यूमीनियम) भी कहते हैं। स्थलमण्डल के ऊपरी भाग को **भूपर्पटी** कहते हैं।

- पृथ्वी के आन्तरिक भाग की तीन प्रमुख संकेन्द्रीय परते हैं – क्रोड, मैंटल और स्थलमंडल।
- क्रोड सबसे आन्तरिक परत है। यह पृथ्वी की सबसे अधिक घनत्व वाली परत है। इसका निर्माण निकिल और लौह तत्वों से हुआ है।
- क्रोड और स्थलमण्डल के बीच की परत मैंटल है। इसके प्रमुख निर्माणकारी तत्व सिलीका और मैगनीशियम हैं।
- स्थलमण्डल पृथ्वी की सबसे ऊपरी परत है, जिसमें सिलीका और एल्यूमिनियम तत्वों की अधिकता है।

पाठगत प्रश्न 2.1

1. पृथ्वी के भूगर्भ की प्रत्यक्ष जानकारी में कौन सा कारक प्रमुख रूप से बाधक है?

   _____

2. भूगर्भ की तीन परतों के नाम बताइए –

   (क) _____ (ख) _____ (ग)_____

3. पृथ्वी की सबसे आन्तरिक परत का नाम बताइये।

   _____

4. क्रोड का घनत्व कितना है?

   _____

टिप्पणी

5. भूपर्पटी पृथ्वी की किस परत में शामिल है?

_____

6. पृथ्वी की सबसे पतली परत कौन–सी है?

_____

2.3 भूगर्भ का तापमान, दबाव तथा घनत्व

(i) तापमान : गहरी खानों और गहरे कूपों से जानकारी मिलती है कि पृथ्वी के भीतर गहराई बढ़ने के साथ तापमान बढ़ता है। यह बात ज्वालामुखी के उद्‌गारों में पृथ्वी के अन्दर से निकले अत्यन्त गर्म लावा से भी सिद्ध होती है कि भूगर्भ की ओर तापमान बढ़ता जाता है। विभिन्न प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि भूगर्भ में ध्धरातल से केन्द्र की ओर तापमान बढ़ने की दर एक समान नहीं है। कहीं पर यह तेज है और कहीं पर धीमी। प्रारम्भ में तापमान बढ़ने की औसत दर प्रत्येक 32 मीटर की गइराई पर 1^0 सेल्सियस है। तापमान की इस स्थिर वृद्धि के आधार पर 10 किलोमीटर की गहराई में तापमान धरातल की अपेक्षा 300^0 से. अधिक होना चाहिये और 40 किलोमीटर की गहराई में इसे 1200^0 से. होना चाहिये। तापमान की इस वृद्धि दर के अनुसार भूगर्भ के सभी पदार्थ पिघली हुई अवस्था में होने चाहिये। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। चट्‌टानें जितनी अधिक गहराई में होंगी उनके पिघलने का तापमान–बिन्दु उतना ही ऊँचा होगा। इसका कारण यह है कि भूगर्भ में नीचे दबी शैलों पर ऊपर की शैलों का इतना अधिक दाब होता है जिससे उनके पिघलने का तापमान–बिन्दु धरातल की तुलना में बहुत अधिक हो जाता है। उदाहरण के लिये बैसाल्टी लावा शैल धरातल पर 1250^0 से. पर पिघलती है परन्तु वही शैल भूगर्भ में 32 किलोमीटर की गहराई पर 1400^0 से. तापमान पर पिघलेगी। भूकम्प की तरंगों के व्यवहार से भी यह बात सिद्ध होती है। उनसे इस बात की भी पुष्टि होती है कि भूगर्भ में तापमान के बदलने के साथ पदार्थों की संरचना में भी परिवर्तन आता है। भूगर्भ के ऊपरी 100 किलोमीटर में तापमान के बढ़ने की दर 12^0 से. प्रति किलोमीटर है, अगले 300 किलोमीटर में यह वृद्धि–दर 20^0 से. प्रति किलोमीटर है और इसके बाद यह वृद्धि–दर केवल 10^0 से. प्रति किलोमीटर रह जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि धरातल के नीचे तापमान के बढ़ने की दर पृथ्वी के केन्द्र की ओर घटती जाती है। इस गणना के अनुसार पृथ्वी के केन्द्र का तापमान लगभग 4000^0 से 5000^0 से. के बीच है। भूगर्भ में इतना ऊँचा तापमान उच्च दाब के फलस्वरूप हुई रासायनिक प्रक्रियाओं और रेडियोधर्मी तत्वों के विखंडन के कारण ही संभव है।

(ii) दबाव – भूगर्भ में ऊपरी परतों के बहुत अधिक भार के कारण पृथ्वी के सतह से केन्द्र की ओर जाने पर दबाव भी निरन्तर बढ़ता जाता है। पृथ्वी के केन्द्र पर अत्यधिक दबाव है। यह दबाव समुद्र तल पर वायुमंडल के दाब से 30–40 लाख

टिप्पणी

गुना अधिक है। केन्द्र पर उच्च तापमान होने के कारण यहां पाये जाने वाले पदार्थों को द्रव रूप में होना स्वाभाविक है, परन्तु इस ऊपरी भारी दबाव के कारण यह द्रव रूप ठोस का आचरण करता है। सम्भवतः इसका स्वरूप प्लास्टिक नुमा है।

(iii) घनत्व – पृथ्वी के केन्द्र की ओर निरन्तर दबाव के बढ़ने और भारी पदार्थों के होने के कारण उसकी परतों का घनत्व भी बढ़ता जाता है। अतः सबसे गहरे भागों में अत्यधिक घनत्व वाले पदार्थों का होना स्वाभाविक है। इस बारे में अनुच्छेद 2.2 में पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

पाठगत प्रश्न 2.2

1. पृथ्वी के केन्द्र का तापमान कितना है?

   _____

2. पृथ्वी के केन्द्र का दाब कितना है?

   _____

3. पृथ्वी के केन्द्र की ओर जाने पर घनत्व क्यों बढ़ता जाता है?

   _____

2.4 भूपर्पटी के पदार्थ

स्थलमंडल का सबसे ऊपर भाग भूपर्पटी कहलाता है। यह पृथ्वी का सबसे महत्वपूर्ण भाग है; क्योंकि इसकी ऊपरी सतह पर मानव रहते हैं। जिन पदार्थों से भूपर्पटी बनी है, उन्हें शैल कहते हैं। शैलें विभिन्न प्रकार की होती हैं। शैलें ग्रेनाइट की तरह कठोर, चीका मिट्टी की तरह मुलायम अथवा बजरी के समान बिखरी होती है। शैलें विभिन्न रंग, भार और कठोरता लिए होती है। शैलें खनिजों से बनी हैं। वे एक या एक से अधिक खनिजों का मिश्रण हैं। दूसरी ओर खनिज एक या एक से अधिक तत्वों के निश्चित अनुपात में मिलने से बने हैं। खनिजों में एक निश्चित रासायनिक संगठन होता है। भूपर्पटी 2000 से भी अधिक खनिजों से बनी है, परन्तु इनमें से केवल 6 खनिजों की अधिकता है। इन्हीं का पृथ्वी की ऊपरी परत के निर्माण में विशेष योग है। इन 6 खनिजों के नाम – फेल्सपार, क्वार्ट्ज, पाइराक्सीन, एम्फीबोल, अभ्रक और ओलीबीन हैं।

ग्रेनाइट एक कठोर शैल है। इसके निर्माणकारी खनिज क्वार्टज, फेल्सपार और अभ्रक हैं। इन खनिजों के अनुपात में भिन्नता होने से ग्रेनाइट के रंग और उसकी कठोरता में अन्तर आ जाता है। जिन खनिजों में धात्विक अंश होता है, उन्हें **धात्विक खनिज**

टिप्पणी

कहते हैं। हैमेटाइट एक प्रमुख लौह–अयस्क है। यह धात्विक खनिज है। अयस्क धात्विक खनिज होते हैं, जिनसे धातुओं का निकालना लाभकारी होता है। शैलों का निर्माण खनिजों से हुआ है। इनका मानव जीवन में बहुत अधिक महत्व है।

2.5 शैलों के प्रकार

शैलें अपने गुण, कणों के आकार और उनके बनने की प्रक्रिया के आधार पर विभिन्न प्रकार की होती हैं। निर्माण क्रिया की दृष्टि से शैलों के तीन वर्ग हैं :– (क) आग्नेय, (ख) अवसादी और (ग) रूपान्तरित।

(क) आग्नेय शैल

''इंगनियस'' अंग्रेजी भाषा का शब्द है। यह लैटिन भाषा के ''इंग्निस'' शब्द से बना है। ''इंग्निस'' शब्द का अर्थ अग्नि से है। इससे इन शैलों की उत्पत्ति स्पष्ट होती है अर्थात वह शैल जिनकी उत्पत्ति अग्नि से हुई है, उन्हें आग्नेय शैल कहते हैं। आग्नेय शैलें अति तप्त चट्टानी तरल पदार्थ, जिसे मैग्मा कहते हैं, के ठण्डे होकर जमने से बनती हैं। भूगर्भ में मैग्मा के बनने की निश्चित गहराई की हमें जानकारी नहीं है। यह सम्भवतः विभिन्न गहराइयों पर बनता है जो 40 किलोमीटर से अधिक नहीं होती। शैलों के पिघलने से आयतन में वृद्धि होती हैं, जिसके कारण भूपर्पटी टूटती है या उसमें दरारें पड़ती हैं। इन खुले छिद्रों या मुखों के सहारे ऊपर से पड़ने वाले दबाव में कमी आती है। इससे मैग्मा बाहर निकलता है। अगर ऐसा न हो तो ऊपर से पड़ने वाला अत्यधिक दाब मैग्मा को बाहर जाने नहीं देगा।

जब मैग्मा धरातल पर निकलता है तो उसे लावा कहते हैं। पिघला हुआ मैग्मा, भूगर्भ में या पृथ्वी की सतह पर जब ठंडा होकर ठोस रूप धारण करता है तो आग्नेय शैलों का निर्माण होता है। पृथ्वी की प्रारम्भिक भूपर्पटी आग्नेय शैलों से बनी है, अतः अन्य सभी शैलों का निर्माण आग्नेय शैलों से ही हुआ है। इसी कारण आग्नेय शैलों को **जनक** या मूल शैल भी कहते हैं। भूगर्भ के सबसे ऊपरी 16 किलोमीटर की मोटाई में आग्नेय शैलों का भाग लगभग 95 प्रतिशत है। आग्नेय शैलें सामान्यतया कठोर, भारी, विशालकाय और रबेदार होती हैं। निर्माण–स्थल के आधार पर आग्नेय शैलों को दो वर्गों में बाँटा गया है। बाह्य या बहिर्भेदी (ज्वालामुखी) और (ii) आन्तरिक या अन्तर्भेदी आग्नेय शैल।

(i) **बाह्य आग्नेय शैलें** धरातल पर लावा के ठण्डा होकर जमने से बनी है। इन शैलों की रचना में लावा बहुत जल्दी ठण्डा हो जाता है। लावा के जल्दी ठण्डा होने से इनमें छोटे आकार के रवे बनते हैं। इन्हें ज्वालामुखी शैल भी कहते हैं। गेब्रो और बैसाल्ट बाह्य आग्नेय शैलों के सामान्य उदाहरण हैं। ये शैलें ज्वालामुखी क्षेत्रों में पाई जाती हैं। भारत के दक्कन पठार की ''रेगुर'' अथवा काली मिट्टी लावा से बनी है।

(ii) **आन्तरिक आग्नेय शैलों** की रचना मैग्मा के धरातल के नीचे जमने से होती है। धरातल के नीचे मैग्मा धीरे–धीरे ठण्डा होता है। अतः इन शैलों में बड़ आकार के

टिप्पणी

रवे बनते हैं। अधिक गहराई में पाई जाने वाली आन्तरिक शैलों को **पातालीय** आग्नेय शैल कहते हैं। ग्रेनाइट और डोलाराइट आन्तरिक आग्नेय शैलों के सामान्य उदाहरण हैं। दक्कन पठार और हिमालय क्षेत्र में ग्रेनाइट शैलों के विस्तृत भूखण्ड देखे जा सकते हैं। आन्तरिक आग्नेय शैलों की आकृति कई प्रकार की होती है।

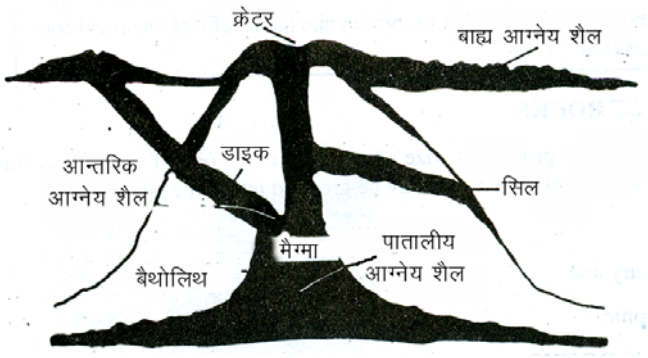

चित्र 2.2 आग्नेय शैल

चित्र 2.2 से स्पष्ट होता है कि भूपर्पटी में मैग्मा के ठण्डा होने पर विभिन्न आकृतियों में आग्नेय शैल बनती है। ये आकृतियाँ शैलों में प्राप्त स्थान तथा मैग्मा के दवाब पर निर्भर करती है। बैथोलिथ, सिल और डाइक, इसके उदाहरण हैं। बैथोलिथ बड़े आन्तरिक आग्नेय चट्टानी पिंड हैं। इनका आकार कुछ सौ किलोमीटर से हजारों किलोमीटर तक होता है। यह विश्व के बड़े पर्वत–समूहों के स्थूल क्रोड हैं। लाखों वर्षों के अपरदन के कारण कभी–कभी उनकी असमान गुम्बदनुमा छत धरातल पर दिखाई देने लगती है।

पूर्ववर्ती शैलों के बीच मैग्मा के समानान्तर तहों के रूप में जमने के स्वरूप को सिल कहते हैं। डाइक शैलों के बीच मैग्मा का लम्बवत जमाव है। इनकी लम्बाई कुछ एक मीटर से लेकर कई किलोमीटर तथा चौड़ाई कुछ एक सेन्टीमीटर से लेकर सैंकड़ों मीटर तक हो सकती है।

रासायनिक गुणों के आधार पर आग्नेय शैलों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है – अम्लीय और क्षारीय शैल। ये क्रमशः अम्लीय और क्षारीय लावा के जमने से बनती है।

अम्लीय आग्नेय शैलों में सिलीका की मात्रा 65 प्रतिशत होती है। इनका रंग बहुत हल्का होता है। ये कठोर और मजबूत शैल है। ग्रेनाइट इसी प्रकार की शैल का उदाहरण है।

क्षारीय आग्नेय शैलों में सिलीका की मात्रा अम्लीय शैलों से कम पाई जाती है। इनमें सिलीका की मात्रा 55 प्रतिशत से कम होती है। ऐसी शैलों में लोहा और मैगनीशियम की अधिकता है। इनका रंग गहरा और काला होता है। इन पर ऋतु अपक्षय का बहुत प्रभाव पड़ता है। गैब्रो, बैसाल्ट तथा डोलेराइट क्षारीय शैलों के उदाहरण हैं।

- आग्नेय शैल तप्त द्रवित पदार्थ मैग्मा अथवा लावा के ठण्डा होकर जमने से बनी है।
- बाह्य आग्नेय शैल धरातल पर लावा के ठण्डा होकर जमने से बनी है। बैसाल्ट और गैब्रो इसके उदाहरण हैं।
- आन्तरिक आग्नेय शैल धरातल के नीचे मैग्मा के जमने से बनी है। ग्रेनाइट इसका उदाहरण है।

पाठगत प्रश्न 2.3

1. खनिज की परिभाषा लिखिये।

   _____

2. भूपर्पटी में पाये जाने वाले प्रमुख तीन खनिजों के नाम बताइए।

   (क) _____ (ख) _____ (ग) _____

3. निम्नलिखित प्रत्येक के लिए एक–एक शब्द दीजिए:

   (1) अधिक गहराई में प्राप्त आन्तरिक आग्नेय शैल।

   _____

   (2) पृथ्वी के धरातल पर पहुँचने वाला गर्म तप्त तरल पदार्थ।

   _____

4. डाइक और सिल की रचना कैसे होती है?

   (1) डाइकः _____

   (2) सिलः _____

5. सही उत्तर पर ठीक (√) का निशान लगाइए:–

   (i) आग्नेय शैलों की रचना–

   (क) शीतलन से (ख) तापन से (ग) शीतलन और तापन में से किसी से भी नहीं।

   (ii) निम्नलिखित में से कौन सी आन्तरिक आग्नेय शैल का उदाहरण है?

   (क) ग्रेनाइट (ख) बैसाल्ट (ग) गैब्रो

   (iii) प्राथमिक शैलों का परिणाम है –

   (क) अवसादीकरण (ख) ठोसीकरण (ग) रूपान्तरण (घ) सम्पीड़न

टिप्पणी

(ख) अवसादी शैलें

इन शैलों की रचना अवसादों के निरन्तर जमाव से होती है। ये अवसाद किसी भी पूर्ववर्ती शैल – आग्नेय, रूपान्तरित या अवसादी शैलों का अपरदित मलवा हो सकता है। अवसादों का जमाव परतों के रूप में होता है। इसलिए इन शैलों को परतदार शैल भी कहते हैं। इन शैलों की मोटाई कुछ मि. मी. से लेकर कई मीटर तक होती है। इन शैलों की परतों के बीच में जीवाश्म भी मिलते हैं। जीवाश्म प्रागैतिहासिक काल के पशु और पौधों के अवशेष हैं। ये अवशेष अवसादी शैलों की परतों में दबकर भार पड़ने के कारण ठोस रूप धारण कर लेते हैं। धरातल पर अधिकतर अवसादी शैलों का विस्तार मिलता है, परन्तु ये शैलें कम गइराई तक ही मिलती हैं।

शैलों से पहले अनेकों कण टूटते हैं और फिर उन टूटे कणों को परिवहन के कारक बहता–जल, समुद्री लहरें, हिमानी, पवन आदि एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं। जब परिवहन के कारकों में इन कणों को ढोने की शक्ति में कमी आती है तो वे समुद्र, झील या नदी के शांत जल में अथवा अन्यत्र उपयुक्त स्थानों पर जमा हो जाते हैं। ढोकर लाये गये शैलों के कणों के किसी स्थान पर जमा होने की प्रक्रिया को **अवसादन** या **निक्षेपण** कहते हैं। अवसादी शैलों का नाम अवसाद ढोने वाले कारकों और उनके जमाव स्थल के संदर्भ में रखा जाता है। जैसे नदी–नदीकृत शैल, झील–सरोवरी शैल, समुद्र–समुद्रकृत शैल, मरुस्थल–पवनकृत शैल, हिमानी–हिमानीकृत शैल, आदि।

अवसाद प्रायः बारीक कणों से निर्मित मुलायम परत होती हैं। प्रारम्भ में ये बालू मिट्टी के रूप में होते हैं। कालान्तर में यही पदार्थ भारी दवाब के कारण संयुक्त रूप धारण कर ठोस बन जाते हैं और अवसादी शैलों का निर्माण करते हैं। प्रारम्भ में अवसादी शैलों का जमाव क्षैतिज रूप में होता है। बाद में चलकर भूपर्पटी में हुई हलचलों के कारण झुकाव पैदा हो जाते हैं। बलुआ पत्थर, शैल, चूना पत्थर और डोलोमाइट अवसादी शैलें हैं।

परिवहन के विभिन्न कारक जैसे बहता जल, पवन या हिमानी अवसादों को अलग–अलग आकारों में छाँटते रहते हैं। विभिन्न आकार के अवसाद अनुकूल परिस्थितियाँ पाकर एक दूसरे से जुड़ जाते हैं। कांगलोमरेट इस प्रकार की अवसादी शैल का उदाहरण है। इस प्रकार की प्रक्रिया से बनी शैलों को भौतिक अवसादी शैल कहते हैं। पेड़–पौधों अथवा जानवरों से प्राप्त जैवीय पदार्थों के एकीकरण से बनी अवसादी शैलें जैविक मूल की शैल होती है। कोयला और चूना पत्थर जैविक मूल की अवसादी शैलें हैं।

अवसादों की रचना रासायनिक प्रक्रिया से भी संभव है। जल अपनी घुलन क्रिया के द्वारा शैलों से बहुत सारे रासायनिक तत्व ग्रहण कर अवसाद के रूप में जमा करता रहता है। यही अवसाद कालान्तर में शैल बन जाता हैं। सेंधा नमक, जिप्सम, शोरा आदि सब इसी प्रकार की शैलें है।

टिप्पणी

संसार के विशालकाय बलित पर्वतों जैसे हिमालय, एण्डीज आदि की रचना शैलों से हुई है। संसार के सभी जलोढ़ निक्षेप भी अवसादों के एकीकृत रूप हैं। अतः सभी नदी द्रोणियों विशेषकर उनके मैदान तथा डेल्टा अवसादों के जमाव से बने हैं। इनमें सिंधु–गंगा का मैदान और गंगा–ब्रह्मपुत्र का डेल्टा सबसे उत्तम उदाहरण है।

- अवसादी शैलों की रचना अवसादों के एक के ऊपर एक जमा होने के परिणाम स्वरूप होती है। इन शैलों में परतें होती हैं। अतः इन्हें परतदार भी कहते हैं।
- जीवाश्म प्रागैतिहासिक काल के पेड़–पौधों अथवा पशुओं के अवशेष हैं, जो अवसादी शैलों की परतों के बीच में दबकर ठोस रूप धारण कर चुके हैं।

(ग) रूपांतरित या कायांतरित शैल

पर्वतीय प्रदेशों में अधिकांश शैलों में परिवर्तन के प्रमाण मिलते हैं। ये सभी शैलें कालान्तर में रूपान्तरित हो जाती हैं। अवसादी अथवा आग्नेय शैलों पर अत्याधिक ताप से या दाब पड़ने के कारण रूपान्तरित शैलें बनती हैं। उच्च ताप और उच्च दाब, पूर्ववर्ती शैलों के रंग, कठोरता, गठन तथा खनिज संघटन में परिवर्तन कर देते हैं। जहाँ शैलें गर्म–द्रवित मैग्मा के संपर्क में आती हैं, वहाँ उनकी रचना में परिवर्तन आ जाता है। इस परिवर्तन की प्रक्रिया को रूपान्तरण और कायांतरण कहते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा बनी शैल को रूपांतरित शैल कहते हैं।

भूपर्पटी में मौजूद अत्यधिक ऊष्मा के प्रभाव से अवसादी और आग्नेय शैलों के खनिजों में जब रवों का पुनर्निर्माण अथवा रूप में परिवर्तन होता है तो उसे तापीय रूपान्तरण अथवा संस्पर्शीय रूपान्तरण कहते हैं। जब द्रवित मैग्मा अथवा लावा शैलों के संपर्क में आता है तो शैलों के मूल रूप में परिवर्तन ला देता हैं। इसी प्रकार भारी दबाव के कारण शैलों में परिवर्तन होता है। दबाव के कारण हुए परिवर्तन को गतिक या प्रादेशिक रूपान्तरण कहते हैं। स्लेट, नीस–शीस्ट, संगमरमर और हीरा रूपान्तरित शैलों के उदाहरण हैं। रूपान्तरित शैल अपनी मूल शैलों से अधिक कठोर और मजबूत होती हैं। तालिका 2.1 में रूपान्तरित शैल और उनकी मूल शैलों के उदाहरण दिए हुए हैं। इस तालिका का ध्यान से अध्ययन करिए।

तालिका 2.1 मूलशैल तथा इसकी रूपांतरित शैल

शैल का नाम	शैल के प्रकार	बनने वाली रूपान्तरित शैल
चूना पत्थर	अवसादी शैल	संगमरमर
डोलोमाइट	अवसादी शैल	संगमरमर
बलुआ पत्थर	अवसादी शैल	क्वार्टजाइट
शेल	अवसादी शैल	स्लेट

टिप्पणी

स्लेट	रूपान्तरित शैल	फाइलिट
कोयला	अवसादी शैल	हीरा
ग्रेनाइट	आग्नेय शैल	नीस
फाइलिट	रूपान्तरित शैल	शिस्ट

संसार में विभिन्न प्रकार की रूपान्तरित शैलें पाई जाती हैं। भारत में संगमरमर राजस्थान, बिहार और मध्य प्रदेश में मिलता है। हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा और कुमायूँ क्षेत्र में विभिन्न रंगों की स्लेट मिलती है।

- रूपान्तरित शैल की रचना अवसादी, आग्नेय या पूर्ववर्ती रूपान्तरित शैलों पर भारी ताप और दाब के प्रभाव के कारण होती है।
- तापीय रूपान्तरण वह प्रक्रिया है, जिसमें भारी ताप के कारण शैलों में परिवर्तन होता है।
- गतिक रूपान्तरण शैलों का वह बदला स्वरूप है जो पृथ्वी की हलचलों के समय भारी दवाब के कारण होता है।

2.6 शैलों का आर्थिक महत्व

मनुष्य पृथ्वी तल पर विविध क्रियाकलाप लम्बे समय से कर रहा है। समय और तकनीकी विकास के साथ वह शैलों और खनिजों का विविध उपयोग करता रहा है। वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान जैसे–जैसे बढ़ता गया वैसे–वैसे ही मनुष्य की सुख–सुविधाओं के लिए शैलों और खनिजों की उपयोगिता बढ़ती गई। शैलों के महत्व के संबंध में संक्षिप्त जानकारी नीचे दी गई है।

(1) **मृदा** शैलों से प्राप्त होती है। मृदा से मानव के लिये भोजन मिलता है, इसके साथ ही विभिन्न कृषि उत्पादों से उद्योग–धंधों के लिए कच्चा माल भी प्राप्त होता है।

(2) **भवन निर्माणकारी सामग्री** शैलों से प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से प्राप्त होती है। शैलें ही सभी प्रकार के भवनों की सामग्री का एकमात्र स्रोत है। ग्रेनाइट, नीस, बलुआ पत्थर, संगमरमर और स्लेट आदि का मकान बनाने में भारी मात्रा में उपयोग होता है। ताजमहल सफेद संगमरमर से बना है। दिल्ली और आगरा का लाल किला लाल बलुआ पत्थर से बने हैं। भारत और विदेशों में भी स्लेट का उपयोग छतों के निर्माण में किया जाता है।

(3) **खनिजों के स्रोत** खनिज आधुनिक सभ्यता की आधारशिला हैं। धात्विक खनिजों में मूल्यवान सोना, प्लॉटीनम, चांदी, तांबा से लेकर एल्यूमीनियम और लोहा मिलता है। ये धात्विक खनिज विभिन्न प्रकार की शैलों में पाये जाते हैं।

(4) **कच्चामाल** कई शैलों और खनिजों का उपयोग विभिन्न प्रकार के उद्योगों के

टिप्पणी

लिए कच्चे माल के रूप में होता है। सीमेंट उद्योग तथा चूना भट्टियों में कई प्रकार की शैलों और खनिजों का उपयोग तैयार माल प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है। ग्रेफाइट का उपयोग सुरमा और पेंसिल निर्माण उद्योग में किया जाता है।

(5) **मूल्यवान पत्थर** विभिन्न प्रकार की रूपान्तरित अथवा आग्नेय शैलों से प्राप्त होते हैं। हीरा बहुत ही मूल्यवान पत्थर है। उसका उपयोग जवाहरात बनाने में होता है। ये एक रूपान्तरित शैल है। इसी प्रकार दूसरे मूल्यवान पत्थर पन्ना, नीलम आदि भी विभिन्न प्रकार के शैलों से प्राप्त होते हैं।

(6) **ईंधन** कोयला, पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस महत्वपूर्ण खनिज ईंधन हैं। परमाणु ऊर्जा भी ईंधन के रूप में हमें विभिन्न प्रकार की शैलों से मिलती है।

(7) **उर्वरक** भी शैलों से प्राप्त किये जाते हैं। फास्फेट उर्वरक फास्फेराइट नामक खनिज से मिलता है। संसार के कुछ भागों में फास्फेराइट खनिज अधिक मात्रा में पाया जाता है।

- शैल और खनिज आर्थिक दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। ये सभी प्रकार की धातुओं, मूल्यवान पत्थर, उद्योगों के लिए माल और ईंधन के स्रोत हैं।

पाठगत प्रश्न 2.4

1. शैल क्या हैं?

   _____

2. शैलों का वर्गीकरण कीजिए।

   _____

3. निम्नलिखित प्रत्येक के लिए एक–एक पारिभाषिक शब्द दीजिए–

   (i) अत्यधिक दाब के कारण रूपान्तरित शैलों के बनने की प्रक्रिया

   _____

   (ii) वह शैल जिसमें परतें होती हैं।

   _____

   (iii) अवसादी और अग्नेय शैल पर ताप और दबाव के प्रभाव से बनने वाले शैल

   _____

   (iv) झील में अवसादों के जमाव से बनी अवसादी शैल

   _____

टिप्पणी

4. सही उत्तर पर ठीक (√) का निशान लगाइएः–

(i) संगमरमर है–

(क) अवसादी शैल (ख) आग्नेय शैल (ग) रूपान्तरित शैल (घ) पातालीय शैल

(ii) अवसादी शैल का उदाहरण है–

(क) ग्रेनाइट (ख) संगमरमर (ग) बलूआ पत्थर (घ) बैसाल्ट

2.7 अपक्षय क्या है?

धरातलीय शैलों का विघटन मुख्य रूप से मौसम के तत्वों के प्रभाव का ही परिणाम है। तापमान, वर्षा, पाला, कोहरा और बर्फ मौसम के प्रमुख तत्व हैं। धरातल की शैलें जैसे ही मौसम के तत्वों के संपर्क में आती हैं, वैसे ही उनका अपक्षय प्रारम्भ हो जाता है। अपक्षय एक स्थानीय प्रक्रिया है। इसमें शैलों का विघटन और अपघटन मूल स्थान पर ही होता है। विघटन तापमान में परिवर्तन और पाले के प्रभाव से होता है। इस प्रक्रिया में शैलें टुकड़ों में बिखर जाती हैं। अपघटन की प्रक्रिया में शैलों के अंदर रासायनिक परिवर्तन होते हैं। शैलों में विभिन्न प्रकार के खनिजों के कण एक दूसरे के साथ दृढ़ता से गुंधे होते हैं। लेकिन पानी में घुलकर कुछ खनिज कण अलग हो जाते हैं। कुछ खनिजों का स्वरूप बदल जाता है। प्रकृति में विघटन और अपघटन की प्रक्रियाएँ साथ–साथ चलती रहती हैं। अपक्षय पेड़ पौधों की जड़ों और कुछ जीव जन्तुओं के बिल बनाने के कारण भी होता है। हमें यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिए कि अपक्षयित पदार्थ अपने मूल स्थान पर ही पड़े रहते हैं। अपक्षय की प्रक्रिया में पदार्थों का परिवहन या स्थानांतरण शामिल नहीं होता। यह बात अलग है कि गुरुत्वाकर्षण के कारण अपक्षियत पदार्थ ऊपर से नीचे की ओर खिसक जाते हैं।

2.8 अपक्षय के प्रकार

1. भौतिक अपक्षय
2. रासायनिक अपक्षय
3. जैविक अपक्षय

भौतिक अपक्षय

जब शैलें अपने संघटन में बिना किसी रासायनिक परिवर्तन के छोटे–छोटे टुकड़ों में टूट जाती हैं तो इसे **भौतिक अपक्षय** कहते हैं। भौतिक अपक्षय अधिकतर शुष्क और ठंडी जलवायु वाले क्षेत्रों में होता है। भौतिक अपक्षय विभिन्न प्रकार के क्षेत्रों में अलग–अलग ढंग से होता है। इनके कुछ उदाहरण निम्न है :–

(क) पिंड-विच्छेदन

हम सभी जानते हैं कि गर्मी के कारण शैलें फैलती हैं और सर्दी के कारण सिकुड़ती हैं। गर्म मरुस्थलीय प्रदेशों में दिन में तापमान बहुत ऊँचा हो जाता है। इसके विपरीत रातें बहुत ठंडी होती हैं। दैनिक ताप परिसर के अधिक होने के कारण शैलें बार–बार फैलती और सिकुडती रहती हैं। इससे उनकी दरारें और जोड़ चौड़े होते जाते हैं। अन्ततः शैलें छोटे–छोटे टुकड़ों में टूट जाती हैं। इस प्रक्रिया को **पिंड विच्छेदन** कहते हैं।

चित्र 2.3 पिंड विच्छेदन

(ख) अपशल्कन

शैलें सामान्यतः ताप की कुचालक होती हैं। अधिक गर्मी के कारण शैलो की बाहरी परतें जल्दी से फैल जाती हैं। लेकिन भीतरी परतें गर्मी से लगभग अप्रभावित रहती हैं। बार-बार फैलने और सिकुड़ने से शैलों की बाहरी परतें शैल के मुख्य भाग से अलग हो जाती हैं। इस प्रक्रिया में शैलों की परतें, प्याज के छिलकों की तरह ही उतरती चली जाती हैं। इसे अपशल्कन की प्रक्रिया कहते हैं। बिहार के सिंहभूम जिले में डोलेराइट शैलों के गोलाकार पिंडों का निर्माण इसी प्रक्रिया के द्वारा हुआ है। महाबलीपुरम में ग्रेनाइट के गुंबद विशेष रूप से कृष्ण की लडडू तथा जबलपुर के पास मदनमहल की पहाड़ियों के ग्रेनाइट के गुंबद, अपशल्कन के अच्छे उदाहरण हैं।

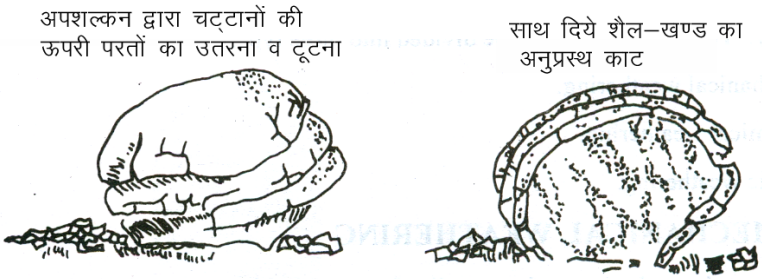

चित्र 2.4 शैल की परतों का उतरना

टिप्पणी

(ग) तुषारी अपक्षय

बहुत ठंडे पर्वतीय प्रदेशों में शैलों की दरारों और जोड़ों में भरा जल बार–बार जमता और पिघलता है। इससे शैलें टुकड़े–टुकड़े हो जाती हैं। ऐसा इसलिए होता है कि जब पानी बर्फ के रूप में जम जाता है तो उसका आयतन दस प्रतिशत बढ़ जाता है। ठंडे प्रदेशों में इस प्रक्रिया के द्वारा शैलें छोटे–छोटे टुकड़ों और कणों में बिखर जाती हैं। इसे **तुषारी अपक्षय** कहते हैं।

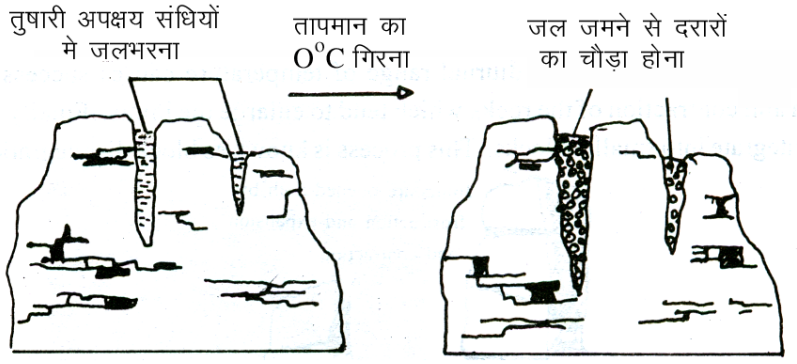

चित्र 2.5 तुषारी अपक्षय

- संघटन में रासायनिक परिवर्तन के बिना शैलों का छोटे–छोटे टुकड़ों में टूटना भौतिक अपक्षय कहलाता है।
- शैलों के जल्दी–जल्दी फैलने और सिकुड़ने से उनमें जोड़ और दरारें पड़ जाती हैं। परिणामतः वे छोटे–छोटे पिंडों में टूट जाती हैं। यह प्रक्रिया **पिंड विच्छेदन** कहलाती है।
- अपक्षय की वह प्रक्रिया जिसमें तापमान की भिन्नता के कारण शैलों की बाहरी परतें प्याज के छिलकों की तरह उतर जाती हैं, अपशल्कन कहलाती हैं।
- बहुत ठंडे प्रदेशों में दरारों और जोड़ों में भरे जल के जमने से उनका टूटना तुषारी अपक्षय कहलाता है।

पाठगत प्रश्न 2.5

1. अपक्षय के तीन प्रकारों के नाम बताइए:

   (क) _____(ख)_____(ग)_____

टिप्पणी

2. भौतिक अपक्षय किन क्षेत्रों में अधिक होता है?

_____

3. प्रत्येक कथन के लिए पारिभाषिक शब्द लिखिए।

(क) शैलों की परतों का प्याज के छिलकों की तरह उतरना

_____

(ख) शैलों की दरारों और जोड़ों में भरे जल के बारी–बारी से जमने और पिघलने से उनका चौड़ा होना और शैलों का टूटना।

_____

(ग) रासायनिक संघटन में बिना किसी परिवर्तन के शैलों का टूटना।

_____

रासायनिक अपक्षय

रासायनिक क्रिया द्वारा नए यौगिकों के बनने या नए तत्वों के निर्माण के कारण शैलों में होने वाले परिवर्तन को **रासायनिक अपक्षय** कहते हैं। जल, ऑक्सीजन और कार्बन–डाइऑक्साइड रासायनिक अपक्षय के प्रमुख कारक हैं। उच्च तापमान और अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्रों में रासायनिक अपक्षय अधिक तीव्रता से होता है।

- रासायनिक प्रक्रिया द्वारा जल और वायुमंडलीय गैसों की मदद से शैलों के अपघटन को **रासायनिक अपक्षय** कहते हैं।

रासायनिक अपक्षय में मुख्य रूप से चार प्रक्रियाएँ होती हैं।

(क) ऑक्सीकरण

इस प्रक्रिया में वायुमंडलीय आक्सीजन की शैलों पर होने वाली प्रतिक्रिया से आक्साइड के बनने को **आक्सीकरण** कहते हैं। इस प्रक्रिया का सबसे अधिक प्रभाव लौह खनिजों पर देखा जाता है। आर्द्र वायु में विद्यमान आक्सीजन शैलों के लौह कणों को सबसे अधिक प्रभावित करती है। इससे लोहे के पीले या लाल आक्साइड बन जाते हैं। इसे लोहे पर जंग लगना कहते हैं। कालान्तर में यह 'जंग' शैलों को पूरी तरह से अपघटित कर देता है।

(ख) कार्बोनेटीकरण

इस प्रक्रिया से विभिन्न प्रकार के कार्बोनेट बनते हैं। इनमें से कुछ पानी में घुलनशील होते हैं। उदाहरण के लिए जब कार्बन–डाइ–आक्साइड युक्त वर्षा का जल चूने की प्रवेश्य (भेद्य) शैलों से होकर गुजरता है, तो शैलों के जोड़ कार्बोनिक अम्ल की क्रिया

टिप्पणी

से चौड़े हो जाते हैं। धीरे–धीरे इन जोड़ों की चौड़ाई बढ़ती जाती है। और चूना पानी में घुलकर बह जाता है। शैलों के इस प्रकार के अपघटन को कार्बोनेटीकरण कहते हैं।

(ग) जलयोजन

इस प्रक्रिया से शैलों के खनिजों में जल अवशोषित हो जाता है। जल के अवशोषण से शैलों का आयतन बढ़ जाता है तथा उनके कणों की आकृति बदल जाती है। उदाहरण के लिए जलयोजन के द्वारा फेल्सपार नाम के खनिज केओलिन मृदा में बदल जाते हैं। जबलपुर के निकट विंध्याचल की पहाड़ियों पर केओलिन मृदा का निर्माण इसी प्रक्रिया द्वारा हुआ है।

(घ) घोलन

इस प्रक्रिया में कुछ खनिज पानी में घुल जाते हैं। वे पानी में घुलकर बह जाते हैं। सेंधा नमक और जिप्सम इसी प्रक्रिया द्वारा बहा लिया जाता है।

- रासायनिक अपक्षय में आक्सीकरण, कार्बोनेटीकरण, जलयोजन और घोलन की प्रक्रियाएँ शामिल हैं।

पाठगत प्रश्न 2.6

1. किन प्रदेशों में रासायनिक अपक्षय अधिक प्रभावशाली होता है?

   _____

2. किस प्रक्रिया में जिप्सम पानी में घुल जाता है?

   _____

3. रासायनिक अपक्षय की किस क्रिया के द्वारा लोहे पर 'जंग' लगता है।

   _____

4. चूने की शैलों के प्रदेशों में प्रमुख रूप से किस प्रकार की रासायनिक प्रक्रिया होती है?

   _____

जैविक अपक्षय

जैविक अपक्षय वनस्पति, जीव जन्तुओं और मनुष्यों के द्वारा होता है।

(क) वनस्पति

पेड़–पौधों के द्वारा शेलों में भौतिक और रासायनिक दोनों ही प्रकार का अपक्षय होता है। पेड़–पौधों की जड़ें शैलों के जोड़ों में धुस जाती हैं। समय के साथ जड़ें लंबी और मोटी होती जाती हैं। इस तरह शैलों के जोड़ों पर उनका दबाव निरंतर बढ़ता जाता है और अन्ततः वे टूटकर छोटे–छोटे टुकड़ों में बिखर जाती हैं।

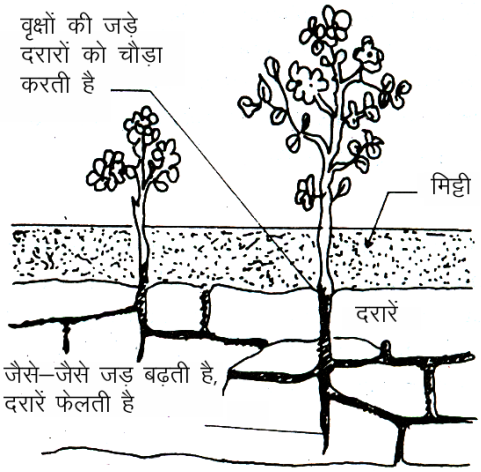

चित्र 2.6 शैलों पर वनस्पति का प्रभाव

(ख) जीवजन्तु

बिल बनाकर रहने वाले जीव जैसे, केंचुए, चूहे, खरगोश, दीमक और चीटियाँ शैलों को तोड़ते–फोड़ते हैं। विघटित शैलें आसानी से अपरदित हो जाती हैं और पवनें इन्हें उड़ाकर ले जाती हैं। जानवरों के खुरों से मिट्टी उखड़ जाती है। इससे मृदा अपरदन में तेजी आ जाती हैं। केंचुओं और दीमक का कार्य विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। वैज्ञानिकों के अनुसार एक एकड़ भूमि में डेढ़ लाख केंचुए हो सकते हैं। ये एक वर्ष में 10–15 टन शैलों को उपजाऊ मृदा में बदल कर धरातल पर ला सकते हैं।

(ग) मनुष्य

विभिन्न प्रकार की शैलों के अपक्षय में मनुष्य का बहुत बड़ा हाथ होता है। कृषि, भवन, और सड़क निर्माण जैसी अनेक क्रियाओं के द्वारा मनुष्य शैलों की काफी तोड़–फोड़ करता है। मनुष्य की खनन क्रिया के द्वारा शैलें कमजोर होकर ढीली पड़ जाती हैं और अन्ततः टूट–फूट जाती हैं।

- पेड़े–पौधे, जीवजन्तु और मनुष्य जैसे जैविक कारक भौतिक और रासायनिक दोनों ही प्रकार का अपक्षय करते हैं।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 2.7

1. अपक्षय द्वारा कौन सा महत्वपूर्ण पदार्थ बनता है?

   _____

2. मृदा में ह्यूमस कहाँ से आता है?

   _____

3. मनुष्य की ऐसी दो क्रियाएँ बताइए, जिनसे अपक्षय होता है।

   (i)_____ (ii)_____

2.9 अपक्षय और मृदा

अपक्षय की प्रक्रियाओं के विषय में पढ़कर हम यह जान गए हैं कि इनके द्वारा विभिन्न प्रकार की स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। मृदा निर्माण में अपक्षय की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। मृदा कृषि का आधार है। कृषि से सारे संसार को भोजन मिलता है।

भौतिक अपक्षय धरातलीय शैलों को विघटित करके, उन्हें बारीक चूर्ण में बदल देता है। जल इन छोटे–छोटे शैल कणों को परतों के रूप में बिछा देता है। जैविक अपक्षय से ह्यूमस बनता है। यह जैव पदार्थ पेड़–पौधों और जीवजन्तुओं के क्रिया–कलापों से बनता है, जो मृदा के निर्माण में सहायता करता है। अपक्षय की भिन्न–भिन्न प्रक्रियाओं के द्वारा भिन्न–भिन्न रंगों और गुणों वाली मृदाओं का निर्माण होता है।

- शैलों के विघटन के अलावा अपक्षय का मृदा के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है।

2.10 तल संतुलन

बाह्य शक्तियाँ भूमि को समतल बनाने के लिए निरंतर कार्य कर रही हैं। ये शक्तियाँ अपरदन और निक्षेपण के बीच एक संतुलन की अवस्था स्थापित करने का प्रयत्न करती रहती हैं। उपर्युक्त शक्तियों की इस प्रक्रिया को **तल संतुलन** की प्रक्रिया कहते हैं। नदियाँ, हिमानियाँ, पवनें, समुद्री लहरें तथा भूमिगत जल, तल संतुलन के कारक हैं। ये कारक निरंतर अपक्षय, अपरदन और निक्षेपण करने में लगे रहते हैं। धरातल के ऊँचे भागों को घिसकर नीचा करने का काम अपरदन के द्वारा होता है। तल संतुलन के बाह्यकारक अपरदित पदार्थों को ले जाकर गड्ढों या नीचे स्थानों में भरते रहते हैं।

धरातल के किसी भाग को हम तभी लक्षण विहीन मैदान कहेंगे, जब बाह्य शक्तियाँ वहाँ अपरदन और निक्षेपण कार्य करना बंद कर दें। लेकिन ऐसे भाग कभी स्थायी नहीं होते; क्योंकि बाह्य और आंतरिक दोनों ही प्रकार की शक्तियाँ कभी भी एक दूसरे के कार्य को पूरा नहीं होने देती।

हम पढ़ चुके हैं कि आंतरिक शक्तियाँ धरातल पर प्रमुख स्थलाकृतियों का निर्माण करती हैं। तथा बाह्य शक्तियाँ उन्हें समतल करने में लगी रहती हैं। तल संतुलन के कार्य को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

(क) निम्नीकरण

अपरदन की प्रक्रिया के द्वारा शैलों को घिसकर, खुरचकर या काटकर उनको मूल स्थानों से हटा दिया जाता है। इससे ऊँचे स्थान धीरे–धीरे नीचे होते जाते हैं। इस प्रक्रिया को निम्नीकरण कहते हैं। **निम्नीकरण** में सबसे पहले तो अपक्षय का कार्य आता है जिसमें घिसे हुए और खुरचे हुए शैल पदार्थ गुरुत्वाकर्षण शक्ति से नीचे की ओर खिसक जाते हैं। दूसरे, इसमें अपरदन का कार्य भी पूरा करते है। इस प्रक्रिया में तल संतुलन का कोई कारक शैल पदार्थों को मूल स्थान से हटाकर ले जाता है। शैल पदार्थों के परिवहन की गति की वृद्धि के साथ–साथ अपरदन और परिवहन की क्षमता भी बढ़ती–जाती है।

(ख) अधिवृद्धि

निचले क्षेत्रों या गड्ढों में अपरदित पदार्थों के जमा होने को **निक्षेपण** कहते हैं। निक्षेपण तब शुरू होता है, जब तल संतुलन के कारकों की शक्ति घट जाती है या उनके मार्ग में कोई अवरोध आ जाता है। परिणामस्वरूप अपरदित पदार्थ गड्ढों में जमा हो जाते हैं। इससे नई स्थलाकृतियों का निर्माण होता है तथा पहले से विद्यमान स्थालाकृतियों का स्वरूप बदल जाता है।

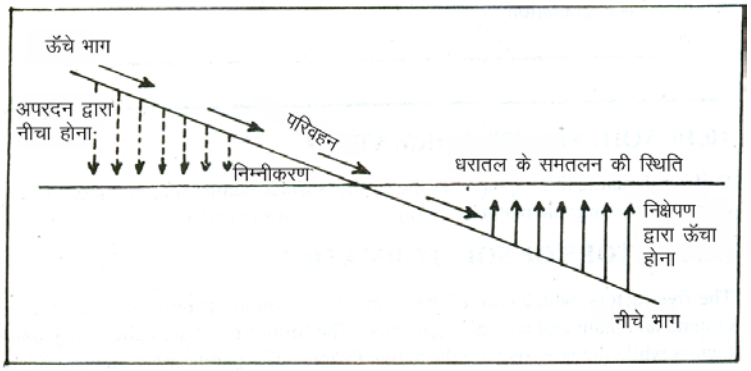

चित्र 2.7 तल संतुलन की प्रक्रिया

ऊपर के चित्र को ध्यान से देखिए। इसमें तल संतुलन की पूरी प्रक्रिया समझाई गई है। इसी चित्र में इस प्रक्रिया के दोनों अंगों – निम्नीकरण और अधिवृद्धि को भी समझाया गया है। इस चित्र में दिखाया गया है कि अपक्षय और अपरदन ऊँचे भागों को निरंतर

टिप्पणी

नीचे कर रहें हैं। परिवहन की प्रक्रिया के द्वारा अपरदित पदार्थों को मूल स्थानों से हटाकर नीचे क्षेत्रों में जमा किया जा रहा है। निचले क्षेत्रों का तल अपरदित पदार्थों के निक्षेपण से ऊँचा उठा रहा है। अन्ततः एक भाग का तल चौरस या लगभग चौरस हो जाता है। तल संतुलन की प्रक्रिया किसी अकेले कारक के द्वारा पूरी नहीं होती है। यह अलग बात है कि किसी क्षेत्र में या किसी समय तल संतुलन का कोई एक कारक अधिक क्रियाशील हो सकता है।

- धरातल के चौरस होने को **तल संतुलन** कहते हैं। इसमें निम्नीकरण और अधिवृद्धि दोनों ही प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं।
- अपरदन के द्वारा धरातल के घिसने को **निम्नीकरण** कहते हैं तथा गड्ढों को भरकर ऊँचा करने की प्रक्रिया को **अधिवृद्धि** कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 2.8

1. कौन सी प्रक्रिया धरातल को समतल या चौरस करती है?

   _____

2. तल संतुलन की दो प्रक्रियाएँ कौन सी हैं?

   (क) _____ (ख) _____

3. निक्षेपण द्वारा गढडों को भरकर ऊँचा करने वाली प्रक्रिया के लिए किस पारिभाषिक शब्द का प्रयोग किया जाता है।

   _____

4. निम्नीकरण किसे कहते हैं?

   _____

2.11 मृदा और इसका निर्माण

मृदा, जैव तथा अजैव पदार्थों की एक परिवर्तनशील और विकासशील पतली परत है, जो भूपृष्ठ को ढके हुए है। यह वानस्पतिक आवरण को बनाए रखने में मदद देती है। इसमें विभिन्न परतें होती हैं, जो मूल शैल में भौतिक, रासायनिक और जैविक अपक्षय की प्रक्रियाओं द्वारा बनती हैं।

मृदा निर्माण के कारक

मृदा निर्माण को नियन्त्रित करने वाले पाँच कारकों में मूल शैल, उच्चावच, समय, जलवायु तथा जैविक तत्व शामिल हैं। पहले तीन कारकों को निष्क्रिय कारक तथा अन्तिम दो कारकों को क्रियाशील कारक कहते हैं। आधारी शैल तथा तलवायु मृदा निर्माण के दो महत्वपूर्ण कारक हैं, क्योंकि ये अन्य कारकों को प्रभावित करते हैं।

टिप्पणी

(क) मूल शैलः– मृदा अपने नीचे स्थित विभिन्न खनिजों से युक्त शैल या मूल शैल ७ पदार्थों से निर्मित होती है। मूल शैल छोटे–छोटे टुकड़ों में टूट जाती है, तथा भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रक्रियाओं द्वारा अपघटित हो जाती है। इससे मृदा के अजैव खनिज कणों का निर्माण होता है। मूल शैल मृदा निर्माण में लगने वाले समय, उसके रासायनिक संघटन, रंग, गठन, बनावट खनिज अंश तथा उर्वरता को भी प्रभावित करती है।

(ख) उच्चावच :– किसी क्षेत्र की स्थलाकृति मूल शैल पदार्थों के अपरदन की मात्रा तथा वहां बहने वाले जल की गति को प्रभावित करती हैं। इस प्रकार मृदा निर्माण में सहायक प्रक्रियाएँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में उच्चावच से प्रभावित होती हैं। तीव्र ढाल वाले क्षेत्रों में जल तेजी से बहता है। इसके विपरीत मन्द ढालों पर जल की गति धीमी होती है। इसलिए तीव्र ढालों वाले क्षेत्रों की भूमि में पानी का रिसाव कम होता है, जिससे मृदा निर्माण की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। तीव्र ढालों पर अपरदन अधिक तेजी से होता है। इससे मृदा निर्माण में बाधा पड़ती है। यही कारण है कि पर्वतीय क्षेत्रों में पतली परत वाली कम उपजाऊ मृदा का निर्माणा होता है। मैदानी क्षेत्रों में पूर्ण विकसित उपजाऊ मृदा का निर्माण होता है।

(ग) समय :– मृदा का निर्माण बहुत धीरे–धीरे होता है। पूर्ण रूप से विकसित मृदा का निर्माण तभी होता है; जब भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रक्रियाएँ बहुत लंबे समय तक कार्य करती हैं।

(घ) जलवायुः- मृदा निर्माण की प्रक्रिया में जलवायु सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारक है। जलवायु न केवल समय की लंबी अवधि में मूल शैल पदार्थों के कारण मृदा में उत्पन्न अन्तरों को कम करती है; अपितु मृदा में होने वाली जैविक प्रक्रियाओं को भी प्रभावित करती है। इस कारण एक प्रकार की जलवायु वाले प्रदेशों में दो विभिन्न प्रकार के मूल शैल पदार्थों के द्वारा एक ही प्रकार की मृदा का निर्माण होता है।

उदाहरण के लिए राजस्थान की शुष्क मरुस्थलीय जलवायु में बलुआ पत्थर और ग्रेनाइट से एक ही प्रकार की बलुई मृदा का निर्माण हुआ है। इसके विपरीत दो भिन्न जलवायु प्रदेशों में एक ही प्रकार के मूल शैल पदार्थों से दो भिन्न प्रकार की मृदाओं का विकास होता है। उदाहरण के लिए रवेदार ग्रेनाइट शैल पदार्थों से मानसूनी जलवायु प्रदेशों में जहाँ लेटेराइट मृदा का निर्माण हुआ है, वहीं उपार्द्र प्रदेशों में लेटेराइट से भिन्न मृदाओं का निर्माण हुआ है।

किसी प्रदेश में अपक्षय की प्रक्रिया, इसके प्रभाव तथा वनस्पति और जीवों के प्रकार का सीधा संबंध ऋतुओं के अनुसार बदलते तापमान तथा इसके वितरण और वर्षण के साथ है। इस प्रकार जलवायु मृदा निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

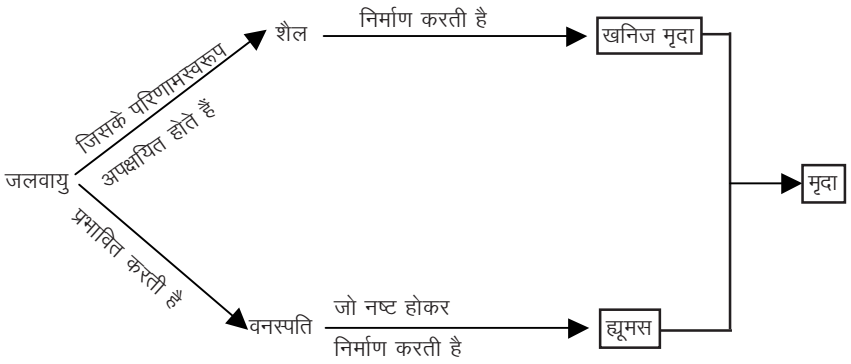

चित्र 2.8 मृदा निर्माण के कारक

(ङ) **वनस्पति तथा जीवः**– मूल शैल पदार्थों पर विकसित मृदा की गुणवत्ता में वहाँ के पेड़–पौधे तथा जीवजन्तुओं की सक्रिय भूमिका होती हैं। मृत पेड़–पौधों तथा जीवजन्तुओं से मृदा का जैविक अंश बनता है। अपघटन व जैविक प्रक्रियाओं के सहयोग से जैव पदार्थ ह्यूमस के रूप में बदल जाते हैं। ह्यूमस से ही मृदा उपजाऊ बनती है। इसके द्वारा मृदा की जल धारण करने की क्षमता में वृद्धि होती है। मृदा इसी जैविक पदार्थ के द्वारा वनस्पति का पोषण करती है। इसके बदले में वनस्पति का आवरण मृदा की ऊपरी उपजाऊ परत की अपरदन से रक्षा करती है। वनस्पति का आवरण वर्षा के जल को बहने से रोकता है और उसे मृदा की निचली परतों में रिसने के लिए मजबूर करता है। इस आवरण से मृदा की नमी का वाष्पीकरण भी कम होता है। इस प्रकार उपजाऊ और विकसित मृदा बनने में सहायता मिलती है।

- जलवायु तथा वनस्पति व जीवजन्तु मृदा निर्माण के **क्रियाशील कारक** हैं।
- मूल शैल पदार्थ, उच्चावच और समय मृदा निर्माण के **निष्क्रिय कारक** हैं।

मृदा की संस्तर स्थितियाँ

एक मृदा की परत जो कमोवेश धरातल के समानन्तर होती है तथा जिसमें मृदा के विशिष्ट गुण होते हैं उसे मृदा की संस्तर स्थिति कहते हैं। मृदा संस्तर मृदा में मृदा की सुस्पष्ट परतें होती हैं जो भौतिक और रासायनिक संघटन, जैविक पदार्थ और संरचना में एक दूसरे से भिन्न होती हैं। मृदा संस्तरों को दर्शाने वाली परिच्छेदका को मृदा परिच्छेदिका क

चित्र 2.9 मृदा की संस्तर स्थितियाँ और आधार शैल

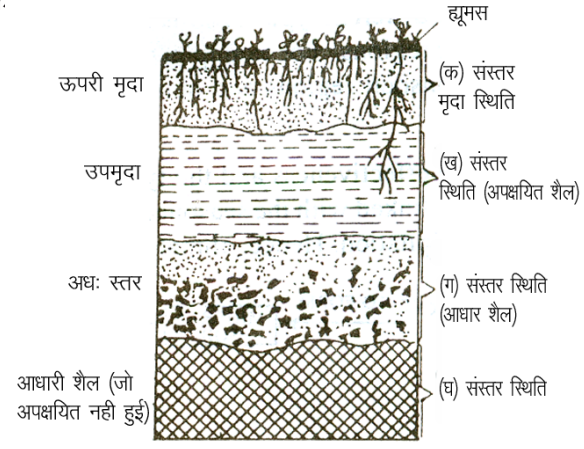

टिप्पणी

आइए मुख्य मृदा संस्तरों और उनकी विशेषताओं का संक्षेप में पुनरीक्षण करें। चार मुख्य मृदासंस्तर क, ख, ग, और घ महत्वपूर्ण हैं। परत या संस्तर स्थिति 'क' मृदा की ऊपरी परत होती है। इसे ऊपरी मृदा कहते हैं। इसमें ह्यूमस की मात्रा अधिक होती है। इसीलिए इसका रंग काला होता है। परत या संस्तर स्थिति (ख) ऊपरी मृदा के नीचे होती है। इसे **उप-मृदा** कहते हैं। वास्तव में यह निक्षालन क्रिया की पेटी (जोन) होती है। ये दो परतें या संस्तर स्थितियाँ मृदा का मुख्य भाग हैं। परत या संस्तर स्थिति 'ग' वास्तव में मूल शैल का अपक्षयित भाग है। इस परत का रंग उप–मृदा की अपेक्षा कुछ अधिक काला होता है, क्योंकि इस में मृदा के घुले हुए पदार्थ जमा हो जाते हैं। मृदा के ये घुले हुए पदार्थ वास्तव में ह्यूमस या खनिजों के बहुत ही महीन कण होते हैं। परत या संस्तर स्थिति 'घ' वह मूल शैल है जिसका अपक्षय नहीं हुआ है। यह मृदा परिच्छेदिका की सबसे नीचे की परत होती है।

- **मृदा परिच्छेदिका** मृदा की विभिन्न परतों के विन्यास को कहते हैं। ये परतें भौतिक रासायनिक और जैविक तत्वों के आधार पर एक दूसरे से भिन्न होती हैं।

पाठगत प्रश्न 2.9

1. मृदा निर्माण के दो क्रियाशील कारकों के नाम बताइये।

   (क)_____ (ख)_____

2. मृदा निर्माण के तीन निष्क्रिय कारकों के नाम बताइये।

   (क)_____ (ख)_____ (ग)_____

3. नीचे दिये गए शब्दों में से उचित शब्द चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   (जैव पदार्थ, अजैव खनिज कण, जैविक क्रियाएँ)

   (क) मूल शैल पदार्थों से मृदा को _____ मिलते हैं।

   (ख) किसी प्रदेश की जलवायु मृदा की _____ को प्रभावित करती है।

4. निम्नलिखित प्रत्येक के लिए भौगोलिक शब्द बताइये।

   (क) ठोस, द्रव तथा गैसीय तत्वों से बनी भूपृष्ठ की गतिशील ऊपरीपरत

   _____

   (ख) मृदा की विभिन्न परतों का ऊर्ध्वाधर विन्यास

   _____

टिप्पणी

(ग) ह्यूमस से युक्त मृदा की परत

_____

(घ) मृदा की वह संस्तर स्थिति जिसमें मृदा के घुले हुए पदार्थ (कोलाइड्स) जमा होते हैं।

_____

2.12 मृदा अपरदन

प्राकृतिक कारकों (जल, पवन आदि) द्वारा मृदा के पुनः स्थापन से अधिक दर से मृदा के निष्कासन को मृदा अपरदन कहते हैं।

मृदा अपरदन के प्रकार

मृदा अपरदन मुख्य रूप से चार प्रकार का होता है– पवन अपरदन, परतदार अपरदन, नदिका अपरदन तथा अवनालिका अपरदन।

(i) **पवन अपरदन** - पवन बहुत बड़ी मात्रा में बालू और मृदा के महीन कणों को मरूस्थलीय प्रदेशों से उड़ाकर निकटवर्ती खेती वाली भूमियों पर बिछाते रहते हैं। इस प्रकार ये इन भूमियों की उर्वरता को नष्ट करते हैं। इस प्रकार के अपरदन को **पवन अपरदन** कहते हैं। इस प्रकार का अपरदन संसार के मरूस्थलों तथा उनके निकटवर्ती प्रदेशों में हो रहा है। भारत में थार मरूस्थल एक लाख वर्ग किलोमीटर से भी अधिक क्षेत्र को घेरे हुए है। थार मरूस्थल का विस्तार राजस्थान, गुजरात, हरियाणा और पंजाब में है। ये पवन अपरदन से अत्याधिक प्रभावित हैं।

(ii) **परतदार अपरदन** - जल जब एक परत के रूप में बहता है तो मृदा की पतली परतों को अपने साथ बहा ले जाता है। इस प्रकार के अपरदन को **परतदार अपरदन** कहते हैं। इस प्रकार का अपरदन सामान्यतः नदी घाटियों तथा बाढ़ से प्रभावित क्षेत्रों में होता है। इस प्रकार के अपरदन से लंबे समय में मृदा की ऊपरी परत हट जाती है और मृदा अनुपजाऊ हो जाती है।

(iii) **नदिका अपरदन** - धरातलीय पदार्थ सामान्यतः मृदा का बहते हुए जल के द्वारा निष्कासन नदिका अपरदन कहलाता है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत बहुत सी छुद्र सरिताएँ वर्षा ऋतु में बन जाती है तथा इनकी गहराई केवल कुछ सेंटीमीटर होती है। ये अपरदन भी करती है। इसे ही नदिका अपरदन के नाम से जानते हैं।

(iv) **अवनालिका अपरदन** - जल ढाल की ओर जब नालियों में बहता है तो वह मृदा कणों को उखाड़ कर बहा ले जाता हैं इससे अवनालिकाएँ बन जाती हैं। ये

टिप्पणी

धीरे–धीरे गहरी और चौड़ी होकर विस्तृत क्षेत्रों में फैल जाती है। इस प्रकार के अपरदन को **अवनालिका अपरदन** कहते हैं। इस प्रकार से अपरदित भूमि को **उत्खात भूमि** कहते हैं। हमारे देश की दो नदियों यमुना और चंबल ने उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में अवनालिका अपरदन के द्वारा काफी बड़े क्षेत्र को उत्खात भूमि में बदल दिया है।

अंतिम दो प्रकार का अपरदन कई कारकों से प्रभावित होता है। ये कारक हैं – जल प्रवाह की मात्रा और गति, मृदा की अपरदित होने की क्षमता, ढाल का स्वरूप, मृदा का गठन व बनावट, वर्षण का स्वरूप तथा वनस्पति का आवरण। पवन–अपरदन में पवनों या आंधियों की गति और बारंबारता तथा वनस्पति आवरण मुख्य कारक हैं। सागर की लहरें उन तटवर्ती क्षेत्रों में अपरदन करती हैं जो चूने के पत्थर जैसी कमजोर शैलों से बने होते हैं। इस प्रकार का अपरदन केरल के तट पर काफी बड़े पैमाने पर हुआ है। पर्वतीय क्षेत्रों तथा नदी द्रोणियों में, नदी द्वारा मार्ग बदलने तथा हिमपात से मृदा का बहुत अधिक अपरदन हुआ है।

- प्राकृतिक शक्तियों या मानव–क्रियाओं से मृदा के आवरण के हटने को मृदा अपरदन कहते हैं।
- मृदा अपरदन चार प्रकार का होता है – पवन अपरदन, परतदार अपरदन नदिका अपरदन तथा अवनालिका अपरदन।
- मृदा अपरदन को प्रभावित करने वाले कारक हैं – जल प्रवाह की मात्रा तथा गति, ढाल का स्वरूप, मृदाओं का गठन और बनावट तथा पवनों की बारंबारता और गति।

2.13 मृदा संरक्षण

मृदा एक बहुत ही महत्वपूर्ण संसाधन है। यह प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से विभिन्न प्रकार के जीवों का भरण–पोषण करती है। इसके अतिरिक्त, मृदा निर्माण एक बहुत ही धीमी प्रक्रिया है। मृदा अपरदन की प्रक्रिया ने प्रकृति के इस अनूठे उपहार को केवल नष्ट ही नहीं किया है; अपितु अनेक प्रकार की समस्याएँ भी पैदा कर दी है। मृदा अपरदन से बाढ़ें आती हैं। इन बाढ़ों से सड़कों व रेलमार्गों, पुलों, जल विद्युत परियोजनाओं, जलापूति और पम्पिंग केन्द्रों को काफी हानि पहुँचती है।

मृदा संरक्षण से तात्पर्य उन विधियों से है, जो मृदा को अपने स्थान से हटने से रोकते हैं। संसार के विभिन्न क्षेत्रों में मृदा अपरदन को रोकने के लिए भिन्न–भिन्न विधियाँ अपनाई गई हैं। इन विधियों का विवरण नीचे दिया गया है।

(क) वन संरक्षण : वनों के वृक्षों की अंधाधुंध कटाई मृदा अपरदन का प्रमुख कारण है। वृक्षों की जड़ें मृदा पदार्थों को बांधे रखती हैं। यही कारण है कि सरकारों ने वनों को 'सुरक्षित' घोषित कर दिया है तथा इन वनों में वृक्षों की कटाई पर रोक लगा दी हैं मृदा

टिप्पणी

संरक्षण की यह विधि सभी प्रकार के भू–भागों के लिए उपयुक्त है। वनों को वर्षा लाने वाले 'दूत' कहा जाता है। इनसे मृदा निर्माण की प्रक्रिया तेज हो जाती है।

(ख) वृक्षारोपण : नदी घाटियों, बंजर भूमियों तथा पहाड़ी ढालों पर वृक्ष लगाना मृदा संरक्षण की दूसरी विधि है। इससे इन प्रदेशों में मृदा का अपरदन कम हो जाता हैं। मरूस्थलीय सीमान्त क्षेत्रों में पवन–अपरदन को नियंत्रित करने के लिए वृक्षारोपण एक प्रभावी उपाय है। मरूस्थलीय क्षेत्रों के सीमावर्ती भागों में वृक्ष लगाकर रेगिस्तानी रेत को खेतों में जमने से रोका जा सकता है। इस तरह मरूस्थलीय क्षेत्रों की वृद्धि पर अंकुश लगता है। हमारे देश में, थार मरूस्थल के विस्तार को रोकने के लिए राजस्थान, हरियाणा, गुजरात तथा पंजाब में बड़े पैमाने पर वृक्ष लगाए जा रहे हैं।

(ग) बाढ़ नियंत्रण : वर्षा ऋतु में नदियों में जल की मात्रा बढ़ जाती है। इससे मृदा के अपरदन में वृद्धि होती है। बाढ़ नियंत्रण के लिए नदियों पर बांध बनाए गए हैं। इनसे मृदा का अपरदन रोकने में मदद मिलती है। नदियों के जल को नहरों द्वारा सूखाग्रस्त क्षेत्रों की ओर मोड़कर तथा जल संरक्षण की अन्य सुनियोजित विधियों द्वारा भी बाढ़ों को रोका जा सकता है।

(घ) नियोजित चराई : अत्यधिक चराई से पहाड़ी ढालों की मृदा ढीली हो जाती है और जल इन ढीली मृदा को आसानी से बहा ले जाता है। इन क्षेत्रों में नियोजित चराई से वनस्पति के आवरण को बचाया जा सकता है। इस प्रकार इन क्षेत्रों के मृदा अपरदन को कम किया जा सकता है।

(च) बंध बनाना : अवनालिका अपरदन से प्रभावित भूमि में बंध या अवरोध बनाकर मृदा अपरदन को रोका जा रहा हैं। यह विधि न केवल मृदा का अपरदन रोकती हे, अपितु इससे मृदा की उर्वरता बनाए रखने, जल संसाधनों के संरक्षण तथा भूमि को समतल करने में भी सहायता मिलती है।

(छ) सीढ़ीदार खेत बनाना : पर्वतीय ढालों पर मृदा के संरक्षण के लिए सीढ़ीदार खेत बनाना एक अन्य विधि है। सीढ़ीदार खेत बनाने से तात्पर्य पर्वतीय प्रदेशों में ढलान के आर–पार समतल चबूतरे बनाने से है। इस विधि से इन क्षेत्रों में मृदा का अपरदन रूक जाता है। साथ ही जल संसाधनों का समुचित उपयोग भी होता है। इस प्रकार इन खेतों में फसलें उगाई जा सकती है।

(ज) समोच्चरेखीय जुताई : मृदा संरक्षण की यह विधि तरंगित भूमि वाले प्रदेशों के लिए सबसे अधिक उपयुक्त है। भूमि को समान ऊँचाइयों पर जोतने से हल के कूंड या नालियां ढाल के आर–पार बन जाती हैं। इससे मृदा के अपरदन की गति में कमी आ जाती है। यह विधि मृदा उर्वरता और आर्द्रता बनाए रखने के लिए भी प्रयोग में लाई जाती है।

(झ) कृषि की पट्टीदार विधि अपनाना : मृदा संरक्षण को यह विधि मरूस्थलीय और अर्द्धमरूस्थलीय प्रदेशों के तरंगित मैदानों के लिए सबसे अधिक उपयुक्त है। इस

विधि में खेतों को पट्टियों में बांट दिया जाता है। एक पट्टी में एक साल खेती की जाती है जबकि दूसरी पट्टी बिना जोते बोए खाली पड़ी रहती है। छोड़ी गई पट्टी की वनस्पति का आवरण मृदा अपरदन को रोकता है तथा उर्वरता को बनाए रखता है। अगले वर्ष इस प्रक्रिया को उलट दिया जाता है।

(त्र) शस्यावर्तन : शस्यावर्तन से तात्पर्य मृदा की उर्वरता को बनाए रखने के लिए चुने हुए खेत में विभिन्न फसलों को बारी–बारी बोने से है। इस प्रकार शस्यावर्तन के द्वारा ऐसे खेतों की उर्वरता भी बनी रहती है, जिनमें लगातार कोई न कोई फसल खड़ी रहती है। यह विधि उन क्षेत्रों के लिए उपर्युक्त है, जहाँ जनसंख्या के दबाव के कारण खेती के लिए भूमि कम रह गई है। यह विधि संसार के अधिकतर देशों में अपनाई जाती है।

(ट) भूमि उद्धार : जल द्वारा बनी उत्खात भूमियों को समतल करके भी मृदा अपरदन को रोका जा सकता है। मृदा संरक्षण की यह विधि नदी घाटियों और पहाड़ी प्रदेशों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। हमारे देश में चंबल और यमुना नदियों के उत्खात भूमियों वाले विस्तृत क्षेत्रों को इस विधि द्वारा समतल किया गया है।

- मृदा संरक्षण की विधियाँ हैं – वनों की रक्षा, वृक्षारोपण, बंध बनाना, भूमि उद्धार, बाढ़ नियंत्रण, अत्यधिक चराई पर रोक, पट्टीदार व सीढ़ीदार कृषि, समोच्चरेखीय जुताई तथा शस्यार्वतन।

पाठगत प्रश्न 2.10

1. कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से उपयुक्त शब्द चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   (क) मृदा आवरण के पूरी तरह हटा दिए जाने को _____ कहते हैं। (अवनालिका अपरदन, पवन अपरदन, परतदार अपरदन)

   (ख) _____मरूस्थलीय सीमान्त भूमियों में मृदा संरक्षण की सर्वोत्तम विधि हैं। (पट्टीदार खेती, वृक्षारोपण, बंध बनाना)

   (ग) परतदार अपरदन मुख्य रूप से _____ द्वारा होता है। (बाढ़, वर्षा, वनों के विनाश)

2. निम्न में से प्रत्येक के लिए एक पारिभाषिक शब्द बताइये :–

   (क) प्रकृति या मानव क्रियाओं द्वारा मृदा पदार्थ का हटाना _____।

   (ख) जलधाराओं द्वारा मृदा को हटाना _____।

   (ग) वृक्ष रहति भूमियों में वृक्षों को लगाना _____।

टिप्पणी

(घ) आँधियों द्वारा मृदा का हटाना _____।

(ङ) समान ऊँचाईयों पर भूमि की जुताई _____।

आपने क्या सीखा

पृथ्वी एक विशाल गोलाकार ठोस पिण्ड हैं। भूगर्भ को प्रत्यक्ष रूप से कुछ ही किलोमीटर की गहराई तक देखा जा सकता है। पृथ्वी के धरातल से केन्द्र की ओर जाने पर तापमान, दबाव तथा घनत्व बढ़ते जाते हैं। भूगर्भ को तीन परतों में बांटा गया है– स्थलमंडल, मैंटल और क्रोड। स्थलमंडल के ऊपरी भाग को भूपर्पटी कहते हैं। भूपर्पटी का निर्माण जिन पदार्थों से हुआ है, उन्हें शैल कहते हैं। शैल एक या एक से अधिक खनिजों का मिश्रण है। खनिज विभिन्न तत्वों से बने हैं। उनका एक निश्चित रासायनिक संघटन है। निर्माण क्रिया के आधार पर शैलों को तीन वर्गों में बांटा गया है – आग्नेय, अवसादी और रूपांतरित। आग्नेय शैल द्रवित लावा अथवा मैग्मा के जमने से बनी हैं। ग्रेनाइट, बैसाल्ट और ग्रैबो आग्नेय शैल के उदाहरण हैं। जब द्रवित पदार्थ धरातल के नीचे गहराइयों में जमता है तो उसे आंतरिक आग्नेय शैल और धरातल के ऊपर जमने वाले स्वरूप को बाह्य आग्नेय शैल कहते हैं। शैल, चूना–पत्थर अवसादी शैल हैं। रूपांतरित शैल पूर्ववर्ती शैलों के रूपांतरण से बनी है। शैलों का मानव जीवन में बहुत उपयोग है। इससे मूल्यवान वस्तुएँ, पत्थर तथा भवन निर्माणकारी पदार्थ, ईंधन आदि मिलते हैं।

धरातल पर स्थल के विभिन्न स्वरूपों में निरंतर परिवर्तन होता रहता है। इनमें बाह्य शक्तियाँ दिन–रात, ऊँचे–नीचे भागों को समतल करने का प्रयत्न करती रहती है।

अपक्षय द्वारा शैलों में विभिन्न प्रकार का परिवर्तन होता रहता हैं। मौसम के तत्वों – जैसे तापमान, जल, पाला आदि के द्वारा शैलें कमजोर हो जाती हैं। उनमें दरारें तथा रंध्र बढ़ते जाते हें, जिससे बड़े–बड़े शैल खंड छोटी गुटिकाओं और कणों के रूप में विघटित होती है। इसे भौतिक अपक्षय कहते हैं। इस प्रकार का अपरदन मरूस्थलों, शुष्क उष्ण जलवायु वाले प्रदेशों और ठंडे प्रदेशों में बहुत अधिक होता है। गैसों और जल की क्रियाओं के परिणामस्वरूप शैल खनिजों में रासायनिक परिवर्तन होता है। रासायनिक परिवर्तन आक्सीकरण,कार्बोनेटीकरण, जल योजन और घोलन की क्रियाओं से होता है। इसे रासायनिक अपक्षय कहते हैं। इस प्रकार का अपक्षय उष्ण तथा आर्द्र जलवायु प्रदेशों में अधिक होता है। वनस्पति, जीव–जंतु, कीड़े–मकोड़े और मनुष्य जैविक अपक्षय के कारक हैं। इनके द्वारा रासायनिक और भौतिक अपक्षय भी होता है।

मृदा मानव के लिए एक उपयोग प्राकृतिक संसाधन है। वह मृदा से अपना भोजन, वस्त्र और अन्य उपयोग वस्तुएं प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राप्त करता है। मृदा ढीले अजैव

टिप्पणी

तथा अपघटित जैव पदार्थों की पतली परत हैं, जो भूपृष्ठ को ढके हुए हैं। मृदा के निर्माण में विभिन्न कारकों का योगदान होता है। ये कारक हैं – मूल शैल पदार्थ, जलवायु, उच्चावच, समय तथा वनस्पति। पूर्ण रूप से विकसित मिट्टियों में मृदा परिच्छेदिका का विकास होता है। इसमें चार परत या संस्तर स्थितियाँ होती हैं। प्रत्येक परत की विशेषताएँ भिन्न होती हैं।

मृदा अपरदन एक प्राकृतिक प्रक्रिया है, जिसमें मृदा आवरण का विनाश तथा कटाव शामिल है। बहता जल, पवनें, समुद्री लहरें तथा हिमानियाँ अपरदन के प्रमुख कारक हैं। मृदा अपरदन के कई प्रकार हैं, जैसे पवन अपरदन, परतदार अपरदन तथा अवनालिका अपरदन। मृदा आवरण का हटाया जाना पानी की मात्रा व गति, ढाल के स्वरूप, मृदा के गठन व बनावट, पवनों की आवृति तथा वर्षण के स्वरूप पर निर्भर करता है। मानव भी अपने कुकृत्यों के द्वारा प्राकृतिक शक्तियों को सहयोग देकर, मृदा अपरदन की समस्या में वृद्धि कर रहा है। मृदा संरक्षण से तात्पर्य उन विधियों से है, जिनके द्वारा मृदा अपरदन रोका जा सकता है। इन विधियों में वनों की रक्षा, वृक्षारोपण, समोच्चरेखीय जुताई, सीढ़ीदार व पट्टीदार कृषि, बंध बनाना तथा बाढ़ नियंत्रण आदि शामिल हैं।

पाठांत प्रश्न

1. भूगर्भ के संबंध में जानकारी के लिए प्रत्यक्ष विधियों की सीमाएं क्या हैं ?
2. भूगर्भ को प्रदर्शित करने वाला आरेख बनाइए, जिसमें प्रत्येक परत का घनत्व और उसकी गहराई अंकित कीजिए।
3. उदाहरण सहित शैल और खनिजों में अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. रचना के आधार पर शैलों का वर्गीकरण कीजिए। उपयुक्त उदाहरण के साथ उत्तर दीजिए।
5. शैल और खनिजों का आर्थिक महत्व क्या है ? संक्षेप में वर्णन कीजिए।
6. रूपांतरित और अवसादी शैलों की निर्माण–क्रिया की तुलना कीजिए।
7. अपक्षय किसे कहते हैं? अपक्षय के विभिन्न प्रकारों के नाम लिखिए।
8. रासायनिक अपक्षय कैसे होता है?
9. निम्नलिखित जोड़ों में अंतर बताइये;

   (क) विघटन तथा अपघटन

   (ख) निम्नीकरण तथा अधिवृद्धि;

   (ग) आक्सीकरण तथा घोलन क्रिया।

टिप्पणी

10. तल–संतुलन की प्रक्रिया को समझाइये।

11. मनुष्य अपक्षय का महत्वपूर्ण कारक कैसे है ?

12. अपक्षय की निम्नलिखित प्रक्रियाओं को सामान्य आरेख बनाकर समझाइये :

    (क) पिण्ड विघटन;

    (ख) तुषारी अपक्षय;

    (ग) वृक्षों की जड़ों द्वारा अपक्षय।

13. मृदा परिच्छेदिका का संक्षिप्त विवरण लिखिए तथा उपयुक्त आरेख भी बनाइये।

14. मृदा के निर्माण में सहायक विभिन्न कारकों की विवेचना कीजिए।

15. मृदा अपरदन किसे कहते हैं? मृदा अपरदन के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिए। मृदा के संरक्षण में प्रयोग की जाने वाली विभिन्न विधियों का विवरण दीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

2.1

1. गहराई बढ़ने के साथ तापमान में तेजी से वृद्धि।
2. (क) स्थलमण्डल (ख) मैंटल (ग) क्रोड़
3. क्रोड़ या निफे
4. 11.0 से भी अधिक (5) स्थलमंडल (6) स्थलमंडल

2.2

1. 2000^0 डिग्री सें.
2. समुद्र जल पर वायुमंडलीय दाब की तुलना में 30–40 लाख गुणा अधिक
3. ऊपर की परतों के अत्यधिक दबाव और भारी पदार्थों की उपस्थिति के कारण

2.3

1. खनिज एक प्राकृतिक रूप से प्राप्त अजैविक तत्व हैं जिसके कुछ भौतिक गुण और निश्चित रासायनिक संघटन होता हैं
2. फाल्सपार, क्वार्ट्ज, पाइराक्सीन, एम्फीबोल, अभ्रक और ओलोवीन में से कोई तीन
3. (1) पातालीय आग्नेय शैल (2) लावा

टिप्पणी

4. (क) जब मैग्मा भूपर्पटी की दरारों या छिद्रों में लंबवत जमता है तो उसे डाइक कहते हैं। (ख) जब ये शैलों की समानांतर क्षैतिज परतों के बीच जमता है तो इसे सिल कहते हैं।
5. (क) शीतलन, (ख) बैसाल्ट, (ग) ठोसीकरण

2.4

1. जिन पदार्थों से भूपर्पटी बनी है उन्हें शैल कहते हैं।
2. आग्नेय, अवसादी एवं कायांतरित शैल
3. (i) गतिक रूपांतरण (ii) अवसादी परतदार शैलें (iii) रूपांतरित शैलें
   (iv) सरोवरी शैल।
4. (ग) रूपांतरित शैल, (ग) बालू–पत्थर

2.5

1. (क) भौतिक अपक्षय (ख) रासायनिक अपक्षय (ग) जैविक अपक्षय।
2. शुष्क तथा अत्यधिक ठंडे प्रदेशों में।
3. (क) अपशल्कन (ख) तुषारी अपक्षय ऽ(ग) भौतिक अपक्षय

2.6

1. उष्ण और आर्द्र प्रदेशों में
2. घोलन
3. आक्सीकरण
4. कार्बोनेटीकरण

2.7

1. मृदा 2. जैव पदार्थों पर जीवाणुओं की क्रिया के द्वारा 3. (i) कृषि, (ii) भवन या सड़क निर्माण

2.8

1. तल संतुलन
2. (क) निम्नीकरण या ऊँचे भागों को नीचा करना।
   (ख) अधिवृद्धि या नीचे भागों का भरना।
3. अधिवृद्धि
4. पदार्थों के अपरदन से ऊँचे भागों को नीचा करना

टिप्पणी

2.9

1. (क) जलवायु (ख) वनस्पति व जीव जन्तु।
2. (क) मूल शैल (ख) उच्चावच या स्थलाकृति (ग) समय
3. (क) अजैव खनिज कण (ख) जैविक क्रियाओं
4. (क) मृदा (ख) मृदा परिच्छेदिका (ग) मृदा की ऊपरी परत
   (घ) अपक्षयित मूल शैल की पेटी।

2.10

1. (क) परतदार अपरदन (ख) वृक्षारोपण (ग) बाढ़ों
2. (क) मृदा अपरदन (ख) अवनालिका अपरदन
   (ग) वृक्षारोपण (घ) पवन अपरदन (ड.) समोच्चरेखीय जुताई।

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. पृथ्वी की सतह से भूगर्भ में जाने पर तापमान का तेजी से बढ़ना, तापमान की अधिकता के कारण खनन कार्य कुछ ही किलोमीटर तक सीमित होना और अधिक गहराई तक खोदने पर वेधन यंत्रों का पिघल जाना।
2. चित्र 2.1 देखकर आरेख बनाइए।
3. अनुच्छेद 2.4 देखिये।
4. अनुच्छेद 2.5 देखिये।
5. अनुच्छेद 2.6 देखिये।
6. अवसादी शैलों की रचना ऋतु, अपक्षरण, अपरदन तथा पुरानी शैलों के अवसादों के जमाव से होती है जो दबाव, रासायनिक परिवर्तनों अथवा जैविक पदार्थों के दबाव से कठोर बन जाती है। दूसरी ओर रूपांतरित शैलों की रचना दबाव और मैग्मा के उच्च तापमान के कारण होती है। जब मैग्मा अवसादी अथवा आग्नेय शैलों के सम्पर्क में आता है तो शैलों का रूपांतरण हो जाता है।
7. अपक्षय वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा शैलें अपने ही स्थान पर विघटित और अपघटित होती हैं। अनुच्छेद 2.7 देखिए।
8. अनुच्छेद 2.8 देखिए।
9. (क) शैलों के विघटन से तात्पर्य है – तापमान या तुषारी क्रियाओं के प्रभाव से

टिप्पणी

शैलों का भौतिक विखंडन या टूटना–फूटना। अपघटन से तात्पर्य रासायनिक परिवर्तन से है। इसमें शैलों के खनिज छोटे–छोटे कणों में टूट जाते हैं या पानी में घुल जाते हैं।

(ख) अनुच्छेद 2.10 देखिए।

(ग) अनुच्छेद 2.8 देखिए।

10. अनुच्छेद 2.10 देखिए।

11. अनुच्छेद 2.8 देखिए।

12. चित्र संख्या 2.3, 2.5 और 2.6 देखिए।

13. अनुच्छेद 2.11 देखिए।

14. अनुच्छेद 2.11 देखिए।

15. अनुच्छेद 2.12 तथा 2.13 देखिए।

टिप्पणी

3

पृथ्वी का गतिशील धरातल

पिछले पाठ में हमने पढ़ा कि पृथ्वी का आंतरिक भाग बहुत गर्म है। भूकम्प और ज्वालामुखी कुछ संकरी पट्टियों के सहारे केन्द्रित हैं। भूपृष्ठ की शैलों के प्रकार और घनत्व परिवर्तनशील हैं। धरातलीय लक्षणों की विशेषता उनका गतिशील होना है। उनकी यह गतिशीलता दो शक्तियों – आंतरिक एवं बाह्य का परिणाम है। आंतरिक शक्तियाँ वे हैं जो धरातल के नीचे से उत्पन्न होती हैं। इस शक्ति के परिणामस्वरूप एक क्षेत्र या तो ऊपर उठ जाता है या नीचे धस जाता है। ये शक्तियाँ धरातल को अनियमित अथवा ऊबड़–खाबड़ बनाने का प्रयत्न करती हैं। जबकि बाह्य शक्तियाँ धरातल के ऊपर क्रियाशील रहती हैं। ये शक्तियाँ अनाच्छदन की प्रक्रिया द्वारा धरातल की अनियमितता को समाप्त करके उसे समतल बनाने का प्रयत्न करती हैं। अनाच्छादन की प्रक्रिया के विषय में हम अगले पाठों में अध्ययन करेंगे। आइए इस पाठ में हम पृथ्वी की आंतरिक शक्तियों का अध्ययन करें।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आपः

- भूसंतुलन की परिभाषा बता सकेंगे;
- पृथ्वी के धरातल पर उच्चावच के लक्षणों की विविधता का वर्णन कर सकेंगे;
- विभिन्न प्रयोगों द्वारा भूसंतुलन सामंजस्य की व्याख्या कर सकेंगे;
- एयरी और प्रैट के विचारों और उनके विचारों की भिन्नता को समझा सकेंगे;
- महाद्वीपीय विस्थापन की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे;
- महाद्वीपीय विस्थापन के प्रमाणों को गिना सकेंगे;
- प्लेट विवर्तनिकी की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे;
- विश्व मानचित्र पर विभिन्न प्लेटों को पहचान कर उनकी अवस्थिति दिखा सकेंगे;

टिप्पणी

- प्लेट संचलन के रचनातंत्र को स्पष्ट कर सकेंगे;
- विभिन्न प्लेट सीमाओं और उनसे सम्बन्धित लक्षणों को पहचान सकेंगे;
- पृथ्वी पर जल और स्थल के वितरण की व्याख्या कर सकेंगे; और
- प्लेट सीमाओं और भूकम्प एवं ज्वालामुखी के मध्य सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे।

3.1 भूसंतुलन की अवधारणा

आइसोस्टेसी (भूसंतुलन) शब्द ग्रीक भाषा के 'आइसोस्टेसियॉज' से लिया गया है, जिसका अर्थ है संतुलन की स्थिति। आप जानते हैं और आपने ऐसा देखा भी होगा कि पर्वतों के बहुत से शिखर होते हैं और उनकी ऊँचाई भी अधिक होती है। इसी तरह से पठार का ऊपरी भाग सपाट होता है और मैदान समतल होते हैं। पठारों की ऊँचाई सामान्य जबकि मैदानों की बहुत कम होती है, इसके विपरीत समुद्र तलों और खाइयों की गहराई बहुत अधिक होती है। इन उच्चावचों की ऊँचाई में बहुत अन्तर होता है। आप यह भी जानते हैं कि पृथ्वी अपनी धुरी पर परिभ्रमण कर रही है और उसने अपने विविध भूलक्षणों में सन्तुलन बना रखा है। अतः हमारी पृथ्वी को समस्थिति की अवस्था में माना जाता है।

उदाहरण – मान लीजिए आप अपने दोनों हाथों में भिन्न–भिन्न ऊँचाईयों (जैसे 5 और 15 इंच की) वाले लंबवत टुकड़े सीधे पकड़े हुए एक निश्चित दिशा में जा रहे हैं। क्या आपको अपने शरीर और उन दो टुकड़ों के साथ सामंजस्य बिठाने में कोई कठिनाई होती है? निश्चित रूप से लम्बे टुकड़ों की अपेक्षा छोटे टुकड़ें के साथ सन्तुलन बनाए रखना आसान होगा। ऐसा गुरूत्व केन्द्र के कारण होता है। लम्बे टुकड़े की तुलना में छोटे टुकड़े के साथ गुरूत्व केन्द्र आपके हाथ के अधिक पास होगा। इस प्रकार से छोटे धरातलीय लक्षण जैसे मैदान ऊँचे पर्वतों की तुलना में अधिक स्थिर होंगे।

(क) भू सन्तुलन : एअरी के विचार

भू वैज्ञानिक एअरी ने विभिन्न स्तम्भों जैस पर्वत पठार और मैदान आदि के घनत्व को एक जैसा माना है। अतः उसने विभिन्न मोटाइयों के साथ एक समान घनत्व के विचार को सुझाया। हम जानते हैं कि पृथ्वी की ऊपरी परत हल्के पदार्थों से बनी है। इस परत में सिलिका और एल्मुनियम भारी मात्रा में पाए जाते हैं, इसलिए इसे 'सियाल' के नाम से जाना जाता है। यह नीचे की परत से कम घनत्व वाला है। एअरी ने माना कि सियाल से बनी भूपर्पटी सिमा (सिलिका और मैग्नेशियम, नीचे की अधिक धनत्व वाली परत) की परत के ऊपर तैर रही है। भूपर्पटी की परत का घनत्व एक समान है जबकि इसके विभिन्न स्तम्भों की ऊँचाई अलग–अलग है। इसलिए ये स्तम्भ अपनी ऊँचाई के अनुपात में दुर्बलता मण्डल में धंसे हुए हैं। इसी कारणवश इनकी जड़ें विकसित हो गई है अथवा नीचे गहराई में सिमा विस्थापित हो गया है।

इस अवधारणा को सिद्ध करने के लिए, एअरी ने विभिन्न आकारों के लकड़ी के टुकड़े

लिए और उन्हें पानी में डुबो दिया। (चित्र 3.1 (क)) सभी टुकड़े एक जैसे घनत्व के हैं। ये अपने आकार के अनुपात में भिन्न–भिन्न गहराई तक पानी में डूबते हैं। इसी प्रकार से पृथ्वी के धरातल पर अधिक ऊँचाई वाले भूलक्षण उसी अनुपात में अधिक गहराई तक धंसे होते हैं जबकि कम ऊँचाई वाले लक्षणों की जड़ें छोटी होती हैं। यह अधिक गहराई तक धंसी हुई जड़ें ही हैं, जो अधिक ऊँचाई वाले भूभागों को स्थिर रखे हुए हैं। उनका विचार था कि, भू–भाग एक नाव की तरह (मैग्मा वाले दुर्बलता मण्डल) अधः स्तर पर तैर रहे है। इस अवधारणा के अनुसार माउँट एवरेस्ट की जड़ समुद्र स्तर से 70, 784 मीटर नीचे होनी चाहिए (8848 × 8 = 70,784)। एअरी की इसी बात को लेकर आलोचना हुई है कि, जड़ का इतनी गहराई पर रहना संभव नहीं है, क्योंकि इतनी गहराई पर विद्यमान उच्च तापमान जड़ के पदार्थों को पिघला देगा।

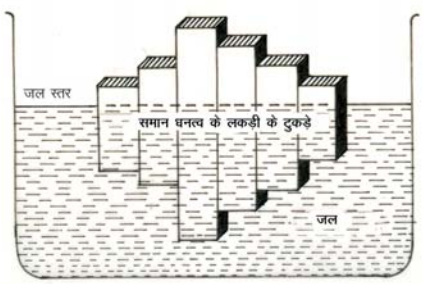

चित्र 3.1 (क) एअरी के भूसंतुलन के विचार का चित्र

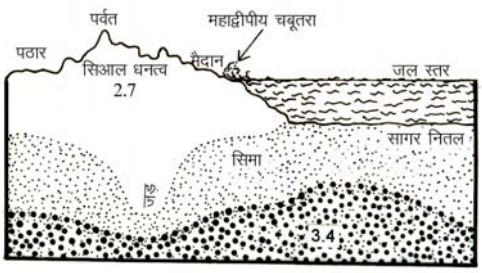

चित्र 3.1 (ख) भूसंतुलन की स्थिति (ए. होम्स व डी.एल. होम्स पर आधारित)

(ख) भू-सन्तुलन : प्रैट के विचार

प्रैट ने विभिन्न ऊँचाईयों के भूभागों को भिन्न–भिन्न घनत्व का माना है। ऊँचे भूभागों का घनत्व कम है, जबकि कम ऊँचाई वाले भूभागों का अधिक। दूसरे शब्दों में ऊँचाई और घनत्व में विपरीत सम्बन्ध है। अगर कोई ऊँचा स्तम्भ है तो उसका घनत्व कम होगा और अगर कोई स्तम्भ छोटा है तो उसका घनत्व अधिक होगा। इसको सही मानते हुए उन्होंने स्वीकार किया कि, विभिन्न ऊँचाईयों के सभी स्तम्भों की क्षतिपूर्ति अधः स्तर की एक निश्चित गहराई पर हो जाती है। इस प्रकार से एक सीमारेखा खींच दी जाती है, जिसके ऊपर विभिन्न ऊँचाईयों का समान दवाब पड़ता है। अतः उसने

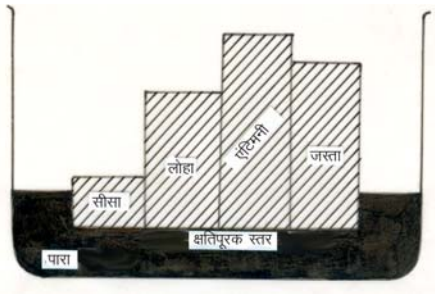

चित्र 3.2 (क) भूसंतुलन पर प्रैट के विचार का प्रयोग

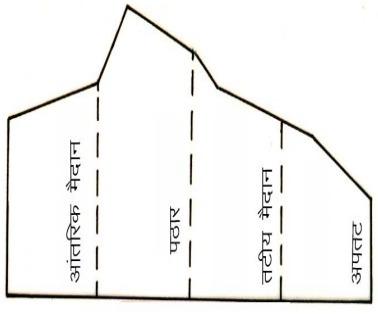

चित्र 3.2 (ख) स्थलमण्डलीय टुकड़ों की क्षतिपूर्ति का चित्र

टिप्पणी

एअरी के आधार या जड़ अवधारणा को खारिज कर दिया और क्षतिपूरक स्तर की अवधारणा को स्वीकार किया। उसने अपनी अवधारणा को सिद्ध करने के लिए समान भार वाली भिन्न–भिन्न घनत्व की कुछ धातु की छड़ें ली और उन्हें पारे में डाल दिया। (चित्र 3.2)। इस प्रकार से, इन छड़ों के द्वारा उन्होंने एक रेखा बना दी, जिसे उन्होंने क्षतिपूरक स्तर माना।

एअरी और प्रैट के विचारों में अन्तर

एअरी और प्रैट के विचारों की भिन्नता को एक सारणी के रूप में रखकर अधिक स्पष्ट किया जा सकता है।

	एअरी के विचार	प्रैट के विचार
1.	भूपर्पटी के पदार्थों में एक समान घनत्व।	भूपर्पटी के पदार्थों के घनत्व में भिन्नता।
2.	भिन्न–भिन्न गहराई, जिस तक जड़ पहुँचती है।	एक समान गहराई, जिस तक भूपर्पटी का पदार्थ पहुँचता है।
3.	पर्वतों के नीचे गहरी जड़ और मैदानों के नीचे छोटी जड़। (चित्र 3.1)	किसी प्रकार की जड़ नहीं परन्तु क्षतिपूरक स्तर का होना। (चित्र 3.2)

(ग) भूमंडलीय भू-संतुलन सामंजस्य

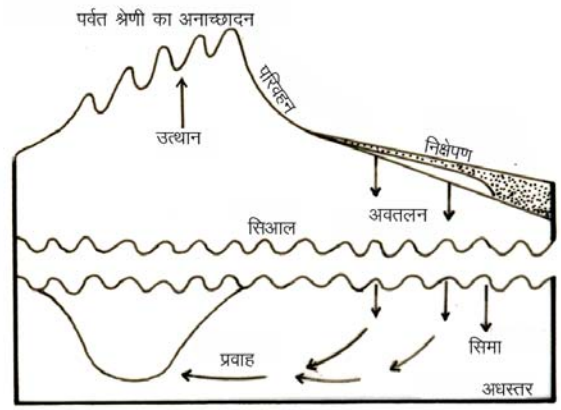

चित्र 3.3 भूमंडलीय संतुलन के सामंजस्य का रचना तंत्र

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि, पृथ्वी पर पूर्ण भूसंतुलन नहीं है। पृथ्वी अस्थिर है। आन्तरिक शक्तियाँ अक्सर भूपर्पटी के संतुलन को भंग कर देती हैं। एक निश्चित पेटी में नियमित भूकम्प और ज्वालामुखी उद्भेदन असंतुलन को दर्शाते हैं, इसलिए लगातार एक प्रकार के सामंजस्य की आवश्यकता बनी रहती है। आंतरिक शक्तियाँ और उनके विवर्तनिक प्रभाव धरातल पर असंतुलन के कारण हैं परन्तु प्रकृति हमेशा समस्थितिक सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न करती है। वाह्य शक्तियाँ पृथ्वी के धरातल पर आए अन्तरों

को दूर करने का प्रयत्न करती हैं और इस प्रक्रिया में वे ऊँचे भूभागों से पदार्थों को खुरचकर बहुत दूर ले जाकर निचले भागों में निक्षेपित कर देती हैं। इस प्रक्रिया में निक्षेपण के स्थान पर धंसाव द्वारा नीचे के पदार्थों के प्रवाह के कारण एवं खुरचने के स्थान पर अनाच्छादन के अनुपात में उत्थान द्वारा भूमंडलीय संतुलन बना रहता है। (चित्र 3.3)

पाठगत प्रश्न 3.1

रिक्त स्थान भरिए :

1. भूमंडलीय संतुलन का अर्थ है _____।
2. एअरी ने विभिन्न स्तम्भों के घनत्व को _____ माना।
3. प्रैट ने विभिन्न ऊँचाईयों के भू भागों को उनके _____ के सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न माना।
4. एअरी के अनुसार पर्वतों के नीचे _____ जड़ है, जबकि मैदानों के नीचे _____।
5. प्रैट ने जड़ अवधारणा को _____ बल्कि क्षतिपूरक _____ को माना।
6. आंतरिक शक्तियाँ अक्सर भूपर्पटी के संतुलन को _____ देती हैं।
7. एक निश्चित पेटी में नियमित भूकम्प और ज्वालामुखी उद्भेदन _____को दर्शाते है इसलिए लगातार एक _____ की आवश्यकता होती है।

3.2 महाद्वीपीय विस्थापन

अल्फ्रेड वेगनर के अनुसार 28 करोड़ वर्ष पूर्व पृथ्वी का समस्त भूभाग एक साथ जुड़ा हुआ था। इस सुविशाल महाद्वीप को उन्होंने **पैंजिया** नाम दिया। इस अकेले महाद्वीप के चारों ओर एक विराट महासागर था, जिसका नाम **पैंथालासा था**। 28 से 15 करोड़ वर्ष पूर्व यह अक्षांशीय रूप से उत्तरी तथा दक्षिणी भागों में टूट गया जिन्हें क्रमशः लॉरेसिया (अंगारालैंड) तथा गोंडवानालैंड के रूप में जाना गया। दोनों एक दूसरे से अलग हटते गए तथा इनके बीच पैंथालासा द्वारा पानी भरने से एक उथला समुद्र पैदा हो गया, जिसे टैथीज सागर के नाम से जाना गया। बाद में लॉरेसिया और गोंडवानालैंड एक दूसरे से अलग हटते गए और अंतः इन्होंने एक दूसरे से दूर हटकर पृथ्वी पर भूभाग और जल के वर्तमान रूप को धारण कर लिया। (चित्र 3.4)

टिप्पणी

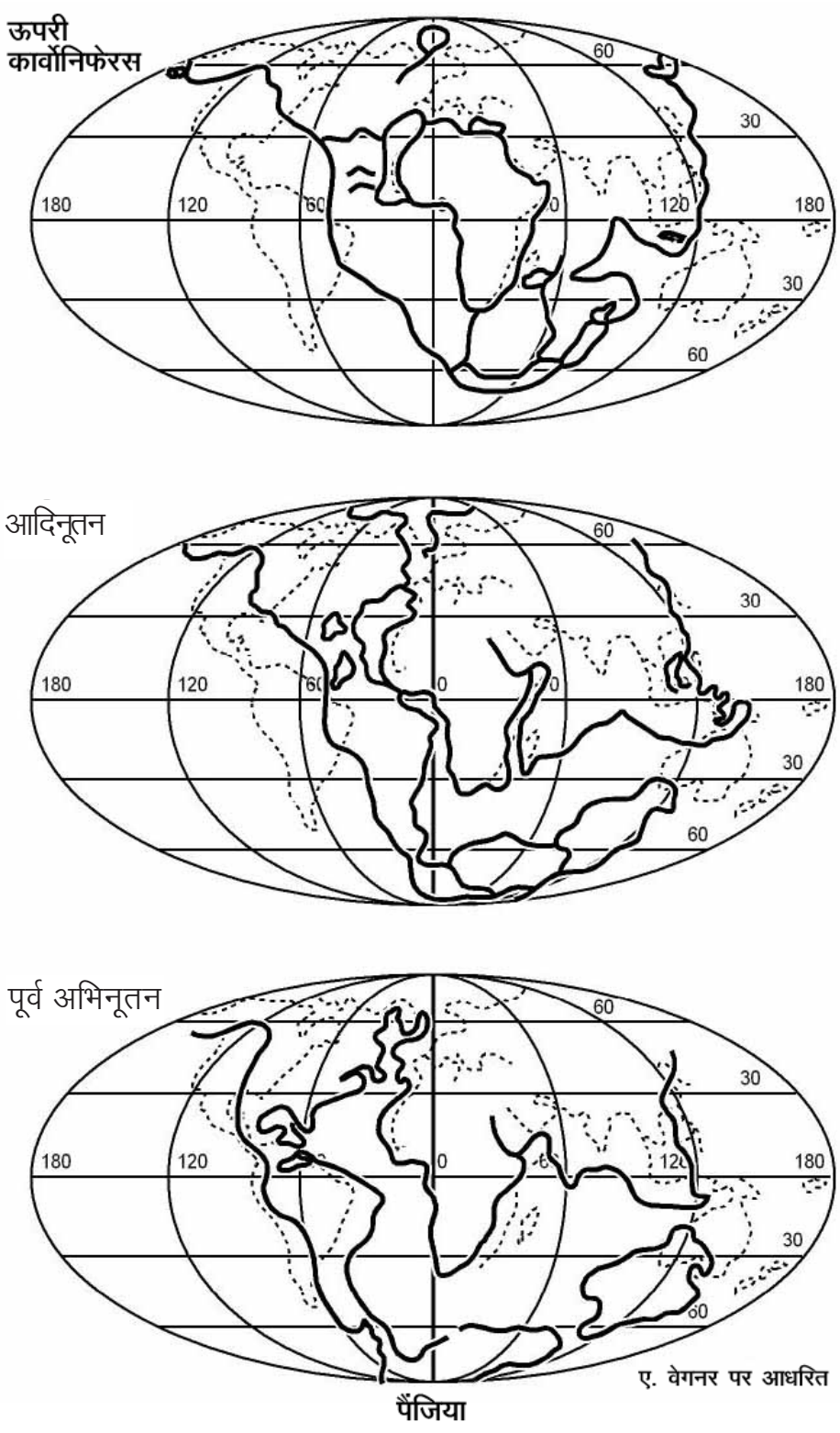

चित्र 3.4 पैंजिया

टिप्पणी

विस्थापन के प्रमाण

वेगनर ने भूगर्भीय भूतकाल में भूभाग के एक होने के पक्ष में कई प्रमाण दिए। ये प्रमाण ऐसे हैं जिन्हें आज भी नकारा नहीं जा सकता है।

(क) जिग-सॉ-फिट – दक्षिणी अमेरिका का पूर्वी तट अफ्रीका के पश्चिमी तट के समान है, जो समुद्र में कुछ गहराई तक जाकर इस के अनुरूप हो जाता है। कुछ सीमा तक तटीय क्षेत्र और महासागरीय निमग्न तट समुद्री लहरों द्वारा बदल दिए गए हैं।

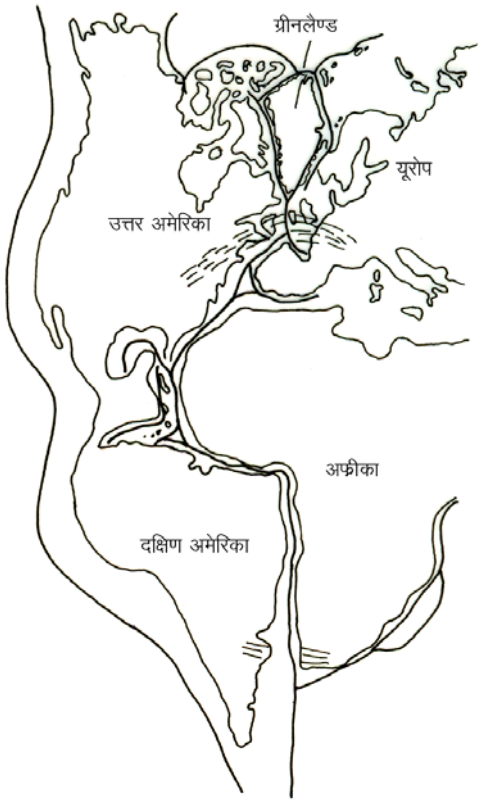

चित्र 3.5 महाद्वीपीय विस्थापन का वैगनर का मानचित्र
(अटलांटिक महासागर के सीमावर्ती महाद्वीपों का एक दूसरे के अनुरूप होना)

(ख) भूगर्भीय समानताएँ :- दक्षिणी अमेरिका और अफ्रीका में दक्षिणी अटलांटिक तट के पर्वत तंत्रों के दोनों महाद्वीपों में विस्तार की समानता है।

(ग) कोयला और वनस्पति सम्बन्धी प्रमाण - दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका, भारत और आस्ट्रेलिया में कोयले और वनस्पति का वितरण यह सिद्ध करता है कि, भूवैज्ञानिक काल में ये एक साथ जुड़े हुए थे। इन भूभागों पर कार्बोनीफेरस काल में उच्च स्तरीय हिमनदीय निक्षेप एक दूसरे से मेल खाते हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि ये एक समय एक साथ थे। आज ये विभिन्न जलवायविक क्षेत्रों में है।

टिप्पणी

वेगनर द्वारा दिए गए उक्त प्रमाणों के अतिरिक्त अन्य प्रमाण (जिनका बाद में पता चला) भी महाद्वीपीय विस्थापन को प्रमाणित करते हैं।

(घ) पुराचुम्बकत्व के प्रमाण – पुराचुम्बकत्व विभिन्न युगों में, ध्रुव की दिशा का अध्ययन है। चुम्बक से प्रभावित होने वाले खनिज जैसे हेमेटाइट, पाइरोटाइट, मेग्नेटाइट आदि पृथ्वी के चुम्बकीय ध्रुव की सीध में होते हैं और उस समय मैग्मा के घनीभवन में दर्ज हो जाते हैं। यह पता चला है कि, इसमें समय–समय पर परिवर्तन हुए और ध्रुवों की स्थिति बदलती रही, किंतु यह परिवर्तन संपूर्ण पृथ्वी के लिए संभव नहीं था। अतः यह भूखण्डों में परिवर्तन है न कि संपूर्ण पृथ्वी में, जो कि सिद्ध करता है कि, महाद्वीप अपनी स्थिति बदलते रहे हैं।

(ङ) समुद्री अधःस्तल का विस्तारण – मध्य अटलांटिक कटक के सहारे मैग्मा समुद्र की सतह पर आकर ठोस हो जाता है। इससे एक नए क्षेत्र का निर्माण होता है और यह प्रक्रिया लाखों वर्षों से चल रही है। यह महाद्वीपीय खंडों का विचलन कर रहा है जिससे अटलांटिक महासागर का आकार बढ़ रहा है, इसको ही समुद्री अधःस्तल का विस्तारण कहते हैं। यह महाद्वीपों के विस्थापन का अनूठा उदाहरण है। समुद्री अधःस्तल के विस्तारण और पुराचुम्बकत्व के अध्ययन द्वारा महाद्वीपीय विस्थापन के स्पष्टीकरण को ही सामान्य रूप से प्लेट विवर्तनिकी के रूप में जाना जाता है।

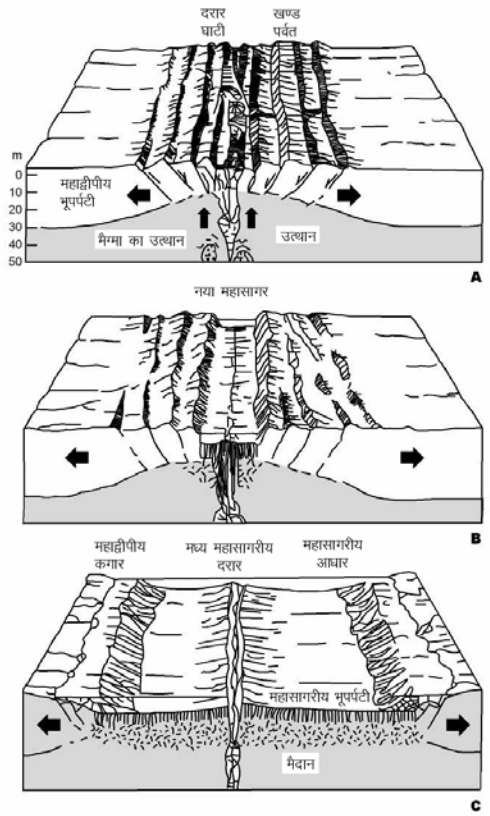

चित्र 3.6 महाद्वीपीय दरारों की अवस्थाएँ और नए अधःस्तलों का बनना

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 3.2

1. रिक्त स्थान भरिए :

   (क) अल्फ्रेड वेगनर ने इस सुविशाल महाद्वीप को _____ नाम दिया था।

   (ख) विराट महासागर _____ के नाम से जाना जाता था।

   (ग) पैंजिया दो भागों में टूट गया। उत्तर में _____ था और दक्षिण में _____ था।

   (घ) उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका _____ की ओर विस्थापित हो गए।

   (ड़) _____ और _____ के बीच टेथीज सागर बन गया, जिसमें _____ का पानी भर गया।

2. वेगनर द्वारा दिए गए महाद्वीपीय विस्थापन के तीन प्रमाण बताइए।

   (क) _____

   (ख) _____

   (ग) _____

3. महाद्वीपीय विस्थापन के उन दो प्रमाणों को बताइए जिन्हें वेगनर ने नहीं बताया था।

   (क) _____

   (ख) _____

3.3 प्लेट विवर्तनिकी

पृथ्वी की बाह्य ठोस और कठोर परत को भू–पृष्ठ कहा जाता है। इसकी मोटाई सब जगह एक समान नहीं है। यह महासागरों के नीचे कहीं केवल 5 किलोमीटर मोटी है परन्तु कुछ पर्वतों के नीचे इसकी मोटाई 70 किलोमीटर तक है। भू पृष्ठ के नीचे सघन शैलें पाई जाती हैं, जिन्हें मेंटल कहते हैं। मेंटल का ऊपरी भाग धरातल से औसतन 100 किलोमीटर की गहराई तक ठोस है। यह ठोस मेंटल तथा ऊपरी भू–पृष्ठ मिलकर तुलनात्मक रूप से एक कठोर खंड का निर्माण करते हैं जिसे स्थलमंडल कहा जाता है। मेंटल 100 से 250 किलोमीटर की गहराई के बीच आंशिक रूप से पिघला हुआ है। इस क्षेत्र को दुर्बलता मण्डल कहते हैं। इसे मोहो असंतति भी कहते हैं, यह भू–कम्पविज्ञानी मोहोरविक का संक्षिप्त नाम है, जिसने इसे खोजा था। इन सब बातों को आप पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं।

स्थलमंडल कई खंडों में विभाजित है। इन खंडों को ही प्लेट कहते हैं। ये प्लेट दुर्बलता मण्डल के ऊपर तैर रहे हैं। सात मुख्य प्लेट हैं। (चित्र 3.7)

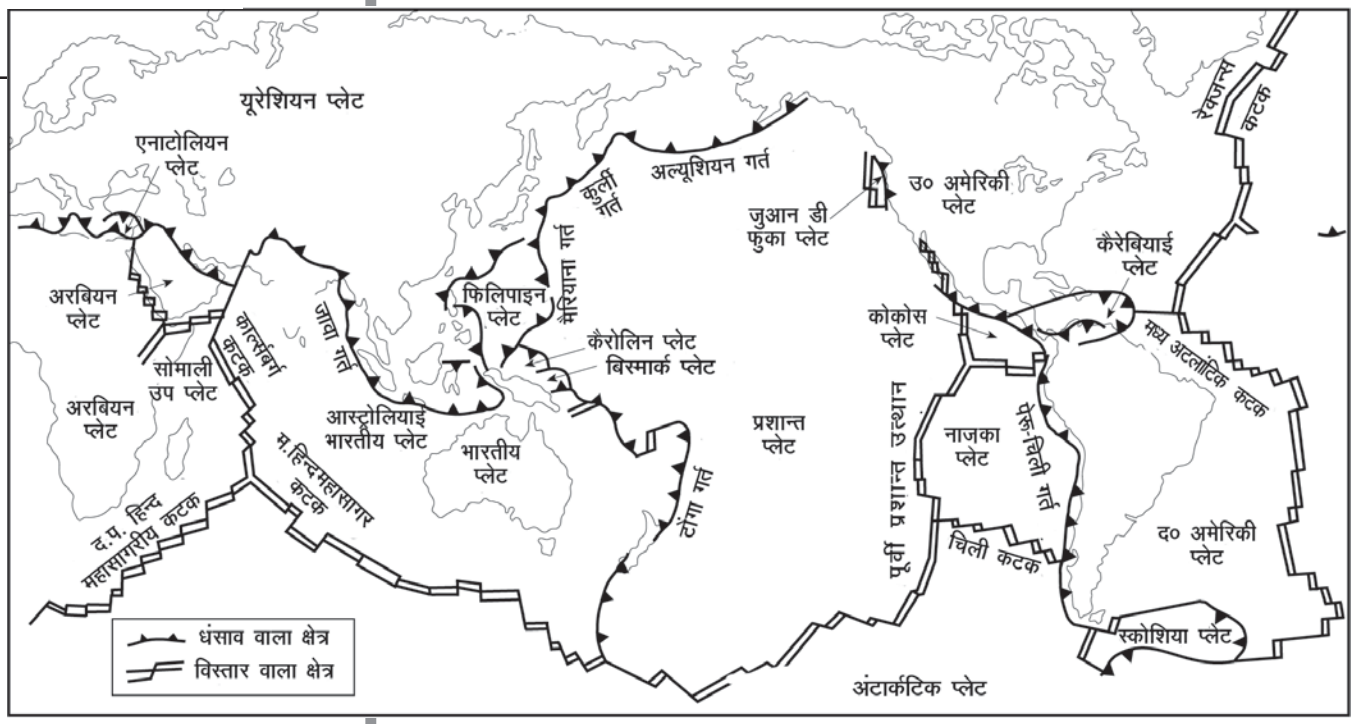

चित्र 3.7 प्लेट विवर्तन, उनके विस्तार के क्षेत्र एवं धंसाव सीमाएँ

1. यूरेशियाई प्लेट
2. अफ्रीकी प्लेट
3. भारत–आस्ट्रेलियाई प्लेट
4. प्रशान्त प्लेट
5. उत्तर अमेरिकी प्लेट
6. दक्षिण अमेरिकी प्लेट
7. अंटार्कटिक प्लेट

इन मुख्य प्लेटों के अतिरिक्त कुछ छोटे–छोटे प्लेट हैं, जिनकी संख्या लगभग 20 है। इनमें से कुछ मुख्य प्लेट इस प्रकार हैं –

अरबी प्लेट, फिलीपीनी प्लेट, कोकोस प्लेट, नाजका प्लेट, कैरिबियन प्लेट, स्कोशिया प्लेट।

मुख्य और छोटे (गौण) प्लेट सम्पूर्ण पृथ्वी के धरातल का निर्माण करते हैं।

प्लेट विवर्तनिकी पृथ्वी पर भूमि और जल के वितरण को समझने का एक तरीका है।

टिप्पणी

विवर्तनिकी, प्लेटों का एक प्रकार से संचलन है। इस संचलन से आंतरिक शक्तियों को समझाया गया है, जो कि भूपृष्ठ के वितरण, पर्वत श्रृंखलाओं के निर्माण और भूकम्प तथा ज्वालामुखी के वितरण के लिए उत्तरदायी हैं।

प्लेट संचलन का रचनातंत्र

एक ब्रिटिश भूवैज्ञानिक आर्थर होम्स ने सन् 1928–1929 में बताया कि स्थलमंडल के नीचे संवहनीय धाराएँ विद्यमान हैं। इन संवहनीय धाराओं का केन्द्र तो ज्ञात नहीं है, परन्तु यह माना जाता है कि, धरातल के नीचे इसकी गहराई लगभग 100 से 250 किलोमीटर है। ये धाराएँ रेडियोधर्मी खनिजों के विखंडन से उत्पन्न ऊर्जा द्वारा संचालित होती हैं। रेडियोधर्मी खनिजों के एकीकरण और विखंडन से जो ऊष्मा उत्पन्न होती है वह आस पास की शैलों को पिघला देती है। इस तरह से संवहनीय धाराएँ चलनी प्रारंभ हो जाती हैं। इन धाराओं को अपसरण और अभिसरण क्रियाओं के साथ क्रमशः आरोही और अवरोही क्रमों में वर्गीकृत किया गया है।

ऊपर उठती हुई संवहनीय धाराओं द्वारा गर्म और चिपचिपा पदार्थ ऊपर की ओर उठने लगता है। धरातल के नीचे लगभग 100 किलोमीटर की गहराई पर पहुँचने के बाद ये धाराएँ मुड़ जाती हैं, जिससे ऊपर की परत फट जाती है। पिघला हुआ पदार्थ टूटे हुए भाग में धंस जाता है और इस प्रकार से एक नए धरातल का जन्म होता है और एक भारी प्लेट विपरीत दिशा में खिसकने लगती है। यह मध्य महासागरीय कटक के नीचे होता है। दूसरी ओर दो जोड़ी अवरोही उष्मीय संवहनीय धाराएँ दो प्लेटों को आपस में जोड़ती हैं, यह आरोही सीमा बनाती है, जहाँ धंसाव की क्रिया होती है। संवहनीय धाराओं के कारण स्थलमंडल की प्लेट लगातार चलायमान रहती हैं।

प्लेट सीमाएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय संरचनात्मक लक्षण हैं। सीमाएँ अत्यन्त सुस्पष्ट और सरलता से पहचानी जाने वाली हैं। ये नवीन पर्वत तंत्रों, महासागरीय कटकों और गर्तों से सम्बन्धित हैं। प्लेट लगातार खिसक रहे हैं और इनके खिसकने की दिशा सापेक्षिक है। प्लेटों के खिसकने की दिशा के आधार पर आसानी से तीन प्रकार की प्लेट सीमाओं की पहचान की जा सकती है। (चित्र 3.8)

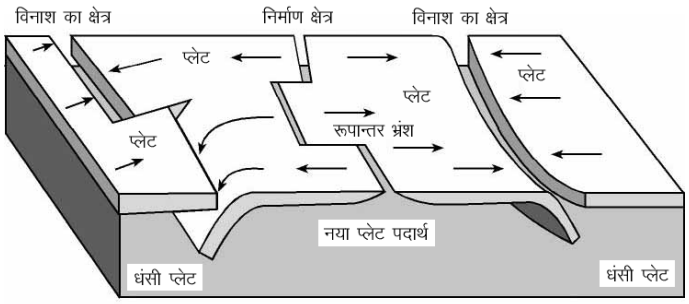

चित्र 3.8 प्लेट सीमाओं के प्रकार

टिप्पणी

1. अपसरण सीमाएँ
2. अभिसरण सीमाएँ
3. रूपान्तर भ्रंश सीमा

संवहनी धाराएँ रेडियोधर्मी पदार्थों से उत्पन्न होती हैं। ये धाराएँ भूपृष्ठ की परत तक पहुँचते ही मुड़ जाती हैं। अपसरित धाराएँ भूपृष्ठ के मिलन क्षेत्र में खिंचाव पैदा करती हैं, जिससे ये टूट जाती हैं। चुम्बकीय पदार्थ इस टूटे हुए भाग में घुसकर ठोस हो जाता है। यह लगातार चलने वाली प्रक्रिया खंडों को विपरीत दिशा में धकेलकर एक नए क्षेत्र का निर्माण करती है, जिसे 'निर्माण क्षेत्र' कहते हैं।

अभिसरण सीमाओं पर नजदीक की दो प्लेटें एक दूसरे के बहुत पास आ जाती हैं और टकरा जाती हैं। जब दोनों खंड महाद्वीपीय प्रकार के होते हैं, तो पर्वतों का निर्माण होता है। जब एक खंड महाद्वीप तथा दूसरा महासागरीय होता है, तब भी इनकी सीमाओं के पास पर्वतों का निर्माण होता है। इसमें महाद्वीपीय प्लेट, महासागरीय प्लेट के ऊपर चढ़ जाती है। जब दोनों खंड महासागरीय होते हैं, तो दोनों टूट कर धंस जाते हैं और नीचे प्रवेश कर जाते हैं, जिससे गर्तों का निर्माण होता है। इस प्रकार की सीमाओं पर भूकम्प और ज्वालामुखी उद्‌भेदन प्रमुख हैं। इन तीनों ही अवस्थाओं में, धरातलीय क्षेत्र कम हो जाता है। इसलिए इसे 'विनाश का क्षेत्र' भी कहते हैं।

रूपान्तर भ्रंश सीमा वह होती है, जहाँ एक–दूसरे के पास स्थित प्लेट एक दूसरे से रगड़ते हुए विपरीत दिशाओं में खिसक जाते हैं। इनके खिसकने की दिशा एक दूसरे के साथ–साथ या विपरीत हो सकती है, परन्तु ये एक दूसरे के समान्तर खिसकते हैं। इसलिए यहाँ न तो नये क्षेत्र का निर्माण होता है और न ही भूपर्पटी नष्ट होती है। इसलिए इसे 'परिरक्षित क्षेत्र' कहते हैं।

प्लेट स्थाई लक्षण नहीं होते, वरन इनका आकार और आकृति बदलती रहती है। प्लेट विभाजित या पास के प्लेट से जुड़ सकती हैं। लगभग सभी विवर्तनिक हलचलें प्लेटों की सीमाओं पर होती हैं। प्लेट विवर्तनिक सिद्धान्त से पहले वेगनर द्वारा प्रतिपादित महाद्वीपीय विस्थापन के सिद्धान्त की आलोचना विशेषरूप से उस ऊर्जा या शक्ति के लिए हुई थी जो महाद्वीपों को विस्थापित करती है। वास्तव में इस सिद्धान्त को स्पष्ट प्रमाणों के होते हुए भी अस्वीकार कर दिया गया था। लेकिन समुद्री सतह के पदार्थों और पुराचुम्बकत्व में किए गए अन्वेषणों ने इस सिद्धान्त का समर्थन किया और 1960 में प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त ने प्लेट संचलन के रचनातंत्र की समस्या को सुलझा दिया।

प्लेट विवर्तनिकी बनाम भूकम्प और ज्वालामुखी

पृथ्वी पर भूकम्प और ज्वालामुखी का वितरण (चित्र 3.9) यह स्पष्ट कर देता है कि ये प्लेटों की सीमाओं से घनिष्टता से जुड़े हुए हैं। प्लेटों की सीमाएँ वे क्षेत्र हैं जहाँ हर प्रकार की विवर्तनिक क्रियाएँ होती हैं। प्लेटों के खिसकने से मुक्त हुई ऊर्जा भूकम्प और ज्वालामुखी के रूप में यहाँ अभिव्यक्त होती है।

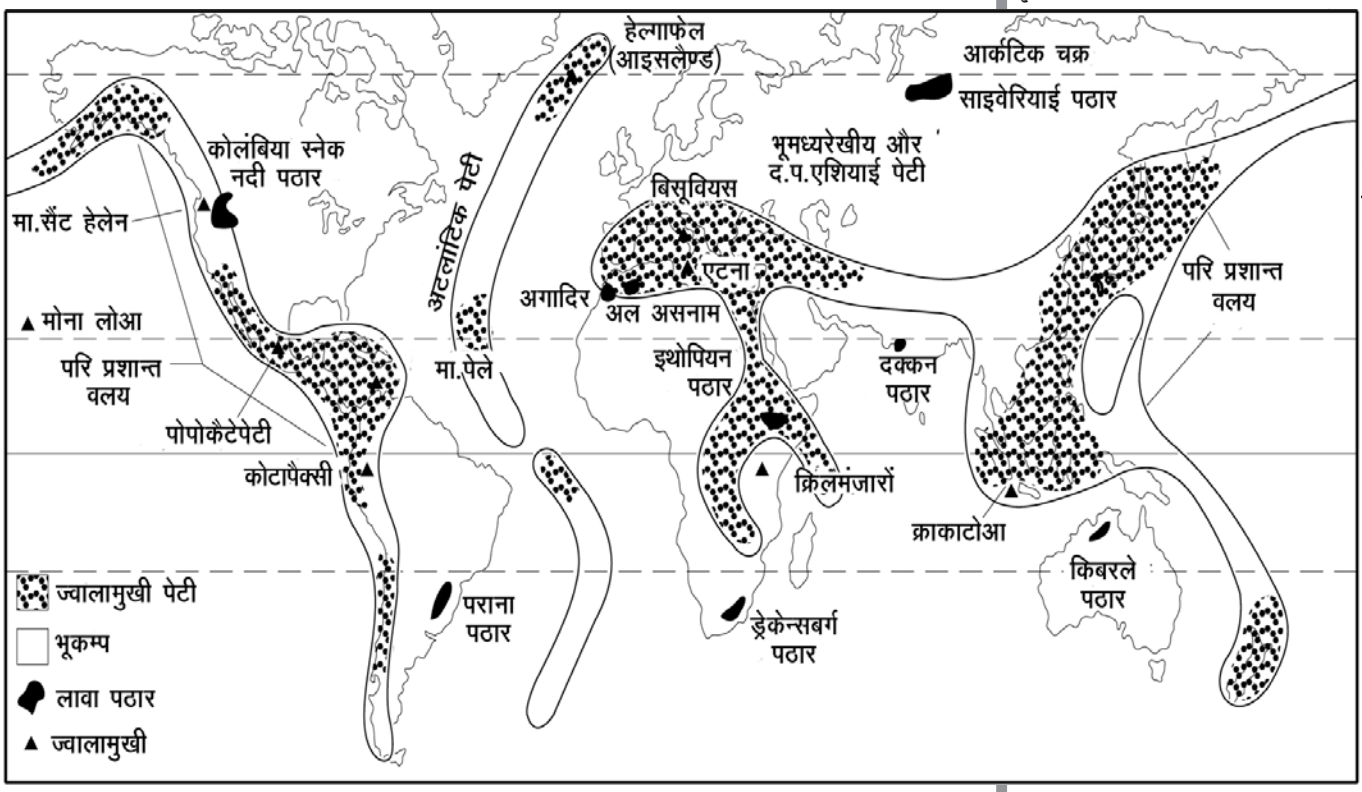

चित्र 3.9 संसार की प्रमुख भूकम्प और ज्वालामुखी पेटियाँ

पाठगत प्रश्न 3.3

1. रिक्त स्थान भरिए –

   (क) पृथ्वी की सबसे ऊपर की _____ परत _____ कहलाती है।

   (ख) भूपर्पटी और मेंटल की _____ तक औसत गहराई _____ है।

   (ग) स्थलमंडल में _____ और _____ सम्मिलित है।

   (घ) विवर्तनिकी एक प्रकार की _____ स्थलमंडलीय प्लेट है।

   (ड़) संवहनीय धाराओं की अवधारणा का प्रतिपादन सबसे पहले सन् _____ में _____ ने किया था।

   (च) संवहनीय धाराओं को _____ और _____ में वर्गीकृत किया जाता है। वे हैं क्रमशः _____ और _____।

   (छ) पट्टों की सीमाएँ _____ और _____ से सम्बन्धित हैं।

2. सात प्रमुख प्लेटों के नाम लिखिए –

   (i) _____ (ii) _____

(iii) _____ (iv) _____

(v) _____ (vi) _____

(vii) _____

3. कुछ कम महत्वपूर्ण छोटी प्लेटों के नाम लिखिए –

(i) _____ (ii) _____

(iii) _____ (iv) _____

(v) _____ (vi) _____

(vii) _____

4. प्लेटों की सीमाओं के विभिन्न प्रकार बताइए –

(i) _____

(iii) _____

(iii) _____

आपने क्या सीखा

पृथ्वी का धरातल गतिशील है। यह गतिशीलता धरातल के नीचे क्रियाशील शक्तियों (आंतरिक शक्तियाँ) तथा धरातलीय/वायुमण्डलीय शक्तियों (बाह्य शक्तियों) के कारण है। यह पृथ्वी पर हो रहा है जबकि पृथ्वी घूर्णन और परिक्रमण कर रही है। धरातल असमतल है। अतः एक प्रकार का गतिशील साम्य हमेशा बना रहता है, जिसे भूमंडलीय संतुलन कहा जाता है। बहुत से विद्वानों के विचारों के बाद एअरी और प्रैट के विचार अधिक स्पष्ट हैं। एअरी ने सभी शैलों के समान घनत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने कहा कि सभी स्तंभों के अनुसार उनकी जड़ें होंगी। विशाल और ऊँचे पर्वतों की जड़ें भी नीचे बहुत बड़ी होंगी, जबकि पठार और मैदान जैसे निचले भागों की जड़ें छोटी होंगी। प्रैट ने माना कि पृथ्वी पर पाई जाने वाली विभिन्न शैलों का घनत्व अलग–अलग होगा। एक निश्चित गइराई पर विभिन्न ऊँचाई और भार वाले स्तंभों की क्षतिपूर्ति हो जायेगी। अतः अधिक ऊँचाई वाली राशि का घनत्व कम होगा, जबकि कम ऊँचाई वाली राशि का घनत्व अधिक होगा। अतः दोनों ही भूमंडलीय संतुलन की समस्या का समाधान कर रहे हैं; लेकिन विभिन्न परिप्रेक्ष्य में।

पृथ्वी पर भूमि और जल का वितरण स्थाई नहीं है। यह बदल गया है, बदल रहा है और भविष्य में भी बदलेगा। यह परिवर्तित स्थिति वेगनर द्वारा प्रतिपादित महाद्वीपीय विस्थापन में अपरिष्कृत रूप में कही गई, परन्तु जिस रचनातंत्र की उन्होंने व्याख्या की, वह

टिप्पणी

वैज्ञानिक नहीं था। अतः इस सिद्धान्त को शक्तिशाली साक्ष्यों के होते हुए भी अस्वीकार कर दिया गया।

होम्स द्वारा प्रतिपादित संवहनीय धाराओं और प्लेट विवर्तनिक सिद्धान्त ने पृथ्वी के धरातल को समझने के लिए एक नई दृष्टि प्रदान की। पुराचुम्बकत्व और महासागरीय विस्तारण के अध्ययन ने प्लेट विवर्तनिक सिद्धान्त का समर्थन किया है। इस सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी का धरातल सैंकड़ों टूटे हुए खंडों, जो कि बहुत विशाल और भारी है, से बना है। इन खंड़ों को ही प्लेट कहा गया है। ये सात बड़ी और सात छोटे आकार की प्लेट हैं। संवहनीय धाराओं के सिद्धान्त अनुसार इनमें संचलन तीन संभावित रूपों में होता है। प्रथम, दो पास की प्लेट एक दूसरे से दूर खिसक रही हों (अपसरण) और जहाँ एक नए क्षेत्र का निर्माण हो रहा है। द्वितीय, जब दो प्लेट आपस में मिल रही हों (अभिसरण) और धंसाव हो जिससे एक क्षेत्र नष्ट हो रहा हो। तृतीय, जब दो प्लेट एक दूसरे के पास से खिसक रहे हों (रूपान्तर भ्रंश), जहाँ पर दोनों के सीमांत परिरक्षित हो रहे हों। इन विभिन्न विवर्तनिक क्रियाओं के कारण भूकम्प और ज्वालामुखी प्लेट सीमाओं से सम्बन्धित हैं।

पाठांत प्रश्न

1. भूसंतुलन क्या है?
2. एअरी के अनुसार भूसंतुलन की अवधारणा की व्याख्या कीजिए।
3. प्रैट द्वारा प्रतिपादित पृथ्वी के भूसंतुलन की व्याख्या कीजिए।
4. एअरी और प्रैट के विचारों में अन्तर बताइए।
5. वैश्विक स्तर पर भूमंडलीय संतुलन की चर्चा कीजिए।
6. महाद्वीपीय विस्थापन के प्रमाणों की चर्चा कीजिए।
7. प्लेट क्या हैं? प्लेट संचलन के रचनातंत्र की व्याख्या कीजिए।
8. प्लेट सीमान्तों पर होने वाली क्रियाओं की चर्चा कीजिए।
9. भूकम्प और ज्वालामुखी के वितरण का प्लेट सीमाओं के संदर्भ में वर्णन कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1 1. संतुलन की स्थिति

2. एक समान

3. घनत्व

टिप्पणी

4. गहरी, कम गहरी
5. नहीं, स्तर
6. बिगाड़
7. असंतुलन, सामंजस्य

3.2 1. (क) पैंजिया, (ख) पैंथालासा, (ग) लॉरेसिया (अंगारालैंड), गोंडवानालैंड, (घ) पश्चिम, (ड़) अंगारालैंड, गोंडवानालैंड, पैंथालासा

2. (क) जिग–सॉ–फिट (ख) भूगर्भीय समानताएँ (ग) कोयले की समानताएँ
3. (क) पुराचुम्बकत्व के प्रमाण (ख) समुद्री अधःस्तल का विस्तारण

3.3

1. (क) ठोस और कठोर, प्लेट (ख) 100 किमी., ठोस (ग) ऊपरी ठोस मेंटल, भूपर्पटी (घ) संचलन (ङ) आर्थर होम्स, 1928–1929 (च) ऊपर उठता, गिरता, आरोही अवरोही (छ) नए बने पर्वत तंत्र, महासागरीय कटक, गर्त
2. (क) यूरेशियाई प्लेट (ख) अफ्रीकी प्लेट (ग) भारतीय–आस्ट्रेलियाई प्लेट (घ) प्रशान्त प्लेट (ड़) उत्तर अमेरिकी प्लेट (च) द. अमेरिकी प्लेट (घ) अंटार्कटिक प्लेट
3. (क) अरबी प्लेट (ख) फिलीपीनी प्लेट (ग) कोकोस प्लेट (घ) नाजका प्लेट (ङ) कैरीबियाई प्लेट (च) स्कोशिया प्लेट
4. (क) अपसरण सीमाएँ

   (ख) अभिसरण सीमाएँ

   (ग) रूपान्तर भ्रंश सीमा

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. कृपया पैरा 3.1 देखिए
2. कृपया पैरा 3.1 का (क) देखिए
3. कृपया पैरा 3.1 का (ख) देखिए
4. कृपया पैरा 3.1 का (ग) देखिए
5. कृपया पैरा 3.2 देखिए
6. कृपया पैरा 3.1 का 'विस्थापन के प्रमाण' देखिए
7. कृपया पैरा 3.3 देखिए
8. कृपया पैरा 3.3 देखिए
9. कृपया पैरा 3.3 देखिए

टिप्पणी

4

पृथ्वी के आंतरिक बलों के परिणामस्वरूप भूआकृतियों का विकास

पृथ्वी अस्थिर है। इसका धरातल असमतल है। पृथ्वी का असमतल धरातल, हमारा वासस्थल है। पृथ्वी पर विविध प्रकार की भू आकृतियाँ – पर्वत, पठार, पहाड़ियाँ, मैदान, कटक तथा उत्खात भूमियाँ दिखाई देती हैं। हमें भू पृष्ठ पर झुके हुए, मुड़े तथा टूटे हुए शैल संस्तर भी देखने को मिलते हैं, जो अपने मूल रूप में समानांतर रूपों में बिछे थे। विभिन्न प्रकार की शैलों, उनके बनने की प्रक्रिया व विशेषताओं के बारे में आप पढ़ चुके हैं। शैलों का भू आकृतियों के आकार से गहरा संबंध है। लेकिन पृथ्वी के स्वरूप की समस्त आकृतियाँ इसकी आंतरिक व वाह्य शक्तियों की सतत प्रक्रिया का परिणाम है। इस पाठ में हम पृथ्वी की आंतरिक शक्तियों के विषय में अध्ययन करेंगे और देखेंगे कि पृथ्वी के धरातल पर वे क्या परिवर्तन करती हैं।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- आंतरिक बलों तथा उनके द्वारा निर्मित भू आकृतियों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- मंद एवं आकस्मिक हलचलों में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- ऊर्ध्वाधर एवं समानांतर हलचलों में अंतर बता सकेंगे;
- वलन तथा भ्रंशन में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- ज्वालामुखी प्रक्रिया के होने के कारण बता सकेंगें;
- विभिन्न प्रकार के ज्वालामुखियों का वर्णन कर सकेंगे;
- संसार के रेखा मानचित्र में प्रमुख ज्वालामुखियों तथा भूकम्प प्रभावित क्षेत्रों की स्थिति दिखा सकेंगे;
- भूकम्प के कारणों व उनके प्रभाव को स्पष्ट कर सकेंगे।

टिप्पणी

4.1 आंतरिक बल

पृथ्वी पर भू आकृतियों की विविधता उसके धरातल के अंदर और बाहर साथ–साथ कार्य करने वाली दो प्रकार की शक्तियों का अंतिम परिणाम है। भूपृष्ठ के अंदर पैदा होने वाली इन शक्तियों को आंतरिक या अन्तर्जात बल कहते हैं। इन बलों की ऊर्जा के स्रोत पृथ्वी की आंतरिक गर्मी तथा पृथ्वी के धरातल पर बाह्य बलों द्वारा शैल पदार्थों का स्थानांतरण है।

4.2 पृथ्वी की हलचलें

सामान्यता हम लोगों को यह कहते हुए सुनते हैं कि पृथ्वी ''शैल की तरह ठोस'' तथा स्थिर है; लेकिन यह सत्य नहीं है। न तो पृथ्वी स्थिर है और न ही शैल जिनमें पृथ्वी की बाह्य परत बनी है, इतनी ठोस है। पृथ्वी की उत्पति से लेकर आज तक महाद्वीपों और महासागरों के स्थलीय व जलीय भागों के वितरण में भारी परिवर्तन होते रहे हैं। पृथ्वी पर असंख्य भू हलचलें हुई हैं, जिनके परिणामस्वरूप इसके धरातल पर भारी परिवर्तन हुए हैं। मुंबई पोताश्रय में वनीय भाग का धंसना, महावलीपुरम् मंदिर का समुद्री जल में होना तथा कच्छ के रन की भूमि के स्तर में हुए परिवर्तन भारत में घटने वाली इन हलचलों के कुछ उदाहरण हैं।

पृथ्वी के आंतरिक भागों में क्रियाशील इन बलों के परिणामस्वरूप इनकी बाह्य परत में हलचलें पैदा होती हैं। इन हलचलों को पृथ्वी की हलचलें कहते हैं। चूंकि ये हलचलें पृथ्वी की बाह्य परत की वास्तविक बनावट में हुए परिवर्तनों से संबंधित होती हैं या पैदा होती हैं, अतः इन्हें विवर्तनिक हलचलें भी कहते हैं। टैक्टोनिक शब्द ग्रीक भाषा के टैक्टोन शब्द से बना है जिसका अर्थ है बनाने वाला। यह शब्द अपने में पूर्ण सार्थक है; क्योंकि पृथ्वी की ये हलचलें वास्तव में निर्माणकारी हैं। इनके द्वारा ही पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार की भू आकृतियों का निर्माण हुआ है।

चित्र 4.1 (क) तथा 4.1 (ख) से स्पष्ट है कि भारत का स्वरूप 6 करोड़ वर्ष पूर्व पूरी तरह भिन्न था। आज जहाँ हिमालय पर्वत श्रेणियां एवं गंगा–सिंधु का मैदान है वहां ''टैथीस'' नामक सागर था। टैथीस सागर निकटवर्ती स्थल प्रदेशों से बहने वाली नदियों द्वारा लाये गये पदार्थों के क्रमिक निक्षेपण से भर गया। बाद में टैथीस सागर के तल में बनी अवसादी शैलों से हुए क्रमिक उत्थान से उत्तर में हिमालय तथा उसके दक्षिण में गंगा–सिंधु मैदान का निर्माण हुआ।

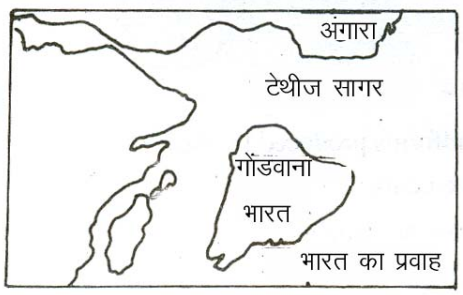

चित्र 4.1(क) 6 करोड़ वर्ष पूर्व का भारत का

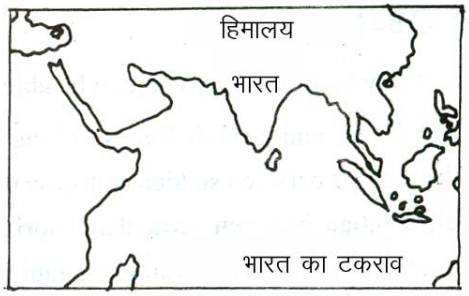

चित्र 4.2 (ख) वर्तमान मानचित्र

टिप्पणी

भारत के मालवा पठार व दक्कन ट्रेप, उत्तरी अमेरिका में कोलम्बिया तथा स्नेक नदी के पठार, आस्ट्रेलिया में किम्बरले पठार, दक्षिण अमेरिका में पराना तथा पेंटागोनिया पठारों का निर्माण भी विभिन्न भूगर्भिक कालों में पृथ्वी के आंतरिक भागों से निकले पिघले लावा के ठोस होने के परिणामस्वरूप हुआ है। इन उदाहरणों से यह पूरी तरह स्पष्ट है कि हमारी पृथ्वी का धरातल कभी भी ऐसा नहीं रहा जैसा कि वह आज है और न ही यह भविष्य में ऐसा रहेगा।

- वे हलचलें जो पृथ्वी के आंतरिक या अन्तर्जात बलों द्वारा पैदा होकर भूपर्पटी को प्रभावित करती है, पृथ्वी की **हलचलें** कहलाती हैं।
- पृथ्वी की हलचलों को विवर्तनिक हलचलें भी कहते हैं; क्योंकि वे पृथ्वी के धरातल पर क्रमिक परिवर्तनों द्वारा भौतिक लक्षणों का निर्माण करती हैं।

4.3 पृथ्वी की हलचलों का वर्गीकरण

पृथ्वी की हलचलों को समय के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया जाता है। (क) मन्द हलचलें तथा (ख) आकस्मिक हलचलें।

(क) **मन्द हलचलें** - भूपर्पटी पर कुछ परिवर्तन इतने क्रमिक और मंद होते हैं कि उनमें परिवर्तन सैंकड़ों या हजारों वर्षों के बाद देखने को मिलता है। ऐसी हलचलें जिनका समय मानव जीवन से भी अधिक लंबा होता है, **मंद हलचलें** कहलाती हैं। ये हलचलें भूपर्पटी पर ऊर्ध्वाधर अथवा क्षैतिज रूप में होती है। ऊर्ध्वाधर हलचलें भूपर्पटी में धंसाव या उभार पैदा करती हैं। भारत के काठियावाड़ तट पर उठे हुए समुद्री तटों में पाये गये समुद्री जीवों के अवशेषों से यह स्पष्ट होता है कि यह तट कभी समुद्री जल के नीचे था। इसी प्रकार के उठे हुए समुद्री तट भारत के पूर्वी तट के साथ उड़ीसा, आंध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु में भी पाये जाते हैं। ये तट समुद्री जल स्तर से 15 से 30 मीटर तक ऊपर उठा दिये गये हैं। दूसरी ओर भूपृष्ठ के धंसाव के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं जैसे सुन्दर वन के डेल्टा में पीट व लिगनाइट संस्तरों की उपस्थिति, तमिलनाडु के तिरुनलवेली में तथा मुंबई द्वीप के पूर्वी तट पर वनों का समुद्र में डूब जाना।

(ख) **आकस्मिक हलचलें** - मन्द हलचलों के विपरीत कुछ हलचलें ऐसी होती है जो भूपर्पटी में शीघ्र परिवर्तन ला देती हैं। ज्वालामुखी तथा भूकम्प ऐसी हलचलों के उदाहरण हैं। इन दो घटनाओं द्वारा परिवर्तन इतने आकस्मिक होते हैं कि नदियों के मार्ग बदल जाते हैं तथा लावा के बहने एवं जमने से पर्वत, उठे भू भाग व पठारों का निर्माण कुछ ही दिनों में हो जाता है। इन हलचलों के परिणामस्वरूप पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन हो जाते हैं।

- **आकस्मिक हलचलें** भूपर्पटी में तत्काल परिवर्तन लाती हैं।
- ज्वालामुखी तथा भूकम्प आकस्मिक हलचलों के परिणाम हैं।

टिप्पणी

- वे हलचलें जो धीमी गति से क्रमिक परिवर्तन लम्बे समय में लाते हैं, उन्हें **मन्द हलचलें** कहते हैं।
- भूपर्पटी में उभार, धंसाव व जल में डूबने की क्रियायें मंद हलचलों के कारण होती हैं।

पाठगत प्रश्न 4.1

1. आंतरिक बलों के लिए भौगोलिक शब्द दीजिए।

   _____

2. पृथ्वी की हलचल किसे कहते हैं ?

   _____

4.4 ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज हलचलें

मंद हलचलों को पृथ्वी के धरातल के किसी भाग के ऊपर उठने या धंसने के आधार पर पुनः ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज हलचलों में विभाजित किया जा सकता है।

(क) **ऊर्ध्वाधर हलचलें :** ऊर्ध्वाधर हलचलें धरातल को पृथ्वी के केन्द्र से उत्पन्न होती है और इसके धरातल को प्रभावित करती हैं। इसलिए इन गतियों के कारण बड़े पैमाने पर धरातल के भूभाग ऊपर उठ जाते हैं अथवा नीचे धंस जाते हैं। ये गतियाँ प्रायः इतनी मंद और विस्तृत होती हैं कि पृथ्वी के क्षैतिज शैल संस्तरों के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं होता। ये गतियाँ मुख्य रूप से महाद्वीपों तथा पठारों के निर्माण से संबंधित होती हैं, अतः इन्हें **महाद्वीप निर्माणकारी** अथवा **पठार निर्माणकारी** हलचलें भी कहते हैं। पिछले पाठ में आप शैलों के बारे में पढ़ चुके हैं कि अवसादी शैल महासागरों व समुद्रों में लाये गये पदार्थों के जमाव से निर्मित होते हैं। ये शैलें महाद्वीपों पर विस्तृत रूप में पायी जाती हैं। इस तथ्य से यह पूर्णतः स्पष्ट होता है कि इन शैलों के ऊपर उठने से महाद्वीपों का निर्माण हुआ है। ऊपर के वर्णन के विपरीत, ऐसे असंख्य उदाहरण दिये जा सकते है जिनमें भवन, नदी घाटियाँ तथा शहर समुद्रों में भूमि के धसने से डूब गये हैं। भूमध्यसागर के क्रेट द्वीप में बने प्राचीन भवन तथा भारत के सौराष्ट्र का प्रसिद्ध प्राचीन नगर द्वारिका समुद्र में डूबे इस प्रकार के कुछ उदाहरण हैं। ये परिवर्तन पृथ्वी के धरातल के नीचे धसने की गति को पूर्णतः स्पष्ट करते हैं।

- बड़े पैमाने पर धरातल के ऊपर उठाने या धंसने से महाद्वीपों, पठारों तथा महासागरों का निर्माण होता है।
- ऊर्ध्वाधर हलचलों को महाद्वीप निर्माणकारी हलचलें भी कहते हैं।

टिप्पणी

(ख) क्षैतिज हलचलें - कभी–कभी आंतरिक बल भूपर्पटी पर एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर अथवा दोनों दिशाओं से प्रभाव डालते हैं। इस कारण भूपृष्ठ के क्षैतिज शैलों संस्तरों में अत्याधिक परिवर्तन आ जाता हैं इन बलों के कारण पूर्व स्थापित शैल संस्तरों में दबाव व खिंचाव पैदा होता है। ऐसा इसलिए भी होता है क्योंकि ये बल गोलाकार पृथ्वी के संस्तरों में क्षैतिज अथवा स्पर्श रेखा की दिशा में प्रभावी होते हैं। अतः इनको क्षैतिज हलचलों के नाम से जाना जाता है।

इन्हें हम दो भागों में बॉट सकते हैं :

(i) सम्पीड़न बल

(ii) तनाव बल

(i) सम्पीड़न बल वे हैं जो शैल संस्तरों को एक कठोर तल की दिशा में खिसकाते हैं अथवा दोनों दिशाओं से दबाव डालते हैं। उनकी क्रिया को समझने के लिए आप एक कपड़े का टुकड़ा लें और उसे मेज पर फैला लें। इस कपड़े को अपने दोनों हाथों से उसके बीच की ओर दबाव डालें तो कपड़े पर ऊपर नीचे मोड़ पड़ जायेंगे। शैल संस्तर भी कपड़े की भांति मुड़ जाते हैं। इस प्रकार सम्पीड़न बल शैल संस्तरों में मोड़ डाल देते हैं जिनके परिणाम स्वरूप वलित पर्वतों का निर्माण होता है जिनमें अवसादी शैलें लहरों की भांति मुड़ जाती हैं। इस प्रकार शैलों के मुड़ने की प्रकिया को **वलन** कहते हैं। ऊपर की ओर उठे हुए मोड़ को **अपनति** तथा नीचे की ओर पड़े हुए मोड़ को **अभिनति** कहते हैं। (चित्र 4.2)

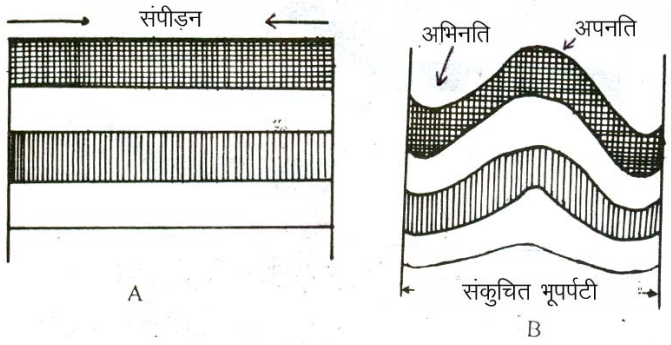

चित्र 4.2 वलन से पूर्व तथा वलन के बाद भूपर्पटी

जब वलन विस्तृत पैमाने पर होता है तो यह पर्वत निर्माणकारी प्रक्रिया से संबंधित होता है। संसार की अधिकांश महान पर्वतमालाओं जैसे हिमालय, रॉकीज, एन्डीज, आल्प्स तथा इसी प्रकार की अन्य पर्वतमालाओं का निर्माण सम्पीडन बलों की विस्तृत पैमाने पर हुई प्रक्रियाओं का ही परिणाम है। इन गतियों को **पर्वत निर्माणकारी हलचलें** भी कहते हैं।

- क्षैतिज हलचलें सम्पीड़न तथा तनाव बलों से उत्पन्न होती है।
- सम्पीड़न द्वारा शैल संस्तरों में मोड़ पड़ने को **वलन** कहते हैं।

टिप्पणी

- ऊपर की ओर उठे हुए मोड़ को **अपनति** तथा नीचे की ओर पड़े हुए मोड़ को **अभिनति** कहते हैं।
- बड़े पैमाने पर होने वाली वलन प्रक्रिया के परिणामस्वरूप वलित पर्वत बनते हैं। इन्हें सामान्यतया **पर्वत** निर्माणकारी हलचलें कहते हैं।

(ii) तनाव बल तब पैदा होते हैं जब शक्तियां दो विपरीत दिशाओं में धरातल के समानांतर कार्य करती हैं अर्थात जब शक्तियाँ किसी दिये गये बिन्दु या तल के दोनों ओर कार्य करती हैं तो तनाव पैदा होता है। जब तनाव बल अधिक तीव्र होते हैं तो शैल संस्तरों (परतों) में दरार पड़ जाती है या वे टूट जाती हें। फलस्वरूप दरारें या भ्रंश पैदा हो जाते हैं। जब दो दरारों के बीच के शैल ऊपर अथवा नीचे की ओर विस्थापित हो जाते हैं तो इसे **भ्रंशन** कहते हैं। जिस रेखा के साथ टूटे हुए शैल संस्तर विस्थापित होते हैं, अथवा खिसकते हैं उसे **भ्रंश-रेखा** कहते हैं। (चित्र 4.3)

- तनाव बलों के कारण **भ्रंश** बनते हैं।
- जिस रेखा के साथ टूटे शैल संस्तर खिसकते हैं, उसे **भ्रंश रेखा** कहते हैं।

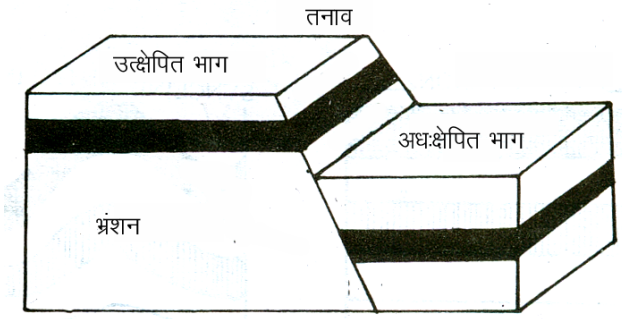

चित्र 4.3 भ्रंश

सम्पीड़न की शक्तियों के कारण तनाव की शक्तियाँ सक्रिय होती है। इस प्रकार भ्रंशों का निर्माण मोड़ों के बनने की प्रक्रिया के साथ होता है। इस का तात्पर्य यह है कि वलन की प्रक्रिया से शैलों की परतों में भ्रंश निर्मित होते हैं या वे टूटती है।

भ्रंशन की प्रक्रिया के कारण दरार घाटियों तथा खण्ड पर्वतों का निर्माण होता है। जब दो लगभग समानांतर दरारों के बीच स्थित शैल संस्तर नीचे की ओर खिसक जाते हैं तो दरार घाटी का निर्माण होता है। (चित्र 4.4) संसार की प्रमुख दरार घाटियों में स्काटलैण्ड की मध्यवर्ती घाटी, राइन नदी घाटी, नील की घाटी, मृतसागर बेसिन तथा पूर्वी अफ्रीका की महान दरार घाटी जिसमें इस क्षेत्र की कुछ झीलें शामिल है, गणना की है। कुछ भूगोलवेत्ता नर्मदा तथा तापी घाटियों को भी दरार घाटियाँ मानते हैं। दामोदर नदी घाटी के कोयला निक्षेप प्रारंभिक रूप में एक अभिनति, जो एक दरार घाटी से मिलती जुलती हैं, में जमा हुए बताये जाते हैं।

टिप्पणी

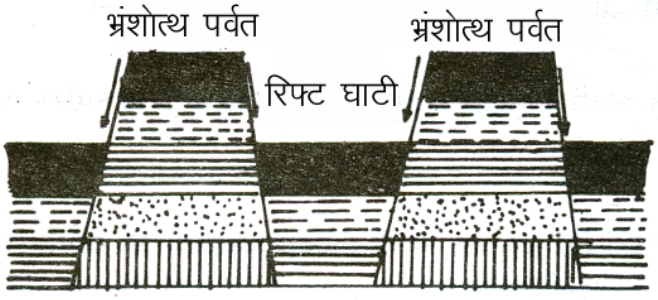

चित्र 4.4 दरार घाटी तथा खण्ड पर्वत

दरार घाटी भ्रंश रेखाओं के सहारे बनी दो समानांतर दीवारों के बीच धंसा हुआ भू–भाग होती है। इस प्रकार की घाटी को **ग्रैबन** भी कहते हैं। दरार घाटी का निर्माण दो दरारों के बीच वाले स्थल खंडों के ऊपर उठने से भी हो सकता है, इन पर उठे हुए खण्डों को **हार्स्ट या खण्ड पर्वत** कहते हैं। राइन नदी के दोनों किनारों के साथ फैले वासजेज तथा ब्लेक फारेस्ट पर्वत तथा फिलिस्तीन व जार्डन के पठार, खण्ड पर्वतों के प्रसिद्ध उदाहरण हैं।

कगार (चित्र 4.3) दरार घाटियों तथा खण्ड पर्वतों के विशिष्ट लक्षण हैं। वे एक दिशा में फैले हुए तीव्र या खड़े किनारे वाले ढाल होते हैं। अरब सागर की ओर के पश्चिमी घाट के कगार विंध्यांचल के कगार तथा नर्मदा नदी की भ्रंशन का ही परिणाम है।

- भ्रंशन के कारण दरारघाटी, खण्ड पर्वत तथा कगारों का निर्माण होता है।
- भ्रंश रेखा के सहारे बनी दो समानांतर दीवारों के बीच धंसे भाग को **दरार घाटी** कहते हैं।
- खड़े व तीव ढाल वाले ऊपर उठे हुए भूभाग को **खण्ड पर्वत** कहते हैं।
- ककगार भ्रंश के साथ बना तीव्र व लंबा ढाल है।

पाठगत प्रश्न 4.2

(1) सम्पीड़न बलों द्वारा पैदा हुए भू हलचलों के नाम बताइये।

_____

(2) पर्वत निर्माण करने वाली गतियों को भौगोलिक नाम दीजिये।

_____

क्या आपने कभी सक्रिय ज्वालामुखी देखा है ? अगर आपने नहीं भी देखा है तो इसे आपने तस्वीरों में या लावा उगलते हुए ज्वालामुखी को फिल्मों में देखा होगा। यहाँ हम भू आकृतियों के उदाहरण के रूप में इन शंक्वाकार आकृतियों का अध्ययन करेंगे।

टिप्पणी

4.5 ज्वालामुखी

ज्वालामुखी भूपर्पटी में वह छिद्र या द्वार होता है जिनके द्वारा शैल पदार्थ, शैल के टुकड़े, राख, जलवाष्प तथा अन्य गर्म गैसें धीरे–धीरे अथवा तेजी से उद्‌गार के समय निकलते हैं। ये पदार्थ पृथ्वी के आंतरिक गर्म भागों से भूपृष्ठ पर फैंके जाते हैं। इस प्रकार के छिद्र या भू पृष्ठ पृथ्वी के उन भागों में पाये जाते हैं, जहाँ शैल संस्तर अपेक्षाकृत कमजोर होते हैं।

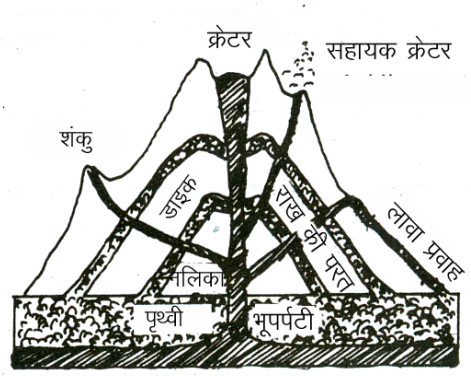

चित्र 4.5 ज्वालामुखी शंकु

आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि ये उद्‌गार होते क्यों हैं। वास्तव में ज्वालामुखी इस तथ्य के प्रमाण हैं कि पृथ्वी के आंतरिक भागों में अत्याधिक गर्मी व दबाव विद्यमान है। पृथ्वी की बाह्य ठोस परत के नीचे पिघले शैल पदार्थ जिन्हें मैग्मा कहते हैं, अत्याधिक दबाव में होते हैं। जब यह मैग्मा छिद्र या दरार द्वारा मैग्मा चेम्बर से बाहर धरातल पर जमा हो जाता है, तब इसे लावा कहते हैं। (चित्र 4.5) मैग्मा तथा गैसें जो भूपर्पटी के नीच जमा है, वे बाहर आने का प्रयास करती है जब ये अपने दाव से भूपर्पटी में कोई कमजोर रेखा या छिद्र बनाने में सफल हो जाती है। तो ये गैसें, पिघले शैल पदार्थ, शैल के ठोस टुकड़े व राख आदि के साथ तेजी से धरातल पर फैल जाते हैं। जब ठोस व पिघले शैल तथा गैसे पृथ्वी के आंतरिक भागों से निकलकर धरातल पर आती हैं तो यह प्रक्रिया **ज्वालामुखी प्रक्रिया** कहलाती है।

- ज्वालामुखी भूपर्पटी में वह छिद्र होता है, जिससे पिघले शैल पदार्थ मन्द अथवा तीव्र गति से बाहर निकलते हैं। पदार्थों के बाहर निकलने की गति उद्‌गार की तीव्रता पर निर्भर करती है।
- ज्वालामुखी उद्‌गार का मुख्य कारण मैग्मा और गर्म गैसों द्वारा भूपर्पटी पर डाला गया अत्याधिक दबाव है।
- वह प्रक्रिया जिसके द्वारा ठोस, पिघले शैल व गैसें पृथ्वी के आंतरिक भागों से मुक्त होकर उसके धरातल पर आती हैं, **ज्वालामुखी प्रक्रिया** कहते हैं।

टिप्पणी

ज्वालामुखी पदार्थ छिद्र या द्वार के बाहर होकर प्रायः शंकु का आकार ग्रहण करते हैं। शंकु के ऊपर कीप के आकार का एक गड्ढा होता है जिसे **क्रेटर** कहते हैं। (चित्र 4.5)

(क) ज्वालामुखी के प्रकार : ज्वालामुखी प्रक्रिया के आधार पर ज्वालामुखी को वर्गीकृत किया जाता है। उद्गार की बारम्बारता, ज्वालामुखी पदार्थों के बाहर निकल कर पृथ्वी के धरातल पर आने के ढंग तथा उद्गार की प्रकृति अथवा तरलता वर्गीकरणके प्रमुख आधार हैं।

उद्गार की बारम्बारता के आधार पर ज्वालामुखी तीन प्रकार के होते हैं (i) सक्रिय ज्वालामुखी, (ii) प्रसुप्त ज्वालामुखी तथा (iii) विलुप्त ज्वालामुखी।

वे ज्वालामुखी जिनमें समय–समय पर उद्गार होते रहते हैं अथवा वर्तमान में उदगार हो रहे हैं, उन्हें **सक्रिय ज्वालामुखी** कहते हैं। इस प्रकार के प्रमुख ज्वालामुखी–भूमध्य सागर में स्ट्रॉमबोली, इंडोनेशिया में क्राकाटोआ, फिलीपाइन्स में मेयोन, हवाई द्वीप समूह में मोना लोआ तथा भारत में बैरन द्वीप हैं।

प्रसुप्त ज्वालामुखी वे हैं जिनमें वर्तमान काल में उद्गार नहीं हुए हैं। वास्तव में उन्हें सोये हुए ज्वालामुखी कहा जा सकता है। इटली का विसुवियस तथा दक्षिण अमेरिका का कोटोपेक्सी प्रमुख प्रसुप्त ज्वालामुखी हैं।

इन दो प्रकार के ज्वालामुखी के विपरीत कुछ ऐसे ज्वालामुखी हैं जिनमें ऐतिहासिक काल में उद्गार नहीं हुए। इन्हें विलुप्त ज्वालामुखी कहते हैं। म्यांमार (बर्मा) का माऊंट पोपा तथा तंजानिया का किलीमंजारो प्रमुख विलुप्त ज्वालामुखी हैं। किसी भी ज्वालामुखी को प्रसुप्त या विलुप्त ज्वालामुखी प्रकार में बांटना आसान नहीं हैं। उदाहरण के लिए विसुवियस तथा क्राकाटोआ हजारों वर्षों तक विलुप्त रहने के बाद उनमें अचानक उद्गार होने लगे और सक्रिय ज्वालामुखी हो गये।

- उद्गार की बारम्बारता के आधार पर ज्वालामुखी तीन प्रकार के हें – सक्रिय, प्रसुप्त तथा विलुप्त।
- **सक्रिय ज्वालामुखी** वे हैं जिनमें वर्तमान में या हाल वर्षों में उद्गार हो रहे हैं या हुए हैं।
- **प्रसुप्त ज्वालामुखी** वे हैं जिनमें मानव इतिहास काल में कम से कम एक बार उद्गार हुआ है और जो वर्तमान में सक्रिय नहीं है।
- **विलुप्त ज्वालामुखी** वे हैं जिनमें लंबे मानव इतिहास काल में उद्गार नहीं हुए हैं।

उद्गार की रीति के आधार पर ज्वालामुखी दो प्रकार के होते हैं, (i) केन्द्रीय उद्भेदन ज्वालामुखी तथा (ii) दरारी उदभेदन ज्वालामुखी।

जब किसी ज्वालामुखी में उद्भेदन एक छिद्र या द्वार से होता है तब उसे केन्द्रीय उद्भेदन ज्वालामुखी कहते हैं। इस प्रकार के ज्वालामुखी विभिन्न प्रकार के गुम्बदाकार

टिप्पणी

अथवा शंक्वाकार पहाड़ियों का निर्माण करते हैं। इन पहाड़ियों का आकार ज्वालामुखी से निकलने वाले पदार्थों की प्रकृति पर निर्भर करता है। संसार के अधिकांश ज्वालामुखी इस प्रकार के हैं। इस प्रकार के ज्वालामुखी उद्भेदन की एक अन्य विशेषता यह है कि पिघले हुए शैलों व गैसों के यकायक छिद्र या द्वार से निकलने के कारण उद्गार अत्याधिक विस्फोटक होता हैं, विसुवियस तथा फ्यूजीयामा इस वर्ग के प्रमुख ज्वालामुखी हैं।

कभी–कभी, भूकम्पों या भ्रशंन से भूपृष्ठ पर गहरी और लंबी दरारें पड़ जाती हैं। मैग्मा इन दरारों से धीरे–धीरे बाहर की ओर निकलने लगता है। इस प्रकार के उद्भेदन को दरारी उद्भेदन कहते हैं इस प्रकार के ज्वालामुखी उद्गारों से लावा की मोटी–मोटी पर्तें जमा हो जाती हैं और इससे लावा पठार तथा लावा शील्ड का भी निर्माण होता है। भारत में दक्कन का पठार इस प्रकार के उद्गार का एक उदाहरण है।

- केंद्रीय प्रकार के ज्वालामुखी में छिद्र या द्वार से उद्गार होते हैं तथा इस प्रकार के उद्भेदन के कारण एक **शंक्वाकार पहाड़ी** का निर्माण होता है।
- दरारी प्रकार के ज्वालामुखी में उद्भेदन एक दरार से होते हैं तथा इस प्रकार के उद्गारों से **पठारों व शील्डों** का निर्माण होता है।

लावा की तरला के आधार पर ज्वालामुखी दो प्रकार के होते हैं (i) क्षारीय लावा के ज्वालामुखी तथा, (ii) अम्लीय लावा के ज्वालामुखी।

क्षारीय लावा में धात्विक खनिजों का अनुपात अधिक होता है तथा उनका पिघलन बिंदु नीचा होता है। अतः क्षारीय लावा अधिक तरल होता है। इस प्रकारके ज्वालामुखी उदगारों में लावा दूर–दूर तक शीघ्र तथा तेजी से फैल जाता है। इससे लावा की पतली परतें विस्तृत क्षेत्र में जमा हो जाती है। इस प्रकार के उद्गारों से शील्डों तथा लावा गुम्बदों का निर्माण होता है। प्रशांत महासागर में हवाई द्वीप समूह में स्थित शील्ड ज्वालामुखी इस प्रकार का ज्वालामुखी है।

क्षारीय लावा के विपरीत अम्लीय लावा में सिलिका की मात्रा अधिक होती है तथा इसका पिघलन बिंदु अपेक्षाकृत ऊँचा होता है। अतः यह अत्यधिक गाढ़ा होता है तथा शीघ्र ही जम जाता है। यही कारण है कि अम्लीय लावा ज्वालामुखी सामान्यतया ऊँची भू–आकृतियों का निर्माण करते हैं। इन भू–आकृतियों के ढाल तीव्र होते हैं। अम्लीय लावा शंकु के ढाल क्षारीय लावा शील्डों से अधिक तीव्र होते हैं। (चित्र 4.6)

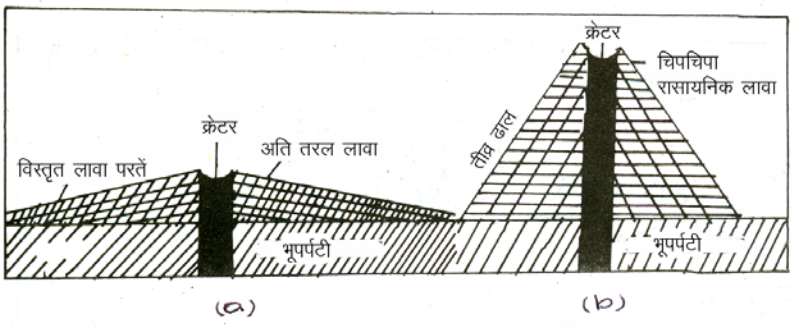

चित्र 4.6 (क) क्षारीय लावा शील्ड (ख) अम्लीय लावा शंकु

टिप्पणी

- क्षारीय लावा अधिक तरल होता है अतः शीघ्रता से दूर–दूर तक फैल जाता है। इसके कारण शील्डों का निर्माण होता हैं
- अम्लीय लावा अत्यधिक गाढ़ा होता है। इस प्रकार के उद्‌गार से तीव्र ढाल वाले शंकु निर्मित होते हैं।

(ख) ज्वालामुखियों का वितरण : संसार में लगभग 500 ज्वालामुखी हैं। इनमें से अधिकांश तीन निश्चित पेटियों में पाये जाते हैं। ये तीन पेटियाँ हैं – प्रशांत महासागरीय पेटी, मध्यवर्ती पेटी तथा अफ्रीकी दरारघाटी पेटी। इस प्रकार, ज्वालामुखी उन क्षेत्रों में मुख्य रूप में पाये जाते हैं जहाँ अत्यधिक वलन व भ्रंशन पाये जाते हैं। वे तटीय पर्वतीय श्रेणियों के साथ, द्वीपों तथा महासागरों के आंतरिक भागों में पाये जाते हैं। महाद्वीपों के आंतरिक भाग इनकी क्रिया से सामान्यतया अछूते रहे हैं। अधिकांश सक्रिय ज्वालामुखी प्रशांत महासागरीय क्षेत्र में स्थित हैं। लगभग 83 सक्रिय ज्वालामुखी भूमध्य सागरीय क्षेत्र में पाये जाते हैं। (चित्र 4.7)

प्रशांत महासागरीय पेटी में सबसे अधिक ज्वालामुखी संकेंद्रित हैं। इसलिए इसे प्रशांत अग्नि वलय कहते हैं। यह वलय दक्षिणी अमेरिका में एण्डीज पर्वत श्रेणी के साथ से प्रारंभ होकर अलास्का तक तथा अल्यूशियन द्वीप समूह से जापान, फिलीपाइन्स, इंडोनेशिया से न्यूजीलैंड तक फैली हुई है।

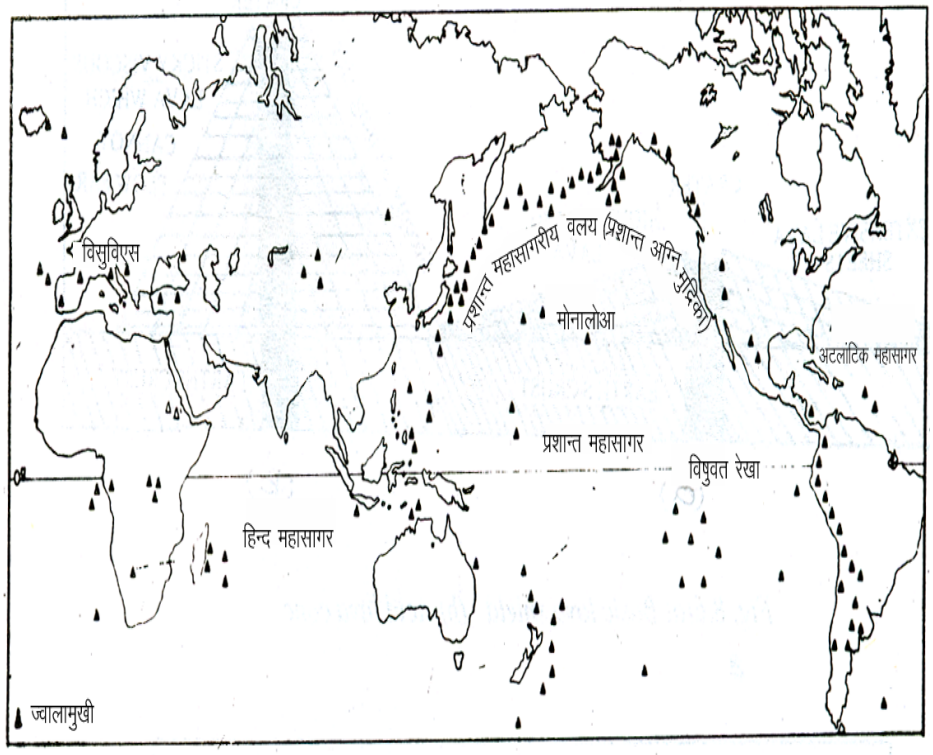

चित्र 4.7 ज्वालामुखी - विश्व वितरण

संसार की मध्यवर्ती पेटी का ज्वालामुखी की संख्या के अनुसार दूसरा स्थान है। यह यूरोप में आल्प्स पर्वत से प्रारंभ होकर टर्की तथा हिमाचल पर्वत प्रदेश से होती हुई प्रशांत

टिप्पणी

महासागरीय पेटी से मिल जाती है। अफ्रीकी दरारघाटी प्रदेश का तीसरा स्थान है। इस पेटी के अधिकांश ज्वालामुखी विलुप्त प्रकार के हैं। केवल माउन्ट केमरून ज्वालामुखी जो पश्चिमी मध्य अफ्रीका में स्थित हैं, सक्रिय ज्वालामुखी है।

- संसार में लगभग 500 ज्वालामुखी हैं। वे तीन निश्चित पेटियों – प्रशांत महासागर को घेरनेवाली पेटी, मध्यवर्ती पर्वतीय पेटी तथा पूर्वी–अफ्रीकी दरार घाटी में स्थित हैं।
- अधिकांश सक्रिय ज्वालामुखी प्रशांत महासागरीय पेटी में स्थित है। इसे प्रशांत अग्नि वलय कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.3

1. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिये –

   (i) उस प्रक्रिया का नाम बताइए जिसमें मैग्मा पृथ्वी के गर्भ से बाहर निकलता है।

   _____

   (ii) उद्‌गार की बारम्बारता के आधार पर तीन प्रकार के ज्वालामुखियों के नाम बताइए।

   (क) _____ (ख) _____ (ग) _____

   (iii) उद्‌गार की प्रकृति के आधार पर दो प्रकार के ज्वालामुखियों के नाम बताइए।

   (क) _____ (ख) _____

   (iv) तरलता के आधार पर लावा के दो प्रकार बताइए।

   (क) _____ (ख) _____

4.7 भूकम्प

आपने शायद दूरदर्शन के समाचारों में भूकम्प से होने वाले विनाश के विषय में सुना होगा। भूपृष्ठ के हिलने या कांपने को **भूकम्प** कहते हैं। ये हल्के से कम्पन से लेकर भवनों को तेज हिलाकर रख देने वाले होते हैं। भूकम्प लहरों की गति की ऊर्जा का एक रूप है जो पृथ्वी की धरातलीय परत से संप्रेषित होती है।

सभी भूकम्प समान तीव्रता वाले नहीं होते। इनमें से कुछ भूकम्प बहुत भयंकर होते हैं, कुछ हल्के होते हैं तथा शेष कुछ का तो पता ही नहीं चल पाता। भयंकर या अधिक

टिप्पणी

तीव्रता वाले भूकम्प गिने चुने होते हैं। यद्यपि हमारी पृथ्वी पर प्रतिदिन भूकम्प आते रहते हैं लेकिन उनकी बारम्बारता में स्थान–स्थान पर बहुत अन्तर पाया जाता हैं। सारे संसार में फैला भूकम्पमापी केंद्रों का जाल प्रतिदिन दर्जनों भूकम्पों को आलेखित करता है, लेकिन भयंकर भूकम्प कुछ ही क्षेत्रों में आते हैं। भूकम्प मापने वाले यंत्र को **भूकम्प मापी (सीस्मोग्राफ) यंत्र** कहते हैं। 'सीस्मोस' ग्रीक भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है भूकम्प।

- आंतरिक बलों द्वारा हुए भूपृष्ठ के कम्पन को **भूकम्प** कहते हैं।
- भूकम्पमापी एक यंत्र है जो भूपृष्ठ के कम्पन को आलेखित करता है।

भूपृष्ठ में स्थित वह बिंदु जहां से भूकम्प प्रारंभ होता है उसे भूकम्प केंद्र कहते हैं। सामान्यता यह केंद्र भूपृष्ठ मं 60 किलोमीटर की गहराई के आसपास स्थित होता है।

भूकम्प केंद्र के ठीक ऊपर पृथ्वी के धरातल पर जो स्थान होता है, उसे **अधिकेंद्र** कहते हैं। भूकम्प का प्रभाव उसके उद्‌गम बिंदु से तरंगों द्वारा ले जाया जाता है। ये भूकम्पीय तरंगें भूकम्प केंद्र से पैदा होकर सभी दिशाओं की ओर चलती है। लेकिन उनकी तीव्रता अधिकेन्द्र पर सबसे अधिक होती है। यही कारण है कि अधिकेन्द्र के चारों ओर फैले क्षेत्र पर विनाश सर्वाधिक होता है। कम्पन की तीव्रता अधिकेंद्र के चारों ओर दूर जाने पर क्रमशः कम होती जाती है। (देखें चित्र 4.8)

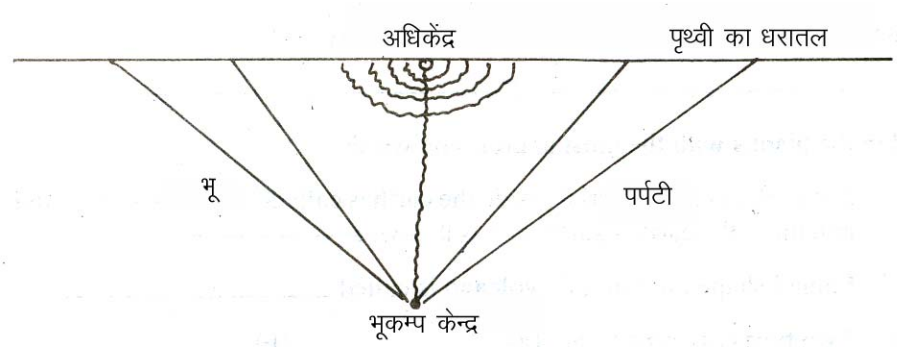

चित्र 4.8 एक भूकम्प का भूकम्प-केन्द्र तथा अधिकेंद्र

- भूकम्प पृथ्वी के धरातल का कंपन है जो हल्के से कंपन से लेकर भवनों को तेज हिलाकर रख देने वाला हो सकता है।
- भूकम्प मापने के लिए भूकम्प मापी (सिस्मोग्राफ) यंत्र का उपयोग करते हैं।
- **भूकम्प-केंद्र** भूपृष्ठ में वह बिंदु होता है, जहाँ से भूकम्प प्रारंभ होता है।
- **अधिकेंद्र** धरातल पर वह बिंदु होता है जो भूकम्प केंद्र के ठीक ऊपर होता है।

टिप्पणी

(क) भूकम्प के कारण और प्रभाव

भूकम्प आने का प्रमुख कारण वलन, भ्रंशन तथा शैल संस्तरों का खिसकना है। कैलीफोर्निया के सान फ्रांसिसको में 1906 तथा असम में 1951 में तथा बिहार में 1935 में आये भूकम्प इस प्रकार के भूकम्पों के उपयुक्त उदाहरण हैं।

भूकम्पों के आने का दूसरा प्रमुख कारण ज्वालामुखी उद्भेदन है। ज्वालामुखी के भयंकर उद्भेदन से ठोस शैलों पर अत्यधिक दबाव पड़ता है, इससे भूपृष्ठ पर कम्पन पैदा होते हैं। लेकिन इस प्रकार के भूकम्प ज्वालामुखी प्रक्रिया के क्षेत्रों तक ही सीमित रहते हैं। हवाई द्वीप समूह में मोनालोआ ज्वालामुखी के 1868 में हुए उद्भेदन के पूर्व छः दिन तक इस क्षेत्र में लगातार आये भूकम्प इस प्रकार के भूकम्पों के प्रमुख उदाहरण हैं।

हल्के या सीमित प्रभाव वाले भूकम्पों के आने के कारणों में भूस्खलन, जल के रिसने से खानों, सुरंगों व कन्दराओं की छतों के शैलों का टूटकर गिरना शामिल हैं। इस प्रकार के भूकम्पों से क्षति बहुत ही कम होती है।

भयंकर भूकम्प सामान्यतया अत्याधिक विनाशकारी होते हैं। इस प्रकार के भूकम्पों से भू:स्खलन, नदियों के मार्गों का रुक जाना तथा बाढ़ के आने की घटनायें घटित हो जाती हैं। कभी–कभी भूमि के धसक जाने से झीलें बन जाती हैं। भूकम्पों के आने से दरारें पड़ जाती हैं। इसके कारण नदियों के मार्ग बदल जाते हैं, जैसा कि असम के 1951 में आये भूकम्प के कारण हुआ था। भूकम्पों के कारण दरार रेखा के साथ शैल संस्तर ऊपर नीचे अथवा क्षैतिज दिशा में खिसक जाते हैं। जब इनसे आग लग जाती है या ज्वारीय तरंगें पैदा हो जाती हैं, तब ये भूकम्प अत्यधिक विनाशकारी होते हैं। इन ज्वारीय तरंगों को **सुनामी** कहते हैं। इन तरंगों से तटीय नगर बह जाते हैं। भूकम्प के आने से मकान व पुल टूट जाते हैं, जिससे हजारों व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है। यातायात, संचार तथा बिजली के तार की लाइनें टूट जाती हैं। भूकम्पों का अंतिम परिणाम हैजा जैसी महामारियाँ होती हैं।

(ख) भूकम्पों का वितरण

भूकम्प संसार के प्रत्येक भाग में आते हैं। लेकिन दो पूर्ण निश्चित पेटियों में वे अक्सर आते हैं। ये पेटियाँ हैं – प्रशांत महासागर को घेरने वाली पेटी तथा मध्यवर्ती पर्वतीय पेटी। प्रशांत महासागर को घेरने वाली पेटी में उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी तट, **अल्यूशियन तथा एशिया के पूर्वी तट** से लगें अन्य द्वीप समूह जैसे जापान तथा फिलीपाइन्स शामिल हैं। यह पेटी प्रशांत सागर को एक छोर से दूसरे छोर तक घेरे हुये है इसलिए इसका यह नाम पड़ गया है। इस पेटी में आने वाले भूकम्प पर्वतों तथा ज्वालामुखियों की श्रृंखला से संबंधित है। ऐसा अनुमान है कि संसार के लगभग 68 प्रतिशत भूकम्प अकेले इसी पेटी में आते है।

भूकम्प प्रभावित दूसरी पेटी आल्प्स पर्वत से प्रारंभ होकर भूमध्य सागर कॉकेशस, हिमालय प्रदेश तथा इण्डोनेशिया तक फैली हुई है। इस पेटी में संसार के लगभग 21 प्रतिशत भूकम्प आते हैं। शेष 11 प्रतिशत भूकम्प संसार के शेष भागों में आते हैं।

- संसार के अधिसंख्य भूकम्प दो पेटियों में आते हैं ये हैं – प्रशांत महासागर को घेरने वाली पेटी तथा मध्यवर्ती पर्वतीय पेटी।

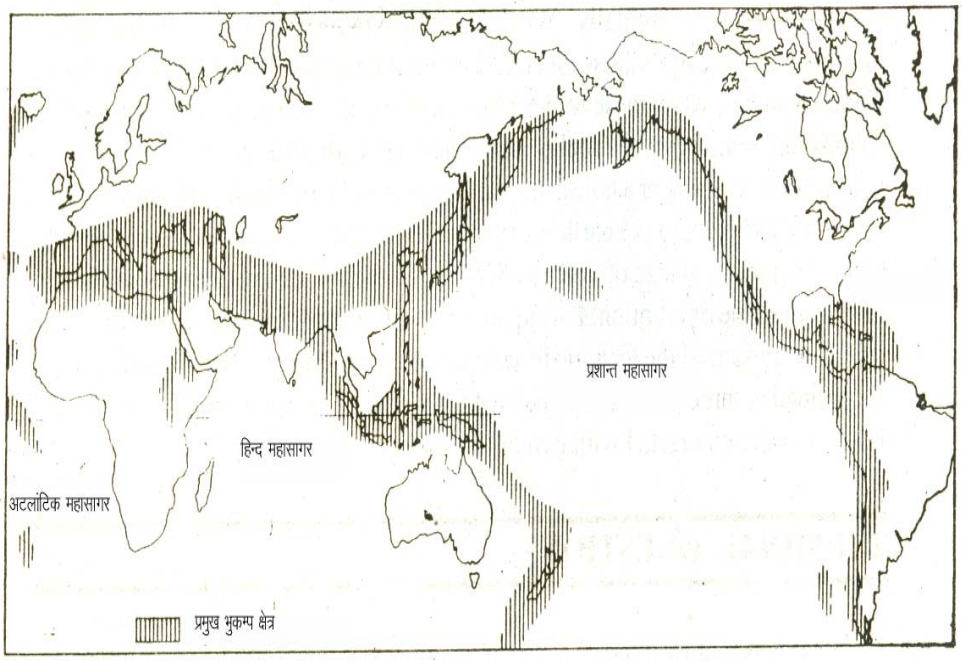

चित्र 4.9

पाठगत प्रश्न 4.4

उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(i) भूकम्प किसे कहते हैं ?

_____

(ii) किस यंत्र द्वारा भूकम्पों का आलेखन किया जाता है?

_____

(iii) उद्‌गम बिंदु क्या होता है ?

_____

(iv) सुनामी क्या है ?

_____

टिप्पणी

आपने क्या सीखा

पृथ्वी के धरातल पर पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की भू–आकृतियॉं उसकी आंतरिक और बाह्य बलों की निरंतर प्रक्रिया का परिणाम है। आंतरिक बल विभिन्न धरातलीय लक्षणों की ऊँचाई में असमता पैदा करने के लिए उत्तरदायी हैं। ये बल पृथ्वी के आंतरिक भागों में पैदा होते हैं। इन बलों को अन्तर्जात बल भी कहते हैं। इन बलों के कारण भूपृष्ठ में हलचल होती है जिन्हें पृथ्वी की हलचलें कहते हैं। मंद हलचलें जहां भौतिक लक्षणों में धीरे–धीरे व क्रमिक परिवर्तन लाती है वहीं आकस्मिक हलचलें यकायक व तीव्र परिवर्तन लाती हैं। आंतरिक बल पृथ्वी को दो प्रकार – त्रिज्यीय तथा क्षैतिज रूपों से प्रभावित करते हैं। जब ये त्रिज्यीय रूप में प्रभावित करते हैं तब भूपृष्ठ विपरीत, जब ये बल क्षैतिज या एक दिशा से दूसर दिशा में प्रभाव डालते हैं तब शैल संस्तरों में वलन व भ्रंशन की प्रक्रियायें होती हैं। इन्हें क्षैतिज हलचलें कहते हैं। ज्वालामुखी भूपृष्ठ के द्वार या छिद्र को कहते हैं जिससे गर्म पिघला हुआ मैग्मा, गैसें तथा राख निकलकर पृथ्वी के धरातल पर जमा होती है। ज्वालामुखी का आकार व आकृति उद्‌भेदन की बारम्बारता, लावा की तरलता तथा उद्‌भेदन के प्रकार पर निर्भर करता है। भूकम्प भूपृष्ठ के कारण पैदा होते हैं। ज्वालामुखी संसार की तीन निश्चित पेटियों में सीमित हैं। भूकम्प भी इनमें से दो पेटियों से संबंधित हैं।

पाठांत प्रश्न

1. आंतरिक बलों से क्या तात्पर्य है ? इन बलों की उत्पत्ति के कारणों की सूची बनाइये।
2. चार उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए कि भूपृष्ठ अस्थिर हैं।
3. निम्न को आरेखों द्वारा दर्शाइए :–
   (i) दरार रेखा के सहारे विस्थापित शैल संस्तर
   (ii) शैल संस्तर की अपनति व अभिनति
4. ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज हलचलों में अंतर स्पष्ट कीजिए।
5. वलन तथा भ्रंशन में अंतर बताइए।
6. ज्वालामुखी क्या है ? उदाहरण देकर विभिन्न प्रकार के ज्वालामुखियों के बारे में बताइए।
7. क्षारीय तथा अम्लीय लावा एवं उनके द्वारा निर्मित भू आकृतियों में अंतर बताइए।
8. भूकम्प क्यों आते हैं ?
9. भूकम्पों से पृथ्वी के धरातल पर पड़ने वाले प्रभावों की सूची बनाइए।

टिप्पणी

10. निम्न पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा दीजिए :–

(क) दरार रेखा (ख) केंद्रीय उद्‌गार

(ग) दरारी उद्‌भेदन (घ) प्रसुप्त ज्वालामुखी

11. संसार के रेखा मानचित्र में निम्नांकित को दर्शाइये तथा उनका नाम लिखिए :–

(क) भारत में एक सक्रिय ज्वालामुखी (ख) दक्षिणी अमेरिका में एक ज्वालामुखी पठार (ग) यूरोप में एक दरार घाटी (घ) म्यांमार में एक विलुप्त ज्वालामुखी (ड) अफ्रीका में एक विलुप्त ज्वालामुखी (ट) हवाई द्वीप समूह में एक ज्वालामुखी।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1

1. अन्तर्जात बल 2. वे हलचलें जो पृथ्वी के अंतर्जात बलों द्वारा भूपृष्ठ को प्रभावित करती हैं। पृथ्वी की हलचलें कहलाती हैं।

4.2

1. क्षैतिज हलचलें 2. पर्वत निर्माणकारी हलचलें

4.3

1. (i) ज्वालामुखी प्रक्रिया (ii) (क) सक्रिय (ख) प्रसुप्त (ग) विलुप्त (iii) (क) केंद्रीय ज्वालामुखी (ख) दरारी ज्वालामुखी (i) (क) क्षारीय लावा (ख) अम्लीय लावा।

4.4

(i) भू हलचलों द्वारा पैदा किए गए भूपृष्ठ के कम्पन को भूकम्प कहते हैं।

(ii) भूकम्प मापी यंत्र

(iii) वह स्थान या बिंदु जहां से भूकम्पीय तरंगे पैदा होती हैं उसे उद्‌गम बिंदु कहते हैं।

(iv) भूकम्पों से समुद्री जल में उत्पन्न होने वाली विनाशकारी लहरों को सुनामी कहते हैं।

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. अनुच्छेद 4.1 को देखिए।
2. अनुच्छेद 4.2 को देखिए।
3. अनुच्छेद 4.1 को देखिए।

टिप्पणी

4. अनुच्छेद 4.4 को देखिए।
5. अनुच्छेद 4.4 (ख) (i) व (ii)
6. अनुच्छेद 4.5 को देखिए।
7. अनुच्छेद 4.6 को देखिए।
8. अनुच्छेद 4.6 को देखिए।
9. अनुच्छेद 4.6 'क' को देखिए।
10. (क) जिस रेखा के साथ टूटे शैल संस्तर खिसकते हैं, उसे भ्रंश रेखा कहते हैं।

    (ख) जब किसी ज्वालामुखी में किसी छिद्र या द्वार से उद्‌गार होता है, तो उसे केंद्रीय उद्‌गार कहते हैं।

    (ग) जब किसी ज्वालामुखी में किसी लंबी दरार में उद्‌भेदन होता है तो दरारी उद्‌भेदन कहते हैं।

    (घ) जिन ज्वालामुखियों में मानव इतिहास काल में उद्‌भेदन नहीं हुआ है, उन्हें प्रसुप्त ज्वालामुखी कहते हैं।
11. मानचित्र देखिए।

टिप्पणी

उनके बीच में अनेक टापू बन जाते हैं, नदी के इस रूप को गुंफित नदी कहते हैं।

3. **अपरदन कार्य** – महाखड्ड, 'V' आकृति की घाटी, विसर्प, कैनयन, जलप्रपात। निक्षेपण कार्य – विसर्प, बाढ़कृत मैदान, जलोढ़ पंख।

4. **(क) गोखुर झील** – नदी के मध्य मार्ग में बिसर्प बन जाते हैं। समय बीतने पर दो मोड़ों के बीच की भूमि की पट्टी धीरे–धीरे संकरी होती जाती है और एक समय ऐसा आता है, जब नदी इस संकरी पट्टी को काट कर सीधी बहने लगती है। इस प्रकार विसर्प का नदी की मुख्य धारा से संबंध टूट जाता है और विसर्प एक गोखुर झील में बदल जाता है।

   (ख) डेल्टा – नदी मुहाने पर त्रिभुज जैसी आकृति वाली भूमि जो, नदियों द्वारा लाए गए अवसादों के 'निक्षेपण' से बनती है। इसमें होकर अनेक वितरिका नदियाँ बहती हैं।

5. तल संतुलन के कारकों में नदी सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। नदी मार्ग के तीन भाग हैं। यह अपने मार्ग के तीनों ही भागों में तल संतुलन का कार्य करती रहती है।

   ऊपरी मार्ग – महाखड्ड, जलप्रपात, और केनयन का निर्माण।

   मध्य मार्ग – विसर्प और जलोढ़ पंखों का निर्माण।

   निचला मार्ग – विसर्प, बाढकृत मैदान, गुंफित नदी, गोखुर झील, डेल्टा, और ज्वार नद मुख का निर्माण।

6. (क) भूमिगत जल – वर्षा के जल का वह भाग जो भूमि के अंदर रिसकर एकत्र हो जाता है, भूमिगत जल कहलाता है।

   (ख) चूने की शैलों से बने प्रदेशों में अनेक घोलरंध्र और विलय रंध्र पाए जाते हैं। नदियाँ इन रंध्रों में प्रवेश कर जाती हैं और सतही प्रवाह भूमिगत हो जाता है। इस प्रकार चूने की शैलों से बने प्रदेशों में नदियाँ भूमिगत हो जाती हैं।

   (ग) जिन प्रदेशों में घोलरंध्र तथा विलयरंध्र अधिक संख्या में पाए जाते हैं, वहाँ सड़कें तथा रेलवे मार्ग बनाना कठिन होता है, क्योंकि ऐसे प्रदेशों में भूमि की सतह नीचे को धंस जाती है।

   (घ) स्थायी भूमिगत जल स्तरः यह धरातल के नीचे जल का वह तल है, जिससे नीचे भूमिगत जल स्तर कभी नहीं जाता। यह भूमिगत जलस्तर ऋतु परिवर्तन से भी अप्रभावित रहता है। इस गहराई तक खोदे गए कुएँ कभी नहीं सूखते।

   अस्थायी भूमिगत जलस्तर : कुछ प्रदेशों में भूमिगत जल स्तर स्थायी नहीं होता

टिप्पणी

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

1. हिमानी 2. हिमक्षेत्र 3. हिमरेखा 4. (क) महाद्वीपीय हिमानी (ख) घाटी हिमानी।

6.2

1. (क) 'U' आकृति की घाटी (ख) लटकती घाटी (ग) हिमजगह्वर
2. हिमोढ़
3. (क) अपरदन (ख) परिवहन (ग) निक्षेपण

6.3

1. मरूस्थलीय तथा अर्द्ध मरूस्थलीय क्षेत्र
2. (क) अपरदन (ख) परिवहन (ग) निक्षेपण
3. (क) छत्रक शैल तथा (ख) पवन द्वारा अपरदित बेसिन
4. (क) बालू के टीले (ख) बारखन या अनुदैर्ध्य टीले (ग) लोयस।
5. उत्तरी चीन में।

6.4

1. (क) अपरदन कार्य
   (ख) अपघर्षण, संनिघर्षण, जल चालित क्रिया और घोलन क्रिया
   (ग) अपरदन कार्य
2. (i) समुद्री भृग (ii) समुद्री गुफाएँ (iii) समुद्री मेहराब (iv) समुद्री स्तंभ (कोई तीन)
3. (i) तट रेखा की प्रकृति (ii) तरंगों की शक्ति।
4. निक्षेपण कार्य
5. (i) अपरदन द्वारा बने – समुद्री स्तंभ, भृगु, गुफाएँ, मेहराब
   (ii) निक्षेपण द्वारा बने – रोधिका, पुलिन और भूजिह्व

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. (i) हिम रेखा एक काल्पनिक रेखा होती है, जिसके ऊपर स्थाई रूप से बर्फ जमी रहती है।
   (ii) देखिए अनुच्छेद 6.3 का (क) और उस पृष्ठ पर चित्र 6.4
2. (क) (i) महाद्वीपीय हिमानी : हिम और बर्फ से ढका विस्तृत क्षेत्र।
   (ii) घाटी हिमानी : ये घाटी हिमानियाँ तब बनती हैं, जब पर्वतीय ढालों से हिम और बर्फ, पहले से विद्यमान घाटी में खिसकने लगती है। हिम और बर्फ की इस खिसकती राशि को घाटी हिमानी कहते हैं।

टिप्पणी

7

प्रमुख स्थलरूप और उनका आर्थिक महत्त्व

आपने पिछले पाठ में पढ़ा है कि धरातल पर दिखाई देने वाले विविध स्थलरूपों का निर्माण पृथ्वी के आन्तरिक एवं बाह्य बलों के पारस्परिक प्रभाव के कारण होता है। इन बलों द्वारा मुलायम शैलें आसानी से काटी–छाँटी जाती है; जबकि अपेक्षाकृत कठोर शैलों पर इनका प्रभाव कम पड़ता है। अतः किसी क्षेत्र के स्थलरूपों के निर्माण में शैलों की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पृथ्वी के आन्तरिक बल धरातल को निरन्तर ऊपर उठाने में लगे रहते हैं; जबकि बाह्य बल, जिनके बारे में आप अगले पाठ में पढ़ेंगे, उन उठे हुये भागों को काट–छाँट कर समतल बनाने में निरन्तर कार्यशील रहते हैं। इस प्रकार बाह्य बलों अर्थात तल संतुलन के कारकों के लगातार क्रियाशील रहने के कारण विविध प्रकार के स्थलरूप बनते रहते हैं। धरातल पर पाये जाने वाले तीन प्रमुख स्थलरूप पर्वत, पठार और मैदान हैं। इस पाठ में हम पृथ्वी के प्रमुख स्थलरूपों और उनके आर्थिक महत्व के बारे में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- धरातल पर पाये जाने वाले तीन प्रमुख स्थलरूपों में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे;
- विभिन्न स्थलरूपों के बनने की प्रक्रिया को सचित्र समझा सकेंगे;
- निर्माण क्रिया के आधार पर पर्वतों का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- मानव के लिए पर्वतों की उपयोगिता बता सकेंगें;
- विभिन्न प्रकार के पठारों की सूची बना सकेंगे और उनके आर्थिक महत्व का वर्णन कर सकेंगे;

टिप्पणी

- मैदानों के प्रमुख प्रकारों को बता सकेंगे और मैदानों के मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को समझा सकेंगे;
- संसार के रेखा मानचित्र पर प्रमुख पर्वतों, पठारों और मैदानों को दर्शा सकेंगे।

7.1 पर्वत

धरातल पर विद्यमान तीन विस्तृत स्थलरूप पर्वत, पठार और मैदान हैं जो भूपर्पटी के विरूपण का परिणाम हैं। इनमें से पर्वत सबसे रहस्यमयी रचना है। पर्वतों द्वारा पृथ्वी की सम्पूर्ण सतह का 27 प्रतिशत भाग घिरा हुआ है। पर्वत पृथ्वी की सतह के ऊपर उठे हुये वे भाग हैं, जो आसपास की भूमि से बहुत ऊँचे हैं। परन्तु धरातल के सभी ऊपर उठे हुये भाग पर्वत नहीं कहलाते। किसी भी स्थलरूप को पहचानने के लिये ऊँचाई और ढाल दोनों को सम्मिलित किया जाता है। इस नाते तिब्बत की ऊपर उठी हुई भूमि पर्वत नहीं कहलाती यद्यपि उसकी ऊँचाई समुद्र तल से 4500 मीटर है।

यह ध्यान रखने योग्य बात है कि एक पर्वत श्रेणी के बनने में लाखों वर्ष लगते हैं। इस लम्बी अवधि में आन्तरिक बल भूमि को ऊपर उठाने में व्यस्त रहते हैं तो इसके विपरीत बाह्य बल इस ऊपर उठी भूमि को काटने–छाँटने या अपरदित करने में जुटे रहते हैं। माउन्ट एवरेस्ट जैसे ऊँचे एक पर्वत शिखर का निर्माण तब ही हो पाता है जब आन्तरिक बलों का पर्वत निर्माणकारी या जमीन को ऊपर उठाने वाला कार्य बाह्य बलों के अपरदन कार्य की अपेक्षा अधिक द्रुत गति से होता है। अतः पर्वत धरातल के ऊपर उठे हुए वे भू–भाग हैं, जिनके ढाल तीव्र होते हैं और समुद्र तल से लगभग 1000 मीटर से अधिक ऊँचे होते हैं। पर्वतों की समुद्र की सतह से सामान्य ऊँचाई हजार मीटर से अधिक मानी जाती है। स्थानीय उच्चावच लक्षणों में पर्वत ही एक ऐसा स्थलरूप है, जिसके उच्चतम और निम्नतम भागों के बीच सर्वाधिक अन्तर होता है।

- पृथ्वी के धरातल के ऊँचे उठे हुए भाग जिनका शिखर हजार मीटर से अधिक ऊँचा हो और ढाल तीव्र हो, तथा जिनके बनने में लाखों वर्ष लगे हों, पर्वत कहलाते हैं।

7.2 पर्वतों का वर्गीकरण

निर्माण क्रिया के आधार पर पर्वतों को निम्न चार भागों में वर्गीकृत किया जाता है:

(क) वलित पर्वत, (ख) खंड पर्वत, (ग) ज्वालामुखी पर्वत और (घ) अवशिष्ट पर्वत

(क) वलित पर्वत : हम पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं कि पृथ्वी की आन्तरिक हलचलों के कारण परतदार शैलों में वलन पड़ते हैं। वलित परतदार शैलों के ऊपर उठने के परिणामस्वरूप बनी पर्वत श्रेणियों को वलित पर्वत कहते हैं। वलित परतदार शैलों पर लाखों वर्षों तक आन्तरिक क्षैतिज संपीडन–बल लगे रहते हैं तो वे मुड़

जाती हैं और उनमें उद्वलन तथा नतवलन पड़ जाते हैं। कालान्तर में ये अपनतियों और अभिनतियों के रूप में विकसित हो जाते हैं। इस प्रकार की हलचलें समय–समय पर होती रहती हैं और जब वलित शैलें बहुत ऊँचाई प्राप्त कर लेती हैं तो वलित पर्वतों का जन्म होता है।

- संपीडन–बलों के परिणाम स्वरूप बनी वलित परतदार शैलों के ऊपर उठने से वलित पर्वत बनते हैं।

एशिया के हिमालय, यूरोप के आल्प्स, उत्तर अमरीका के रॉकी और दक्षिण अमरीका के एंडीज संसार के प्रमुख वलित पर्वत हैं (चित्र 7.1)। इन पर्वतों का निर्माण अत्यन्त आधुनिक पर्वत निर्माणकारी युग में हुआ है, अतः ये सभी नवीन वलित पर्वतों के नाम से जाने जाते हैं। इनमें से कुछ पर्वत श्रेणियाँ जैसे हिमालय पर्वत अब भी ऊपर उठ रहे हैं।

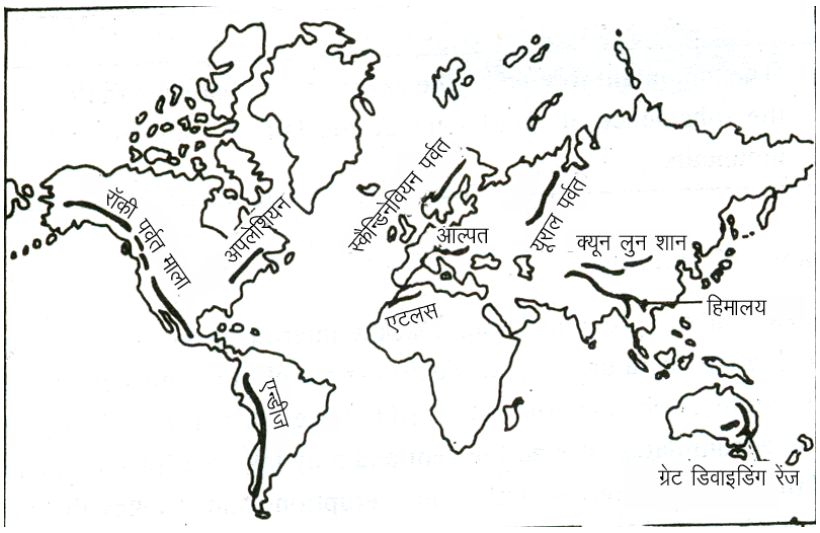

चित्र 7.1 संसार के प्रमुख वलित पर्वत

(ख) खंड पर्वतः खंड पर्वत का निर्माण भी पृथ्वी की आन्तरिक हलचलों के कारण होता है। जब परतदार शैलों पर तनाव–बल लगते हैं तो उनमें दरार या भ्रंश पड़ जाते हैं। जब लगभग दो समान्तर भ्रंशों के बीच की भूमि आसपास की भूमि की तुलना में काफी ऊपर उठ जाती है तो उस ऊपर उठी भूमि को **खंड पर्वत** या **भ्रंशोत्थ** पर्वत या **भ्रंश-खंड** पर्वत कहते हैं। खंड पर्वत का निर्माण उस परिस्थिति में भी होता है, जब दोनों भ्रंशों के बाहर की भूमि नीचे बैठ जाती है और भ्रंशों के बीच की भूमि उठी रह जाती है। खंड पर्वत को होर्स्ट भी कहते हैं (चित्र 7.2)। खण्ड पर्वत में शैलों की परतें वलित अथवा समतल में से कोई भी हो सकती हैं।

फ्राँस के वासजेज, जर्मनी के ब्लैक फारेस्ट और उत्तरी अमरीका के सियेरानेवादा, खंड पर्वतों के विशिष्ट उदाहरण हैं।

टिप्पणी

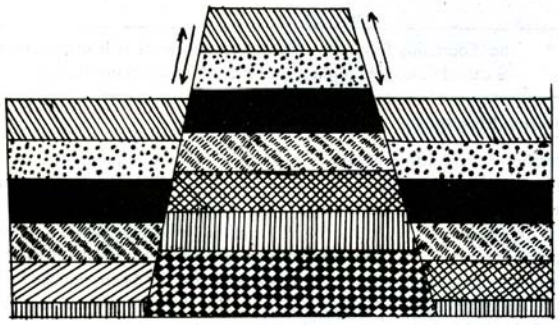

चित्र 7.2 खंड पर्वत

- पर्वत जिनका निर्माण दो भ्रंशों के बीच की भूमि के ऊपर उठने अथवा भ्रंशों के बाहर की भूमि के बैठने के कारण होता है, इन्हें **खंड** अथवा **भ्रंश-खंड** पर्वत कहते हैं।

(ग) **ज्वालामुखी पर्वतः** हमने पिछले पाठ में पढ़ा है कि पृथ्वी का आन्तरिक भाग या भूगर्भ बहुत गर्म है। भूगर्भ के गहरे भागों में अत्याधिक तापमान के कारण ठोस शैलें द्रव–मैग्मा में बदल जाती हैं। जब यह पिघला शैल–पदार्थ ज्वालामुखी के उद्‌गार में भूगर्भ से धरातल पर आता है तो वह मुख के चारों ओर इकट्‌ठा हो जाता है और जमकर शंकु का रूप धारण कर सकता है। ज्वालामुखी के प्रत्येक उद्‌गार के साथ इस शंकु की ऊँचाई बढ़ती जाती है और इस प्रकार वह पर्वत का रूप ले लेता है। पर्वत, जो ज्वालामुखी से निकले पदार्थों के जमा होने से बने हैं उन्हें **ज्वालामुखी पर्वत** या **संग्रहित पर्वत** कहते हैं। (देखें चित्र 7.3) हवाई द्वीपों का मोनालुआ; म्यानमार (बर्मा) का माउन्ट पोपा, इटली का विसूवियस, इक्वेडोर का कोटोपैक्सी तथा जापान का फ्यूजीयामा ज्वालामुखी पर्वतों के उदाहरण हैं।

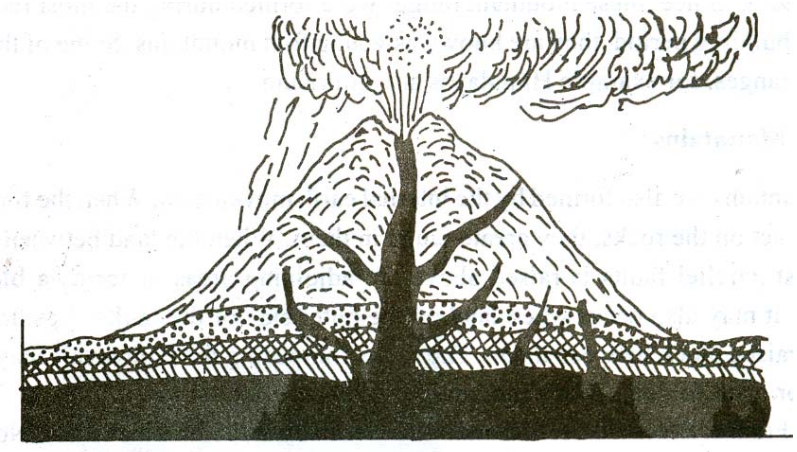

चित्र 7.3 ज्वालामुखी पर्वत

टिप्पणी

- ज्वालामुखी से निकले पदार्थों के जमाव से बने पर्वतों को ज्वालामुखी या संग्रहित पर्वत कहते हैं।

(घ) **अवशिष्ट पर्वतः** अपक्षय तथा अपरदन के विभिन्न कारक – नदियाँ, पवन, हिमानी आदि धरातल पर निरन्तर कार्य करते रहते हैं। वे भूपर्पटी की ऊपरी सतह को कमजोर करने के साथ उसे काटते–छाँटते रहते हैं। जैसे ही धरातल पर किसी–पर्वत श्रेणी का उद्‌भव होता है तो क्रमण के कारक अपरदन द्वारा उसे नीचा करना शुरू कर देते हैं। अपरदन कार्य शैलों की बनावट पर बहुत निर्भर करता है। हजारों वर्षों के बाद मुलायम शैलें कट कर बह जाती हैं तथा कठोर शैलों से बने भूभाग उच्च भूखण्डों के रूप में ही खड़े रहते हैं। इन्हें ही **अवशिष्ट पर्वत** कहते हैं। (देखिए चित्र 7.4) भारत की नीलगिरि, पारसनाथ तथा राजमहल की पहाड़ियाँ अवशिष्ट पर्वतों के उदाहरण हैं

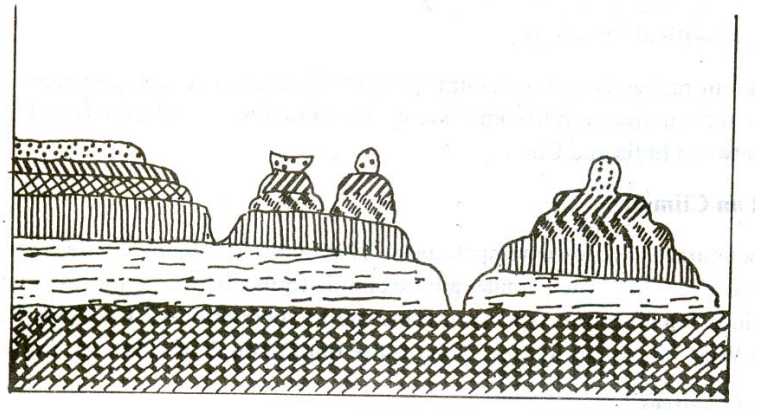

चित्र 7.4 अवशिष्ट पर्वत

- अपरदन की क्रिया का, कम प्रभाव पड़ने से कठोर शैलों के पर्वत श्रेणी के आकार में यत्रतत्र ऊँचे उठे भू–भाग अवशिष्ट पर्वत कहलाते हैं।
- निर्माण के आधार पर पर्वतों के प्रकार हैं: (1) वलित पर्वत (2) खण्ड पर्वत (3) ज्वालामुखी पर्वत (4) अवशिष्ट पर्वत।

7.3 पर्वतों का आर्थिक महत्व

पर्वत हमारे लिए निम्न प्रकार से उपयोगी हैं–

1. **संसाधनों के भण्डार** – पर्वत प्राकृतिक सम्पदा के भंडार हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की अप्लेशियन पर्वतमाला कोयले और चूना पत्थर के लिए प्रसिद्ध है। पर्वतों पर उगने वाले कई प्रकार के वनों में हमें विभिन्न उद्योगों के लिए इमारती लकड़ी, लाख, गोंद, जड़ी बूटियाँ तथा कागज उद्योगों के लिए लकड़ी प्राप्त होती हैं। पर्वतीय ढलानों पर चाय तथा फलों की कृषि का विकास हुआ है।

टिप्पणी

2. **जल विद्युत उत्पादन** – पर्वतीय प्रदेशों में बहने वाली नदियों के जल प्रपातों द्वारा जल विद्युत उत्पन्न की जाती है। कोयले की कमी वाले पर्वतीय देशों जैसे–जापान, इटली और स्विटजरलैण्ड में जल विद्युत का बहुत महत्व है।

3. **जल के असीम भंडार** – ऊँचे हिमाच्छादित या भारी वर्षा वाले पर्वतों से निकलने वाली सदा वाहिनी नदियाँ जल के भंडार हैं। उनसे नहरें निकाल कर खेतों की सिंचाई की जाती है, जिससे विभिन्न फसलों का अधिक उत्पादन होता है।

4. **उपजाऊ मैदानों के निर्माण में सहायक** – ऊँचे पर्वतों से निकलने वाली नदियाँ कटाव द्वारा मिट्टी बहाकर निचली घाटियों में जमा करती हैं, जिससे उपजाऊ मैदानों का निर्माण होता है। उत्तरी भारत का विशाल मैदान गंगा, सतलुज और ब्रह्मपुत्र नदियों की ही देन है।

5. **राजनीतिक सीमायें** – पर्वत दो देशों के बीच राजनीतिक सीमायें बनाते हैं तथा कुछ हद तक आपसी आक्रमण से बचाते हैं। हिमालय पर्वतमाला भारत और चीन के बीच राजनीतिक सीमा बनाये हुए हैं।

6. **जलवायु पर प्रभाव** – पर्वतों पर नीचे तापमान पाये जाते हैं। पर्वत दो प्रदेशों के बीच जलवायु विभाजक का कार्य करते हैं। उदाहरण के लिये हिमालय पर्वतमाला मध्य एशिया से आने वाली अति शीत पवनों को भारत में आने से रोकती है। वह दक्षिण–पश्चिम मानसून पवनों को भी रोककर उन्हें दक्षिणी ढलानों पर वर्षा करने को बाध्य करती है।

7. **पर्यटन केन्द्र** – प्राकृतिक सौन्दर्य के केन्द्र तथा स्वास्थ्यवर्धक स्थान होने के कारण बहुत से पर्वतीय स्थल पर्यटन केन्द्रों के रूप में विकसित हो जाते हैं। ऐसे स्थानों पर पर्यटन एवं होटल व्यवसाय विकसित हो जाते हैं। भारत के शिमला, नैनीताल, मसूरी तथा श्रीनगर पर्वतीय नगरों के उदाहरण हैं। ये सारी दुनिया के सैलानियों को आकर्षित करते हैं।

पाठगत प्रश्न 7.1

1. धरातल पर पाये जाने वाले तीन प्रकार के प्रमुख स्थलरूपों के नाम बताइए–
   (क)_____ (ख)_____ (ग)_____
2. अति संक्षिप्त उत्तर दीजिए–
   (क) वलित पर्वत किस प्रकार की शैलों से बने हैं?
   (ख) वलित पर्वतों का निर्माण किस बल के द्वारा होता है?
   (ग) भारत के चार प्रमुख पर्वतीय नगरों के नाम बताइए।
   (i) _____ (ii) _____
   (iii) _____ (iv) _____

3. कोष्ठक में दिये गये रिक्त स्थान पर पर्वतों का प्रकार लिखिए–

(क) ब्लैक फॉरेस्ट (_____) (ख) नीलगिरि (_____)

(ग) फ्यूजीयामा (_____) (घ) एंडीज (_____)

7.4 पठार

पठार पृथ्वी की सतह का लगभग 18 प्रतिशत भाग घेरे हुये हैं। पठार एक बहुत विस्तृत ऊँचा भू–भाग है, जिसका सबसे ऊपर का भाग पर्वत के विपरीत लम्बा–चौड़ा और लगभग समतल होता है। पठारी क्षेत्र में बहने वाली नदियाँ पठार पर प्रायः गहरी घाटियाँ और महाखड्ड बनाती हैं। इस प्रकार पठार का मौलिक समतल रूप कटा–फटा या ऊबड़–खाबड़ हो जाता है। फिर भी पठार आसपास के क्षेत्र या समुद्र तल से काफी ऊँचा होता है। पठार की ऊँचाई समुद्रतल से 600 मीटर ऊपर मानी जाती है। परन्तु तिब्बत और बोलिविया जैसे पठार समुद्र तल से 3600 मीटर से भी अधिक ऊँचे हैं।

- पठार आस–पास की भूमि से ऊँचा उठा हुआ वह विस्तृत भू–भाग है, जिसका पृष्ठ लगभग समतल होता है जिसके किनारों का ढाल कभी–कभी बिल्कुल खड़ा होता है।

7.5 पठारों का वर्गीकरण

भौगोलिक स्थिति एवं संरचना के आधार पर पठारों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है– (क) अन्तरा पर्वतीय पठार (ख) गिरिपद पठार, (ग) महाद्वीपीय पठार।

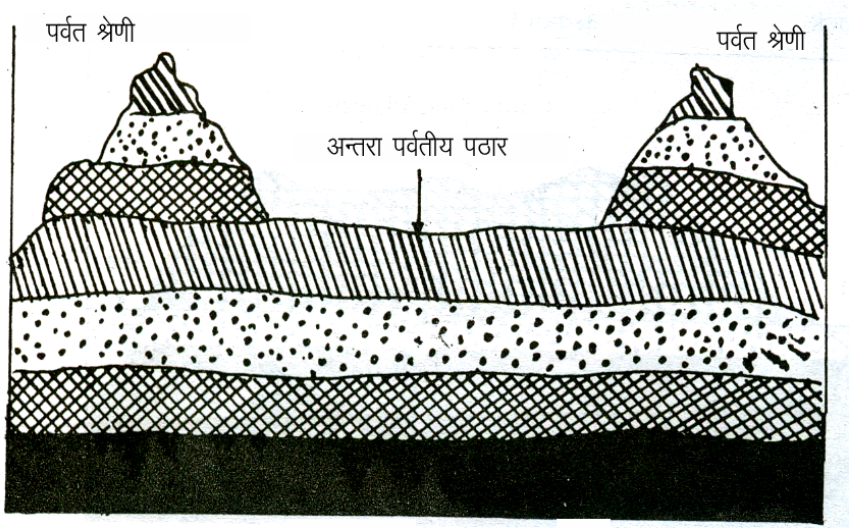

चित्र 7.5 अन्तरा पर्वतीय पठार

(क) **अन्तरा पर्वतीय पठार :** चारों ओर से ऊँची पर्वत श्रेणियों से पूरी तरह या आंशिक रूप से घिरे भू–भाग को **अन्तरा पर्वतीय पठार** कहते हैं। (देखिए चित्र 7.5)

टिप्पणी

उर्ध्वाधर हलचलें लगभग क्षैतिज संस्तरों वाली शैलों के बहुत बड़े भूभाग को समुद्रतल से हजारों मीटर ऊँचा उठा देती है। संसार के अधिकांश ऊँचे पठार इसी श्रेणी में आते हैं। इनकी औसत ऊँचाई 3000 मीटर है। तिब्बत का विस्तृत एवं 4500 मीटर ऊँचा उठार ऐसा ही एक उदाहरण है। यह वलित पर्वत जैसे हिमालय, काराकोरम, क्यूनलुन, तियनशान से दो ओर से घिरा हुआ है। कोलोरेडो दूसरा चिर परिचित उदाहरण है जो एक किलोमीटर से अधिक ऊँचा है, जिसे नदियों ने ग्रॉंड केनियन तथा अन्य महाखड्डों को काटकर बना दिया है। मेक्सिको, बोलीविया, ईरान और हंगरी इसी प्रकार के पठार के अन्य उदाहरण है।

(ख) **गिरिपद (पीडमान्ट) पठार:** पर्वत के पदों में स्थित अथवा पर्वतमाला से जुड़े हुए पठारों को जिनके दूसरी ओर मैदान या समुद्र हों, **गिरिपद पठार** कहते हैं। (देखिए चित्र 7.6)। इन पठारों का क्षेत्रफल प्रायः कम होता है। इन पठारों का निर्माण कठोर शैलों से होता है। भारत में मालवा पठार, दक्षिण अमेरिका में पैटेगोनिया का पठार जिसके एक ओर अटलांटिक महासागर है और संयुक्त राज्य अमेरिका में एप्लेशियन पर्वत और अटलांटिक तटीय मैदान के बीच एप्लेशियन पठार इसके उदाहरण हैं। ये किसी समय बहुत ऊँचे थे परन्तु अब अपरदन के बहुत से कारकों द्वारा घिस दिए गए हैं। इसी कारणवश इन्हें अपरदन के पठार भी कहा जाता है।

(ग) **महाद्वीपीय पठार :** धरातल के एक बहुत बड़े भाग के ऊपर उठने या बड़े भू–भाग पर लावा की परतों के काफी ऊँचाई तक जाने से महाद्वीपीय पठारो का निर्माण होता है। महाराष्ट्र का लावा पठार, उत्तर–पश्चिम संयुक्त राज्य अमेरिका में स्नेक नदी पठार, इस प्रकार के पठारों के उदाहरण हैं। इनको निक्षेपण के पठार भी कहते हैं। महाद्वीपीय पठार अपने आस–पास के क्षेत्रों तथा समुद्र तल से स्पष्ट ऊँचे उठे दिखते हैं। इस प्रकार के पठारों का विस्तार सबसे अधिक है। भारत का विशाल पठार, ब्राजील का पठार, अरब का पठार, स्पेन, ग्रीनलैण्ड और अंटार्कटिका के पठार, अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया के पठार महाद्वीपीय पठारों के उदाहरण हैं।

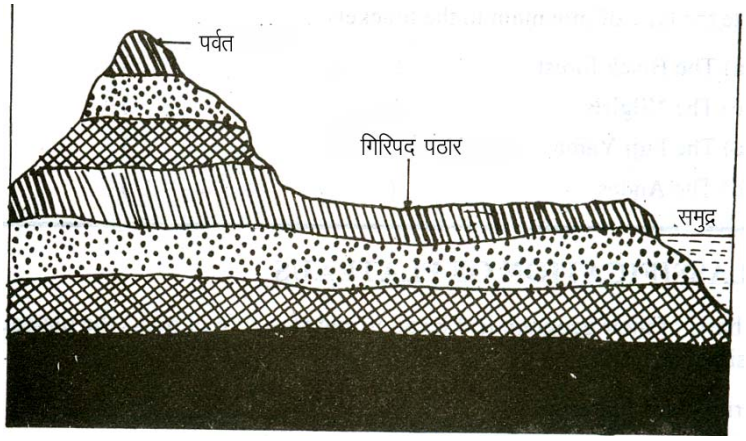

चित्र 7.7 महाद्वीपीय पठार

टिप्पणी

- चारों ओर से ऊँची श्रेणियों से घिरे पठारों को अन्तरा पर्वतीय पठार कहते है।
- धरातल के विस्तृत भू–भाग के ऊपर उठने अथवा लावा की परतों के जम जाने से बने पठार महाद्वीपीय पठार कहलाते हैं।
- पर्वत की तलहटी में स्थित पठार जिनके दूसरी ओर समुद्र या मैदान हों गिरिपद पठार कहलाते हैं।

7.6 मानव जीवन में पठारों का महत्त्व

लम्बे समय से लगातार अपरदन के कारण पठार के तल प्रायः असमतल हो गये हैं, जिसके कारण यहाँ, आवागमन के साधनों तथा जनसंख्या का पर्याप्त विकास नहीं हो पाता। फिर भी पठार मानव के लिए बहुत उपयोगी हैं। पठारों ने मानव जीवन को निम्न प्रकार से प्रभावित किया है–

1. **खनिजों के भण्डार** – विश्व के अधिकांश खनिज पठारों से ही प्राप्त होते हैं, जिन खनिजों पर हमारे उद्योग कच्चे माल के लिए निर्भर हैं। पश्चिमी आस्ट्रेलिया के पठार में सोना, अफ्रीका के पठार में ताँबा, हीरा और सोना तथा भारत के पठार में कोयला, लोहा, मैंगनीज और अभ्रक के विशाल भंडार हैं।
2. **जल विद्युत उत्पादन** – पठारों के ढालों पर नदियाँ जल प्रपात बनाती हैं, यह जल प्राप्त जल विद्युत उत्पादन के आदर्श स्थल है।
3. **ठन्डी जलवायु** – उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पठारों के ऊँचे भाग ठण्डी जलवायु के कारण यूरोपवासियो को आकर्षित करते रहे, जहाँ रहकर उन्होंने अर्थव्यवस्था का विकास किया। उदाहरणार्थ दक्षिण और पूर्व अफ्रीका।
4. **पशु-चारण के लिए उपयोगी** - पठारी भाग पशुचारण के लिए बहुत उपयोगी हैं। ये भेड़, बकरियों के पालन के लिए बहुत उपयोगी है। भेड़, बकरियों से वस्त्रों के लिए ऊन तथा भोजन के लिए दूध और माँस की प्राप्ति होती है। लावा से बने पठार उपजाऊ हैं। अतः उन पर अन्य पठारों की अपेक्षा कृषि का अधिक विकास हुआ है।

- पठार अपने खनिज पदार्थों एवं उनके आसानी से दोहन के लिए महत्वपूर्ण हैं। जलविद्युत उत्पादन के लिए अनुकूल है। उनकी उपयुक्त जलवायु और कभी–कभी उपजाऊ मृदा पशुपालन और कृषि के लिए सहायक है।

पाठगत प्रश्न 7.2

1. अति संक्षिप्त उत्तर दीजिए–

   (क) तीन प्रकार के पठारों के नाम बताओ?

टिप्पणी

(i)_____ (ii)_____ (iii) _____

(ख) पठारों पर मिलने वाले तीन प्राकृतिक संसाधनों के नाम बताइए।

(i)_____ (ii)_____ (iii) _____

(ग) बनावट के आधार पर निम्नलिखित पठार किस–किस वर्गीकृत श्रेणी में आते हैं?

(i) पैटेगोनिया का पठार (ii) बोलिविया का पठार (iii) दक्कन का पठार

(i)_____ (ii)_____ (iii) _____

7.7 मैदान

धरातल पर पायी जाने वाली समस्त स्थलाकृतियों में मैदान सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। अति मंद ढाल वाली लगभग सपाट या लहरिया निम्न भूमि को मैदान कहते हैं। मैदान धरातल के लगभग 55 प्रतिशत भाग पर फैले हुए हैं। संसार के अधिकांश मैदान नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी से बने हैं। मैदानों की औसत ऊँचाई लगभग 200 मीटर होती है। नदियों के अलावा कुछ मैदानों का निर्माण वायु, ज्वालामुखी और हिमानी द्वारा भी होता है।

- अति मंद ढल वाली लगभग सपाट या लहरिया निम्न भूमि को मैदान कहते हैं।

7.8 मैदानों का वर्गीकरण

बनावट के आधार पर मैदानों का वर्गीकरण निम्न प्रकार है–

(क) संरचनात्मक मैदान, (ख) अपरदन द्वारा बने मैदान, (ग) निक्षेपण द्वारा बने मैदान।

(क) संरचनात्मक मैदान : इन मैदानों का निर्माण मुख्यतः सागरीय तल अर्थात् महाद्वीपीय निमग्न तट के उत्थान के कारण होता है। ऐसे मैदान प्रायः सभी महाद्वीपों के किनारों पर मिलते हैं। मैक्सिको की खाड़ी के सहारे फैला संयुक्त राज्य अमेरिका का दक्षिणी पूर्वी मैदान इसका उदाहरण है। भूमि के नीचे धंसने के कारण भी संरचनात्मक मैदानों का निर्माण होता है। आस्ट्रेलिया के मध्यवर्ती मैदान का निर्माण इसी प्रकार हुआ है।

(ख) अपरदन द्वारा बने मैदान : पृथ्वी के धरातल पर निरन्तर अपरदन की प्रक्रिया चलती रहती है, जिससे दीर्घकाल में पर्वत तथा पठार नदी, पवन और हिमानी जैसे कारकों द्वारा घिस कर मैदानों में परिणत हो जाते हैं। इस प्रकार बने मैदान पूर्णतः समतल नहीं होते। कठोर शैलों के टीले बीच–बीच में खड़े रहते हैं। उत्तरी

टिप्पणी

कनाडा एवं पश्चिमी साइबेरिया का मैदान अपरदन द्वारा बने मैदान हैं। अपरदन द्वारा बने मैदानों को समप्राय भूमि/पेनीप्लेन भी कहते हैं।

(ग) **निक्षेपण द्वारा बने मैदान :** ऐसे मैदानों का निर्माण नदी, हिमानी, पवन आदि तथा संतुलन के कारकों द्वारा ढोये अवसादों से झील या समुद्र जैसे गर्तों के भरने से होता है। जब मैदानों का निर्माण नदी द्वारा ढोये गये अवसादों के निक्षेपण से होता है तो उसे **नदीकृत या जलोढ़** मैदान कहते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप का सिन्धु–गंगा का मैदान, उत्तरी चीन में ह्वाँगहो का मैदान, इटली में पो नदी द्वारा बना लोम्बार्डी का मैदान और बाँग्लादेश का गंगा ब्रह्मपुत्र का डेल्टाई मैदान जलोढ़ मैदानों के विशिष्ट उदाहरण हैं। जब मैदानों का निर्माण झील में अवसादों के निक्षेपण से होता है तो उसे **सरोवरी या झील मैदान** कहते हैं। कश्मीर और मणिपुर की घाटियाँ भारत में सरोवरी मैदानों के उदाहरण हैं।

जब मैदान का निर्माण हिमानी द्वारा ढोये पदार्थों के निक्षेपण से होता है तो उसे **हिमानी कृत या हिमोढ़** मैदान कहते हैं। कनाडा और उत्तरी–पश्चिमी यूरोप के मैदान हिमानी कृत मैदानों के उदाहरण हैं।

जब निक्षेपण का प्रमुख कारक पवन होती है तो **लोयस मैदान** बनते हैं। उत्तरी–पश्चिमी चीन के लोयस मैदान का निर्माण पवन द्वारा उड़ाकर लाये गए सूक्ष्म धूल कण के निक्षेपण से हुआ है।

- महाद्वीपीय निमग्न तट के उत्थान अथवा भूमि के नीचे धंसने के कारण बने मैदान संरचनात्मक मैदान कहलाते हैं।
- पर्वत और पठारों के लम्बे समय तक अपरदन से बने मैदान अपरदन जनित मैदान या समप्राय भूमि कहलाती है।
- नदी, हिमानी, पवन, आदि तल संतुलन के कारकों द्वारा ढोये पदार्थों के जमाव से बने मैदानों को निक्षेपण द्वारा बने मैदान कहते हैं।
- निक्षेपण द्वारा बने मैदानों के प्रकार हैं–जलोढ़ मैदान, सरोवरी मैदान, हिमानी कृत मैदान और लोयस मैदान।

7.9 मैदानों का आर्थिक महत्व

मैदानों ने मानव जीवन को निम्न प्रकार से प्रभावित किया है:

(1) **उपजाऊ मृदा** – मैदानों की मृदा सबसे अधिक उपजाऊ तथा गहरी होती है। समतल होने के कारण सिंचाई के साधनों का पर्याप्त विकास हुआ है। इन दोनों के कारण मैदानों में कृषि सर्वाधिक विकसित है। इसीलिये मैदानों को 'संसार का अन्न भंडार' कहा जाता है।

(2) **उद्योगों का विकास** – समतल, उपजाऊ एवं सिंचाई की सुविधाओं के कारण मैदानों में कृषि प्रधान उद्योगों का विकास हुआ है। जिससे लोगों को रोजगार मिलता है तथा राष्ट्रीय उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति आय बढ़ती है। अधिक जनसंख्या के कारण कृषि तथा उद्योगों के लिए सस्ते श्रमिक मिल जाते हैं।

(3) **यातायात की सुविधा** – मैदानों का तल समतल होने के कारण यहाँ आवागमन के साधनों – रेलमार्गों, सड़को, हवाई अड्डों आदि का बनाना सुविधाजनक होता है।

(4) **सभ्यताओं के केन्द्र** – मैदान प्राचीन एवं आधुनिक सभ्यताओं के केन्द्र हैं। विश्व की प्रमुख नदी घाटी सभ्यताओं का उद्भव मैदानों में ही हुआ है। सिंधु घाटी की सभ्यता और नील घाटी सभ्यता इसके उदाहरण हैं।

(5) **नगरों की सभ्यता** – रेल, सड़क तथा नदियों द्वारा यातायात की सुविधाओं तथा कृषि और उद्योगों के विकास ने नगरों की स्थापना और विकास को प्रोत्साहित किया। मैदानों में विश्व के सबसे विकसित व्यापारिक नगर और पत्तन स्थित हैं। रोम, टोकियों, कोलकाता, यंगून (रंगून), कानपुर तथा पेरिस आदि नगर मैदानों में ही स्थित हैं।

- मैदानों का आर्थिक महत्त्व हैः समतल और उपजाऊ मृदा की प्राप्ति, उद्योगों के विकास की सुविधा, आवागमन के साधनों के विस्तार की सुविधा, प्राचीन एवं आधुनिक सभ्यताओं के केन्द्र और व्यापारिक नगरों और बन्दरगाहों की स्थापना।

पाठगत प्रश्न 7.3

1. अति संक्षिप्त उत्तर दीजिये–

   (क) बनावट के आधार पर मैदान किन तीन प्रकार के होते हैं?

   (i)_____ (ii)_____ (iii)_____

   (ख) नीचे लिखे मैदान बनावट के आधार पर किस वर्ग में आते हैं?

   (i) इटली का लोम्बार्डी मैदान (ii) उत्तरी पश्चिमी चीन का विशाल मैदान (iii) उत्तरी कनाडा का मैदान।

   (i)_____ (ii)_____ (iii)_____

2. ऐसी दो सभ्यताओं के नाम लिखो जो नदी घाटी में विकसित हुई है।

   (i)_____ (ii)_____

टिप्पणी

3. सरोवरी मैदानों के कोई दो उदाहरण बताइए–

(i)_____ (ii)_____

आपने क्या सीखा

पृथ्वी के धरातल पर पाई जाने वाली प्रमुख स्थलाकृतियाँ– पर्वत, पठार और मैदान हैं। शैलों की बनावट के अलावा इनके निर्माण में पृथ्वी के आन्तरिक तथा बाह्य बलों का भी पर्याप्त योगदान हैं। धरातल पर बने स्थलरूपों ने मानव जीवन को विभिन्न प्रकार से प्रभावित किया है। पर्वतों से निकली नदियों से उपजाऊ मैदानों का निर्माण हुआ है तथा कृषि और अन्य कार्यों के लिये जल की प्राप्ति होती है। पठारों को खनिज पदार्थों का कोष कहा गया है, जिनसे प्राप्त खनिजों पर हमारे अनेक उद्योग निर्भर हैं। इन सबके अलावा मानव निवास और जनसंख्या घनत्व भी स्थलरूपों द्वारा प्रभावित होते हैं। मैदानों में अधिक संख्या में लोग निवास करते हैं तथा जनसंख्या वृद्धि एक समस्या बन गई है। पठारों तथा पर्वतों पर धरातल के असमतल और कम उपजाऊ होने के कारण जनसंख्या का घनत्व कम पाया जाता है।

पाठांत प्रश्न

1. विश्व में पाए जाने वाले चार प्रकार के पर्वत बताइए तथा प्रत्येक प्रकार के पर्वत की संरचना का वर्णन कीजिए।
2. मानव के लिए पठार किस पकार उपयोगी हैं? वर्णन कीजिए।
3. मैदानों को ''सभ्यता का पालना'' क्यों कहा जाता है?
4. पर्वतों के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
5. निम्नलिखित में अन्तर बताइए:
   (क) अन्तरा पर्वतीय पठार और महाद्वीपीय पठार;
   (ख) खंड पर्वत और ज्वालामुखी पर्वत;
   (ग) संरचनात्मक मैदान और निक्षेपण द्वारा बने मैदान।
6. संसार के रेखामानचित्र में निम्नलिखित दर्शाइए:
   (क) रॉकी और आल्प्स पर्वत मालाएँ,
   (ख) पैटागोनिया और तिब्बत पठार,
   (ग) आस्ट्रेलिया की मध्यवर्ती निम्नभूमि और ह्वांगहो का मैदान

टिप्पणी

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

7.1

1. (क) पर्वत (ख) पठार (ग) मैदान
2. (क) अवसादी शैल/परतदार शैल
   (ख) क्षैतिज संपीडन–बल
   (ग) (i) शिमला, (ii) नैनीताल, (iii) मसूरी और (iv) श्रीनगर।
3. (क) खंड पर्वत, (ख) अवशिष्ट पर्वत,
   (ग) ज्वालामुखी पर्वत, (घ) वलित पर्वत।

7.2

1. (क) (i) अन्तरा पर्वतीय पठार, (ii) गिरिपद पठार, (iii) महाद्वीपीय पठार।
   (ख) (i) खनिज, (ii) जल एवं मृदा, (iii) घास स्थल
   (ग) (i) गिरिपद पठार, (ii) अन्तरा पर्वतीय पठार, (iii) महाद्वीपीय पठार।

7.3

1. (क) (i) संरचनात्मक, (ii) अपरदन द्वारा बने, (iii) निक्षेपण द्वारा बने।
   (ख) (i) डेल्टाई मैदान, (ii) लोयस मैदान, (iii) हिमानी कृत मैदान।
2. (i). सिंधु घाटी की सभ्यता, (ii) नील घाटी की सभ्यता
3. (i) कश्मीर की घाटी, (ii) मणिपुर की घाटी

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. अनुच्छेद 7.2 को देखिए।
2. अनुच्छेद 7.6 को देखिए।
3. अनुच्छेद 7.9 को देखिए।
4. अनुच्छेद 7.3 को देखिए।
5. विशेषता और बनावट के आधार पर अन्तर बताइए।
   (क) अनुच्छेद 7.5 का 'क' और 'ग' देखिए।
   (ख) अनुच्छेद 7.2 का 'ख' और 'ग' देखिए।
   (ग) अनुच्छेद 7.8 का 'क' और 'ग' देखिए।
6. एटलस देखिए।

टिप्पणी

8

महासागर : अंतः समुद्री उच्चावच तथा महासागरीय जल का परिसंचरण

पृथ्वी पर जीवित रहने के लिए पानी बहुत महत्त्वपूर्ण है। जीवन की सभी प्रक्रियाओं के लिए पानी की आवश्यकता होती है, जैसे कोशिका विकास, प्रोटीन निर्माण, प्रकाश संश्लेषण तथा पौधों एवं जानवरों द्वारा पौष्टिक तत्वों का विलयन। कुछ जीव ऐसे हैं जो वायु के बिना तो जीवित रह सकते हैं, परन्तु जल के बिना कोई भी जीव जीवित नहीं रह सकता। पृथ्वी पर जितना जल है, उस सारे जल को जलमंडल कहते हैं। यह जल नदियों, झीलों, कुओं, झरनों, समुद्रों और महासागरों में तरल रूप में होता है, ठोस रूप में बर्फ के रूप में होता है। गैस के रूप में जलवाष्प वायुमंडल का अंग होते हुए जलमंडल का भाग है। इस जलमंडल में महासागर सबसे बड़े जलखंड हैं। इस पाठ में हम महासागरीय बेसिन, उनका धरातलीय उच्चावच, महासागरीय जल के परिसंचरण के कारण एवं प्रभाव तथा महासागरों के महत्व के विषय में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- संसार के मानचित्र पर विभिन्न महासागरों एवं महाद्वीपों को पहचान सकेंगे;
- समुद्री उच्चावच के विभिन्न लक्षणों में अन्तर कर सकेंगे;
- महासागरीय जल के क्षैतिज एवं उर्ध्वाधर तापमान के वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का विश्लेषण कर सकेंगे;
- विश्व मानचित्र पर उच्च एवं निम्न लवणता के क्षेत्रों को दिखा सकेंगे तथा समुद्री जल में तापमान एवं लवणता के वितरण में भिन्नता के कारण बता सकेंगे;

टिप्पणी

- महासागरीय गतियों जैसे तरंगे, धाराएँ तथा ज्वार–भाटे के विषय में बता सकेंगे;
- तरंगों की उत्पत्ति को समझा सकेंगे;
- ज्वार की उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी विभिन्न कारकों को बता सकेंगे;
- भूमंडलीय पवनों एवं महासागरीय धाराओं के परिसंचरण के बीच सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे;
- महाद्वीपीय निमग्न तट के विशेष उल्लेख के साथ उपयुक्त उदाहरणों के द्वारा मानव के लिए महासागरों के महत्व को समझा सकेंगे।

8.1 महासागर बेसिन

सौरमंडल में हमारी पृथ्वी ही एक मात्र ग्रह है, जिस पर अत्यधिक मात्रा में जल है। इसीलिए इसे अक्सर 'जलीय ग्रह' कहा जाता है। पृथ्वी तल का लगभग 71 प्रतिशत भाग जल से घिरा हुआ है। महासागर एक विशाल और लगातार जल खण्ड है जो पृथ्वी के सभी भूखण्डों को चारों ओर से घेरे हुए है। दक्षिणी गोलार्द्ध के 4/5 तथा उत्तरी गोलार्द्ध के 3/5 भाग पर समुद्री जल है। इसमें विश्व के समूचे जल का 97.2 प्रतिशत जल है।

विश्व में चार मुख्य महासागर हैं – प्रशान्त महासागर, हिन्द महासागर, अटलांटिक महासागर तथा आर्कटिक महासागर। अन्य सभी समुद्र तथा अंतःस्थलीय समुद्र इन चारों मुख्य महासागरों के ही अंग हैं।

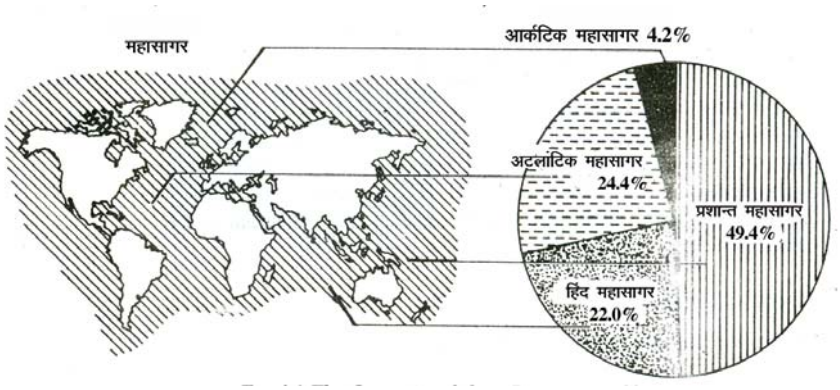

चित्र 8.1 पृथ्वी के समस्त समुद्री क्षेत्र का प्रतिशत के आधार पर महासागरों का भाग

8.2 महासागरीय बेसिन के उच्चावच

महसागरीय जल के भीतर अनेक प्रकार की भूआकृतियाँ छिपी हुई हैं जो कि महाद्वीपों की भू–आकृतियों से काफी मिलती–जुलती हैं। महासागरीय जल के नीचे पर्वत, पठार, पहाड़ियाँ, खाइयाँ और गड्ढे हैं। महासागर के अधस्तल पर पाई जाने वाली ये आकृतियाँ अंतः समुद्री उच्चावच कहलाती हैं।

महासागरों के बेसिनों को मोटे तौर पर चार भागों में बाँटा जाता है। ये हैं–

(क) महाद्वीपीय निमग्न तट;

(ख) महाद्वीपीय ढाल;

(ग) वितल मैदान;

(घ) महासागरीय गभीर।

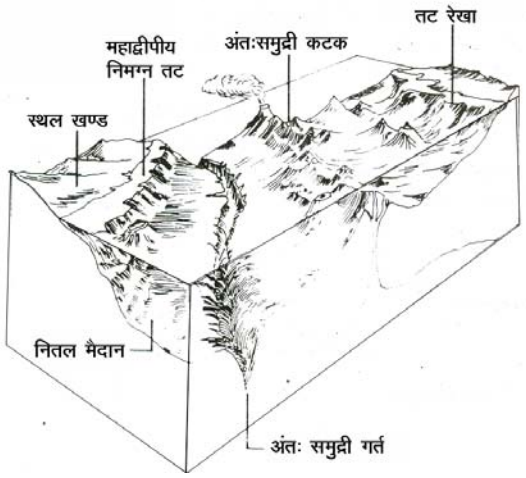

चित्र 8.2 महासागरीय बेसिन के उच्चावच

(क) महाद्वीपीय निमग्न तट

महाद्वीपों से महासागरों को अलग करने वाली कोई स्पष्ट सीमा रेखा नहीं है। वास्तव में महाद्वीप तटरेखा पर एकाएक समाप्त नहीं हो जाते। उनका तट से समुद्र की ओर धीरे–धीरे ढाल बढ़ता जाता है और वे एक ऐसे बिन्दु पर पहुँचते है जहाँ पर ढाल बहुत अधिक तीव्र हो जाता है। महाद्वीप का यह उथला जलमग्न विस्तार, महाद्वीपीय निमग्न तट कहलाता है। महाद्वीपीय निमग्न तट के जल की गहराई 120 मीटर से 370 मीटर तक होती है। महाद्वीपीय निमग्न तट की चौड़ाई में काफी भिन्नता होती है। वह कुछ किलोमीटर से लेकर सौ किलोमीटर से भी अधिक हो सकती है। इस भिन्नता को भारतीय उपमहाद्वीप के संदर्भ में भी देखा जा सकता है। भारत के पूर्वी तट का महाद्वीपीय निमग्न तट पश्चिमी तट के महाद्वीपीय निमग्न तट की अपेक्षा अधिक चौड़ा है। इसी प्रकार की भिन्नताएँ सम्पूर्ण विश्व में देखी जा सकती हैं। पश्चिमी यूरोप का महाद्वीपीय निमग्न तट 320 किलोमीटर तक फैला है। फ्लोरिडा के तट से इसकी चौड़ाई 240 किलोमीटर है। कुछ महाद्वीपों से विशेषकर जहाँ वलित पर्वत तट के समानान्तर या निकले होते हैं, ये महाद्वीपीय निमग्न तट या तो बहुत संकीर्ण होते हैं या होते ही नहीं हैं। ऐसा पूर्वी प्रशान्त महासागर में देखा जाता है।

टिप्पणी

अधिकतर महाद्वीपीय निमग्न तट स्थल के ही अंश माने जाते हैं। ये समुद्री जल स्तर के बढ़ जाने के कारण जलमग्न हो गए हैं। बहुत से विद्वान इनके निर्माण का कारण या तो लहरों से होने वाले अपरदन को मानते हैं या तटवर्ती वेदिका पर नदी के बहाव के साथ आई सामग्री के निक्षेप से स्थलखंड के विस्तार को मानते हैं। कभी कुछ तटवर्ती क्षेत्र बर्फ की पर्त से आच्छादित थे और संभवतः वे हिमानी निक्षेप के कारण विकसित हुए हों।

महाद्वीपीय निमग्न तट मनुष्य के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। सूर्य की रोशनी महाद्वीपीय निमग्न तट के छिछले जल में से होकर समुद्र तली तक पहुँचकर सूक्ष्म पौधों और जीवों की वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न करती है। इन सूक्ष्म जीवों को प्लवक कहते हैं, ये प्लवक मछलियों का आहार हैं। महाद्वीपीय निमग्न तट मछलियों तथा खनिजों जिसमें रेत और कंकड़ पत्थर भी शामिल हैं, के स्रोत हैं। विश्व भर में प्राप्त अधिकतर खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस इन्हीं महाद्वीपीय निमग्न तटों से प्राप्त होती हैं। बम्बई हाई तथा गोदावरी बेसिन में खनिज तेल की नवीन खोज, खनिज तेल के लिए अपतट बेधन के उदाहरण हैं। प्रवाल भित्ति और जैव खंडज पदार्थ महाद्वीपीय निमग्न तटों पर सामान्य रूप से पाये जाते हैं।

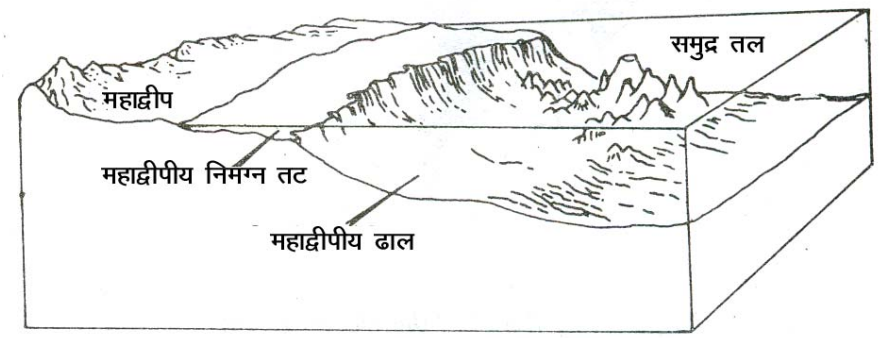

चित्र 8.3 अंतः समुद्री केनियन

महाद्वीपीय निमग्न तट की एक उल्लेखनीय विशेषता इसमें पाई जाने वाली अंतः समुद्री केनियन (महाखड्ड) हैं, जो महाद्वीपीय ढाल तक चली जाती हैं। समुद्र तल में बनी हुई ये केनियन तीव्र ढाल वाली घाटियों के समान हैं। गोदावरी नदी के मुहाने के सामने गोदावरी केनियन 502 मीटर गहरी है।

अंतः समुद्री केनियन के निर्माण का एक कारण समुद्री जल के नीचे होने वाले भूस्खलन है। महाद्वीपीय निमग्न तट पर इकट्ठा होने वाला तलछट तूफान या भूकम्प द्वारा हटा दिया जाता है। हटते हुए इन तलछटों के बल के कारण ढाल कटते रहते हैं और इसके परिणामस्वरूप अंतः समुद्री केनियन बन जाते है। महाद्वीपीय निमग्न तट साधारणतः उन राष्ट्रों की समुद्री जल सीमा बनाते हैं, जिनसे वे लगे हुए होते हैं।

टिप्पणी

- महाद्वीपीय निमग्न तट महाद्वीपों का वह जलमग्न भाग है जो तटरेखा से समुद्र की ओर धीरे–धीरे नीचा होता चला जाता है।
- अंतः समुद्री केनियन तीव्र ढाल वाली घाटियाँ हैं जिनका निर्माण महाद्वीपीय निमग्न तट पर कटाव से होता है तथा जो महाद्वीपीय ढाल की ओर चली जाती है।

(ख) महाद्वीपीय ढाल

महाद्वीपीय सीमांत का वह निरंतर ढलवा भाग जो कि महाद्वीपीय निमग्न तट से सागर की ओर वितल मैदान तक विस्तृत होता है, महाद्वीपीय ढाल के रूप में जाना जाता है। यह 2.5^0 के ढाल द्वारा वर्गीकृत किया जाता है। इसकी गहराई 180 मीटर से 360 मीटर तक होती है। कुछ स्थानों पर, जैसे फिलिपीन्स के तट के पास, महाद्वीपीय ढाल बहुत गहरा है।

महाद्वीपीय ढाल में मुख्यतः तीव्र ढाल और तट से दूरी के बढ़ जाने के कारण तलछट निक्षेप बहुत कम मिलता है। महाद्वीपीय निमग्न तट की तुलना में यहाँ समुद्री जीव भी बहुत कम मिलते हैं।

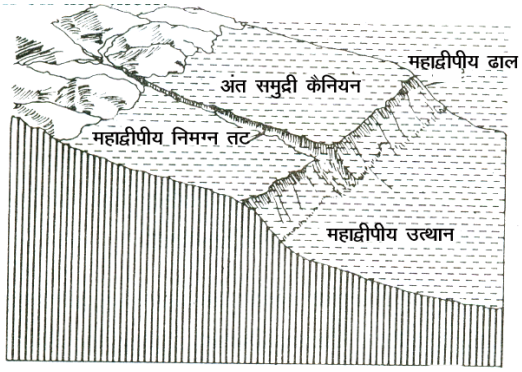

चित्र 8.4 महाद्वीपीय निमग्न तट और ढाल

महाद्वीपीय ढाल के तल के साथ–साथ तलछट के निक्षेप होते हैं। तलछट के निक्षेपों का यह क्षेत्र महाद्वीपीय उत्थान का निर्माण करता है। कुछ क्षेत्रों में यह उत्थान बहुत ही संकरा होता है, किन्तु कहीं–कहीं इसकी चौड़ाई 600 किलोमीटर तक जाती है।

- समुद्री अधस्तल का वह तीव्र ढाल वाला भाग जो वितल मैदान और महाद्वीपीय निमग्न तट के बीच है, महाद्वीपीय ढाल कहलाता है।
- महाद्वीपीय ढाल के तल के साथ–साथ जमा हुए तलछट का क्षेत्र महाद्वीपीय उत्थान कहलाता है।

(ग) वितल मैदान

वितल मैदान गहरे महासागरीय तल के अत्यन्त समतल तथा आकृति विहीन मैदान हैं। संभवतः यह विश्व के सबसे समतल क्षेत्र हैं। वितल मैदान, 300 से 600 मीटर की

टिप्पणी

गहराई पर महासागरीय तल के एक विस्तृत भाग मे फैले हुए है। यह पहले लक्षणहीन मैदान माने जाते थे, परन्तु आधुनिक यंत्रों से पता चला है कि ये भी उसी प्रकार से विषम हैं जिस प्रकार से महाद्वीपीय मैदान धरातल पर है। इनमें व्यापक रूप से समुद्री पठार, पहाड़ियाँ, गाईआट और समुद्री पर्वत हैं।

वितल मैदान का तल तलछट से भरा हुआ है। महाद्वीपों के निकटवर्ती वितल मैदान अधिकांशतः स्थल खंड से आए तलछट से भरे हुए हैं। लेकिन जिन समुद्रों में जीवों की अत्यधिक वृद्वि होती है उन पर तलछट की मोटी परत होती है और इस तलछट का निर्माण समुद्री जीवों के अस्थि–पंजरों से होता है। इन तलछटों को ऊज या सिंधुपंक कहते हैं। कुछ खुले समुद्रों में पर्याप्त मात्रा में जीव जन्तु नहीं होते इसलिए उनके अधस्तल पर ऊज नहीं बनता। इनमें जो तलछट भरा होता है, उसे लाल सिंधुपंक कहते हैं। इस **लाल सिंधुपंक** का निर्माण ज्वालामुखी के कारण होता है या पवन तथा नदियों के द्वारा लाए गए छोटे–छोटे कणों से होता है।

(i) अंतः समुद्री पर्वत श्रेणी या कटक

महाद्वीपों पर विद्यमान विशाल पर्वत पद्धति समुद्र के जल के नीचे भी विद्यमान है। इन महासागरीय पर्वतों को **अंतः समुद्री पर्वत** श्रेणी कहते है। ये रेखीय मेखला के समान हैं, जो महासागरों के मध्य स्थित हैं। अतः इन्हें **मध्य महासागरीय पर्वत** श्रेणी भी कहते हैं। सभी मध्य महासागरीय पर्वत श्रेणी एक विश्वव्यापी व्यवस्था का निर्माण करती हैं ये एक महासागर से दूसरे महासागर के साथ परस्पर जुड़ी हुई हैं। ये पर्वत श्रेणियाँ कहीं–कहीं भ्रंशों द्वारा कट जाती हैं, जहाँ प्रायः भूकंप आते हैं। महासागरीय पर्वत श्रेणियों में ज्वालामुखी आम बात हैं, जिससे कई प्रकार के समुद्री धरातलीय लक्षणों का निर्माण होता है।

मध्यवर्ती अटलांटिक पर्वत श्रेणी सबसे बड़ी और अविच्छिन्न जलमग्न पर्वत श्रेणी है जो अटलांटिक महासागर के मध्य में उत्तर से दक्षिण तक जाती है। इसकी आकृति अंग्रेजी के अक्षर 'एस' के समान है। कुछ स्थानों पर इसकी चोटियाँ जल की सतह के ऊपर आ जाती हैं और द्वीपों का निर्माण करती हैं। बहुत से द्वीपों का उद्‌गम ज्वालामुखी के कारण होता है। पूर्वी प्रशांत महासागरीय कटक और कार्लबर्ग कटक कुछ महत्वपूर्ण अंतः समुद्री पर्वत श्रेणियाँ हैं। (देखिए चित्र 8.5)

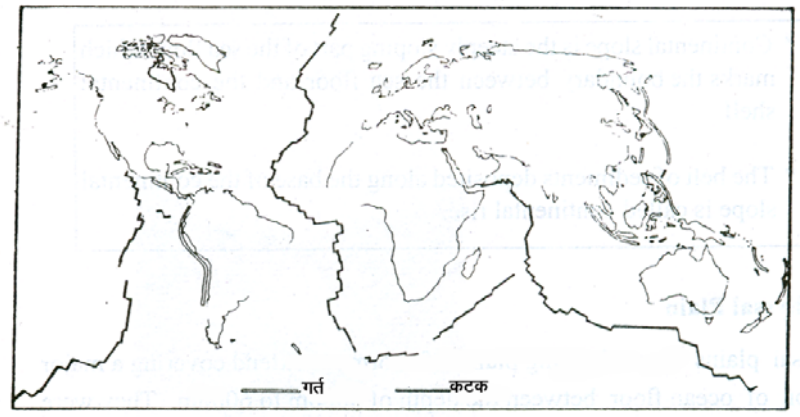

चित्र 8.5 अंतः समुद्री कटक एवं गर्तों की विश्वव्यापी व्यवस्था

टिप्पणी

(ii) समुद्री टीला और गाईऑट

समस्त समुद्री अधस्तल के ऊपर बिखरे हुए हजारों जलमग्न ज्वालामुखी हैं। इनके शीर्ष नुकीले होते हैं। इन्हें समुद्री टीला कहते हैं। कभी–कभी ये समुद्री टीले इक्के–दुक्के द्वीपों के रूप में समुद्री अधस्तल से ऊपर उठ जाते हैं। हवाई और ताहिती द्वीप ज्वालामुखी की अनावृत चोटियाँ हैं। समुद्रतल के ऊपर उठने वाले ज्वालामुखी की चोटी जब अपरदन द्वारा चौरस हो जाती है और पानी से ढक जाती है तो उसे **गाईऑट (निमग्न द्वीप)** कहते हैं।

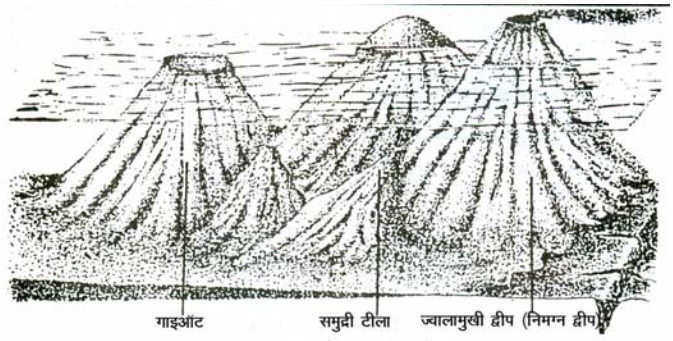

चित्र 8.6 समुद्री टीला और गाईऑट (निमग्न द्वीप)

(घ) महासागरीय गभीर

महासागरीय गभीर अधस्तल महासागर का सबसे गहरा भाग होता है। महासागरीय अधस्तल पर लम्बी, तीव्र ढाल वाली, संकरी और चौरस तल की खाइयाँ होती हैं। इन्हें सामान्यतः अंतः समुद्री गर्त कहते हैं। ये गर्त हमेशा महासागरों के बेसिनों के मध्य में नहीं होते जैसा कि सामान्यतः विश्वास किया जाता है; बल्कि उन महाद्वीपों के अत्यधिक निकट या सामानान्तर होते हैं जहाँ वलित पर्वत सीमा बनाते हैं। ये गर्त प्रायः ज्वालामुखी और भूकम्पीय हलचल वाले क्षेत्रों के निकट पाए जाते हैं। बड़े भूकम्पों और सुनामी की उत्पत्ति यहीं होती है। ये गर्त सभी प्रमुख महासागरों में पाए जाते हैं। प्रशान्त महासागर में इनकी संख्या सबसे अधिक है। प्रशान्त महासागर में स्थित मेरियाना गर्त विश्व में ज्ञात गर्तों में सबसे गहरा है। यह गर्त या खाई इतनी गहरी है कि इसमें अगर विश्व के सर्वोच्च पर्वत शिखर माऊँट एवरेस्ट को रख दें तब भी इसकी चोटी के ऊपर कुछ किलोमीटर समुद्री जल रहेगा।

- वितल मैदान विशाल लहराते हुए मैदान हैं जिनमें कई विषमताएँ मिलती है, जैसे समुद्री पठार, पहाड़ियाँ, गाईऑट और समुद्री पर्वत।
- महासागरों में लम्बी, संकरी तथा तीव्र ढाल वाली और चौरस तल की खाइयों को महासागरीय गभीर कहते हैं।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 8.1

1. रिक्त स्थान भरिए :–

   (i) चार प्रमुख महासागर हैं –

   (क) _____ (ख) _____

   (ग) _____ (घ) _____

   (ii) महासागर बेसिन के चार मुख्य उपखंड –

   (क) _____ (ख) _____

   (ग) _____ (घ) _____

   (iii) महाद्वीप का महासागरीय जल से जलमग्न खंड कहलाता है –

   _____

   (iv) वितल मैदान पर निक्षेपित दो मुख्य तलछट हैं –

   (क) _____ (ख) _____

   (v) महासागरीय अधस्तल पर बनी लंबी, संकरी तथा तीव्र ढाल वाल खाइयाँ कहलाती हैं

   _____

   (vi) नुकीले शीर्ष वाला जलमग्न ज्वालामुखी कहलाता है–

   _____

   (vii) प्रशान्त महासागर में संसार का सबसे गहरा गर्त है–

   _____

2. सही उत्तर पर (√) निशान लगाइये :–

   (i) महाद्वीपीय निमग्न तट और वितल मैदान के बीच स्थित है –

   (क) महाद्वीपीय ढाल (ख) वितल मैदान (ग) गर्त (घ) समुद्री टीले।

   (ii) विश्व का सर्वोत्तम मत्स्य ग्रहण क्षेत्र है –

   (क) महाद्वीपीय निमग्न तट (ख) वितल मैदान

   (ग) अंतः समुद्री गर्त (घ) महासागरीय गभीर।

3. सही कथन पर (√) निशान लगाइये –

   (i) चौरस शिखर वाला जलमग्न ज्वालामुखी समुद्री टीला कहलाता है।

टिप्पणी

(ii) प्राणहीन वस्तुओं से ऊज बनता है।

(iii) अंतः समुद्री पर्वत श्रेणी पर्वतों की अविच्छिन्न कड़ी है।

8.3 महासागरीय जल की विशेषताएँ

तापमान और लवणता महासागरीय जल के दो ऐसे गुण हैं जो विशाल जलराशियों के संचरण को प्रभावित करते हैं। अतः महासागरीय जल के परिसंचरण के अध्ययन में महासारीय जल के तापमान, लवणता तथा घनत्व का विशेष महत्व है।

(i) महासागरीय जल का तापमान

महासागरीय जल के तापमान में भी स्थलीय धरातल के समान विविधता पाई जाती है। विभिन्न अक्षांशों पर विभिन्न ऋतुओं में प्राप्त ऊर्जा की मात्रा में विविधता सूर्यातप पर निर्भर करती है। सामान्यतः विषुवत वृत्त के समीप जल सबसे अधिक गर्म रहता और इसका तापमान ध्रुवों की ओर क्रमशः घटता जाता है। उष्ण कटिबन्धीय सागरों में वार्षिक औसत तापमान लगभग 27^0 सेल्सियस या इससे कुछ अधिक होता है, लेकिन ध्रुवों की ओर यह घटता जाता है। ध्रुवों पर वार्षिक औसत तापमान लगभग -1.8^0 सेल्सियस पाया जाता है। ध्रुवों की ओर महासागरीय जल के तापमान का घटना अथवा विषुवत वृत्त की ओर इसके तापमान का बढ़ना एक समान नहीं होता; क्योंकि उष्ण कटिबन्धीय सागरों से गर्म जल उच्च अक्षांशों की ओर चला जाता है अथवा इसके विपरीत हो जाता है। इसके फलस्वरूप समुद्री जल के स्थानीय तापमान में वृद्धि या कमी हो जाती है। कभी–कभी ठण्डा निम्न स्तरीय जल ऊपर उठने से भी उष्ण और उपोष्ण कटिबन्धीय सागर के स्थानीय जल के तापमान को कम कर देता है।

सबसे अधिक तापमान स्थल से घिरे हुए उष्ण कटिबन्धीय सागरों में होता है, उदाहरण के लिए लाल सागर। आर्कटिक महासागर और अंटार्कटिक महासागर का जल इतना ठंडा होता है कि सैकड़ों मीटर की गहराई तक वह स्थाई रूप से जमा रहता है। ग्रीष्म ऋतु में बर्फ बड़े–बड़े हिस्सों में टूटकर हिमखंड़ों के रूप में आस–पास के सागरों में तैरने लगते हैं। इनके फलस्वरूप आस–पास के उन हिममुक्त सागरों के सतही जल का भी तापमान घट जाता है।

तापमान के उर्ध्वाधर वितरण में भी विविधता पाई जाती है। गहराई बढ़ने के साथ–साथ तापमान घटता जाता है। यह इसलिए होता है; क्योंकि महासागरीय जल का ऊपरी भाग अधिकतम सूर्यातप प्राप्त करता है। सूर्य की किरणें जैसे–जैसे अन्दर प्रवेश करती हैं, प्रकीर्णन, परावर्तन तथा विसरण के कारण उनकी शक्ति घटती जाती है। हालांकि तापमान की यह ह्रास दर सभी गहराइयों पर एक समान नहीं होती। लगभग 100 मीटर की गहराई तक जल का तापमान लगभग सतह के तापमान के बराबर रहता है। जबकि सतह से 1800 मीटर की गहराई पर तापमान लगभ 15^0 सेल्सियस से घटकर 2^0 सेल्सियस रह जाता है। 1800 मीटर से 4000 मीटर की गहराई पर तापमान घटकर 2^0 सेल्सियस से 1.6^0 सेल्सियस रह जाता है।

टिप्पणी

महासागरीय जल के गर्म होने की मुख्य प्रक्रियाएँ हैं –

(1) सौर विकिरण का अवशोषण,

(2) पृथ्वी के आंतरिक भाग से महासागरीय वितल द्वारा ऊष्मा का संवहन।

महासागरीय जल के ठंडे होने की मुख्य प्रक्रियाएँ हैं –

(1) समुद्री सतह से ऊष्मा का विकिरण,

(2) वाष्पीकरण।

(ii) महासागरीय जल की लवणता

लवणता महासागरीय जल का एक विशेष गुण है। जब हम लवणता की बात करते हैं तो हमारा संकेत केवल साधारण नमक या सोडियम क्लोराइड से ही नहीं होता, बल्कि दूसरे कई अन्य लवणों से भी होता है। इन लवणों में प्रमुख हैं सोडियम क्लोराइड तथा मेग्नीशियम क्लोराइड जो महासागरीय जल में क्रमशः 77.7 प्रतिशत एवं 10.9 प्रतिशत पाए जाते हैं। महासागरीय जल के स्वतंत्र परिसंचरण के कारण इसमें विभिन्न लवणों का सापेक्षिक अनुपात सभी महासागरों में और यहाँ तक कि काफी गहराई पर भी लगभग स्थिर रहता है। लेकिन महासागरीय जल की लवणता में अलग अलग सागरों में अवश्य अन्तर होता है।

अनेक रासायानिक यौगिकों के जल में घुल जाने से ही महासागरीय जल में लवणता उत्पन्न होती है। 1000 ग्राम समुद्री जल के वाष्पीकृत हो जाने के बाद बचे हुए ठोस पदार्थ का भार ग्राम में लवणता के रूप में परिभाषित किया जाता है। अगर उस ठोस पदार्थ का भार 35 ग्राम है (और यह सामान्यतः इस संख्या के निकट ही होता है।) तो लवणता को व्यक्त किया जायेगा 35‰ (35 ग्राम प्रति हजार ग्राम) अर्थात प्रति 1000 ग्राम समुद्री जल में औसत लवणता 35 ग्राम होगी। लवणता को प्रतिशत में व्यक्त न करके प्रति हजार में व्यक्त करते हैं।

बाल्टिक सागर में, जहाँ नदियों का ताजा जल सागर में गिरता है, वहाँ लवणता की मात्रा 7‰ है और यह कभी–कभी 2‰ तक गिर जाती है। लेकिन वाष्पीकरण और शुष्क जलवायु के कारण लाल सागर में लवणता 41 से 42‰ तक होती है। स्थल से घिरे हुए सागरों जैसे केस्पियन सागर और जोर्डन के मृत सागर में लवणता बहुत अधिक क्रमशः 180‰ तथा 250‰ तक होती है।

विभिन्न सागरों एवं महासागरों में लवणता में अन्तर के मुख्य कारण हैं –

(i) वाष्पीकरण की दर,

(ii) नदियों तथा हिमखंडों के फलस्वरूप ताजे जल की आपूर्ति,

(iii) महासागरीय जलों का आपस में मिलना।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 8.2

(1) लवणता की परिभाषा दीजिए।

_____

_____

(2) यदि ग्रेट साल्ट झील के 1000 ग्राम जल के वाष्पीकरण के पश्चात 250 ग्राम लवण शेष बचे तो इस झील के जल की लवणता कितनी होगी?

_____

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क) विषुवतीय प्रदेश में सागरीय सतह पर सौर विकिरण _____ होता है जबकि ध्रुवीय प्रदेश में _____ होता है।

(ख) समुद्री जल की औसत लवणता _____ है।

(ग) स्थल से घिरे हुए समुद्रों में लवणता _____ होती है।

8.4 महासागरीय जल में गति

महासागरों का जल सदा गतिशील रहता है। महासागरीय जल में मुख्यतः तीन प्रकार की गतियाँ होती हैं – तरंगे, ज्वार भाटा तथा धाराएं।

(I) तरंगे

तरंगें जल तल के ऊपर उठने व नीचे गिरने के कारण होने वाली दोलनी गति है।

वास्तव में तरंग में प्रत्येक जलकण की गति गोलाकार होती है। तरंगों की तुलना गेहूँ के लहराते हुए खेतों से की जा सकती है। जब किसी खेत में तेज पवन बहती है तो तरंगों जैसी गति उसकी सतह पर दिखाई देती है। लेकिन तरंग के चले जाने के बाद गेहूँ की बालियाँ अपनी मूल स्थिति में लौट आती हैं। ठीक वैसे ही तरंगों में भी जल कण तरंग के चले जाने के बाद अपनी मूल स्थिति में लौट आते हैं।

तरंग के दो मुख्य भाग होते हैं। तरंग के ऊपरी उठे भाग को **तरंग-श्रृंग** कहते हैं। दो तरंग–श्रृंगों के बीच के निचले भाग को **तरंग-गर्त** कहते हैं। तरंग–श्रृंग तथा तरंग–गर्त के मध्य की ऊर्ध्वाधर दूरी को **तरंग की ऊँचाई** कहते हैं। दो तरंग–श्रृंगों अथवा दो तरंग–गर्तों के बीच की क्षैतिज दूरी को **तरंग-दैर्ध्य** या तरंग की लम्बाई कहते हैं। किसी भी निश्चित स्थान पर दो लगातार श्रृंगों के गुजरने के बीच की अवधि को तरंग

टिप्पणी

का **आवर्त-काल** कहते हैं। तेज गति वाली तरंगों का आवर्त–काल छोटा होता है, जबकि धीमी गति वाली तरंगों का आवर्त–काल लम्बा होता है (चित्र 8.7)।

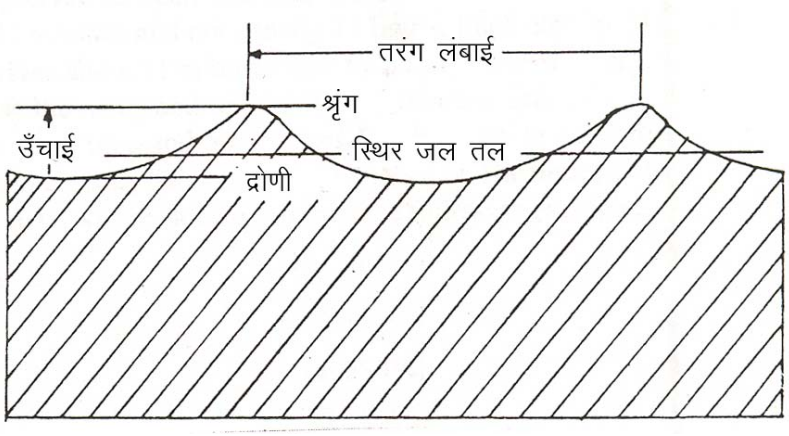

चित्र 8.7 तरंग के घटक

तरंगों के आकार और बल तीन कारकों पर निर्भर करते हैं :

(i) पवन की गति,

(ii) पवनो के बहने की अवधि,

(iii) खुले समुद्र में पवन के निर्विघ्न बहने की दूरी।

तरंगे अपरदन का एक मुख्य कारण हैं। भूकम्प, तूफान तथा ज्वालामुखी से उत्पन्न तरंगें प्रलयकारी होती हैं तथा समुद्रतटीय क्षेत्रों में बहुत विनाश करती हैं। ये तरंगें ऊर्जा के स्रोत भी है। इसलिए इस ऊर्जा का उपयोग करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

- महासागरीय जल की दोलन गति, जिसमें जल–कण गोलाकार गति में चलते हैं, को ही तरंग कहा जाता है। जल–कण तरंग–श्रृंग पर ऊपर की ओर उठते हैं, आगे बढ़ते हैं, नीचे की ओर आते हुए तरंग–गर्त में पहुँच जाते हैं। यह प्रक्रिया श्रृंखलाबद्ध होती है।

(II) ज्वार-भाटा

समस्त विश्व में समुद्र तल के साथ–साथ समुद्री जल विभिन्न स्थानों पर विभिन्न दर से ऊपर उठता है। समुद्री जल की सतह में यह परिवर्तन घंटे दर घंटे तथा दिन प्रतिदिन होता है। उठते हुए समुद्री जलस्तर के समय, धरातल की ओर बढ़ते हुए जल के प्रवाह को ज्वार या ज्वारीय बाढ़ कहते हैं। कुछ घटों के पश्चात गिरते हुए समुद्री जलस्तर के समय, ज्वारीय जल वापिस चला जाता है। यह भाटा कहलाता है। ज्वारीय बाढ़ उच्च ज्वार है तथा भाटा निम्न ज्वार है। वास्तव में ज्वार–भाटा सबसे बड़ी तरंगे हैं जो महासागरीय जल को गतिशील रखती हैं। नियमित रूप से प्रतिदिन एक निश्चित अन्तराल पर दो बार समुद्री जल ऊपर उठता है और दो बार नीचे बैठता है। महीने में

टिप्पणी

दो बार उच्च ज्वार या ज्वारीय बाढ़ औसत से ऊँचा होता है और भाटा नीचा होता है। ठीक इसी प्रकार से महीने में दो बार ज्वारीय बाढ़ औसत से नीचा होता है और भाटा नीचा होता है।

दो उच्च ज्वारों के बीच अथवा दो निम्न ज्वारों के बीच नियमित अन्तर 12 घंटे 25 मिनट का होता है – न कि ठीक 12 घंटे का। दिन (24 घंटें में) में उच्च ज्वार पिछले दिन की तुलना में 51 मिनट देर से आता है। यह इसलिए होता है; क्योंकि प्रतिदिन चन्द्रमा के निकलने और छिपने में 51 मिनट का विलम्ब हो जाता है। प्रत्येक दिन घूर्णन करती हुई पृथ्वी को उसी देशान्तर को ठीक चन्द्रमा के नीचे लाने में 24 घन्टे 50 मिनट लगते हैं। किसी तट पर ज्वार के आने का समय निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट हो जायेगा।

उच्च ज्वार 6.00 पूर्वाह्न

निम्न ज्वार 12.13 अपराह्न

उच्च ज्वार 06.25 अपराह्न

निम्न ज्वार 12.38 पूर्वाह्न

उच्च ज्वार 06.51 पूर्वाह्न

ज्वार के समय तथा आकार में परिवर्तन के लिए निम्न कारक उत्तरदायी हैं–

1. सूर्य, चन्द्रमा तथा पृथ्वी की एक दूसरे के संबंध में स्थिति शायद कभी भी एक सरल रेखा में होती हो।
2. पृथ्वी से सूर्य तथा चन्द्रमा की दूरी स्थिर नहीं होती।
3. हमारा ग्लोब पूरी तरह से जल से ढका हुआ नहीं है।
4. तट की आकृति ज्वार के आने में मदद या बाधा बन सकती है।

इन सबके बावजूद किसी भी तट पर ज्वार एक दूसरे के बाद बड़ी नियमितता के साथ उत्पन्न होते हैं। वे कौन सी शक्तियाँ हैं जो ज्वार–भाटा उत्पन्न करती हैं? पृथ्वी आकर्षित करती है और सूर्य, चन्द्रमा तथा अन्य ग्रहीय समूहों से प्रभावित होती है। यह शक्ति गुरूत्वाकर्षण है। यह सूर्य, चन्द्रमा तथा पृथ्वी के बीच कार्य करती है। यह महासागरीय जल को गतिशील करके उसमें ज्वारीय धाराएँ उत्पन्न कर देती है। ज्वार–भाटा इस प्रकार गुरूत्वाकर्षण बल के प्रभाव का उदाहरण हैं।

चन्द्रमा और सूर्य दोनों अपने गुरूत्वाकर्षण बल से पृथ्वी को प्रभावित करते हैं। सूर्य चन्द्रमा से आकार में बड़ा होते हुए भी वह चन्द्रमा की तुलना में पृथ्वी से अधिक दूर है। इस कारण चन्द्रमा की गुरूत्वाकर्षण शक्ति सूर्य की तुलना में पृथ्वी पर अधिक प्रभावशाली है। जल तरल होने के कारण चलायमान है। इसलिए पृथ्वी का पानी वाला भाग जब चन्द्रमा के सामने पड़ता है तो चन्द्रमा की गुरूत्वाकर्षण शक्ति के कारण इसमें

टिप्पणी

जवारीय उभार उत्पन्न हो जाता है। ऐसा ही एक निम्न ज्वारीय उभार पृथ्वी के दूसरी ओर चन्द्रमा से दूर होता है। यह उभार काफी नीचा होता है; क्योंकि यहाँ पर चन्द्रमा का आकर्षण सबसे कम होता है।

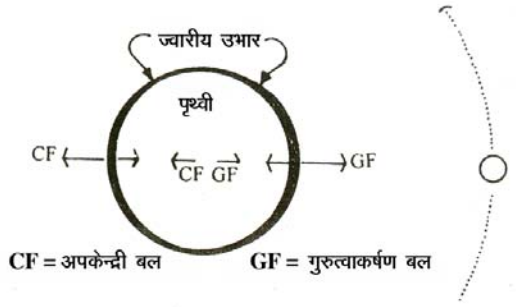

चित्र 8.8 ज्वार-भाटा का निर्माण

- किसी निश्चित स्थान पर महासागरीय जल के ऊपर उठने और नीचे उतरने को क्रमशः ज्वार–भाटा कहते हैं।
- दो उच्च ज्वारों अथवा दो निम्न ज्वारों के बीच का अन्तर ठीक 12 घंटे 25 मिनट का होता है।
- ज्वार–भाटा चन्द्रमा तथा सूर्य के पृथ्वी पर गुरूत्वाकर्षण बल द्वारा खिंचाव के कारण उत्पन्न होते हैं।

(क) वृहत् और लघु ज्वार

चन्द्रमा पृथ्वी के अधिक पास है, इसलिए यह सूर्य की अपेक्षा पृथ्वी पर दुगना गुरूत्वाकर्षण बल डालता है। अमावस्या तथा पूर्णिमा के दिन, जब सूर्य तथा चन्द्रमा एक सीधी रेखा में होते हैं, तो दोनों ही एक ही समय में तथा एक ही दिशा में अपनी गुरूत्वाकर्षण शक्ति का प्रभाव डालते हैं। इनकी संयुक्त शक्ति से जल का उतार–चढ़ाव साधारण उतार–चढ़ाव की अपेक्षा अधिक होता है। इसे **वृहत् ज्वार-भाटा** कहते हैं।

शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष की अष्ठमी के दिन सूर्य और चन्द्रमा की गुरूत्वाकर्षण शक्ति समकोण पर होती है। इस स्थिति में दोनों का खिंचाव एक ही दिशा में न होकर एक दूसरे के विरुद्ध होता है। दूसरे शब्दों में सूर्य तथा चन्द्रमा एक दूसरे की गुरूत्वाकर्षण शक्ति को कम कर देते हैं। इसके परिणामस्वरूप इन दोनों दिनों में जल का उतार–चढ़ाव साधारण उतार–चढ़ाव की अपेक्षा कम होता है। इसे लघु **ज्वार-भाटा** कहते हैं।

टिप्पणी

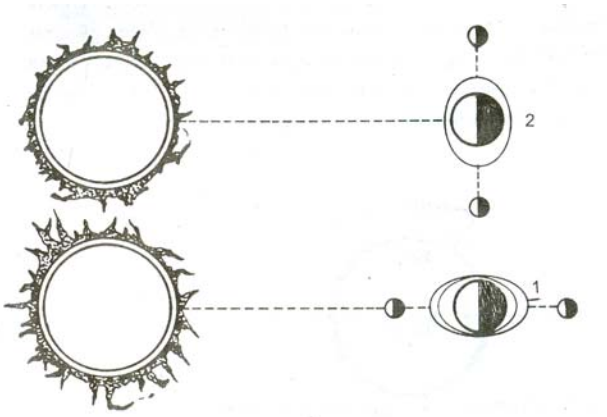

चित्र 8.9 वृहत तथा लघु ज्वार-भाटा

(ख) ज्वार-भाटा के प्रभाव

ज्वार–भाटा उत्पन्न होना एक विश्वव्यापी घटना है। ज्वार–भाटा मनुष्य के लिए ऐतिहासिक काल से बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। ज्वार–भाटा पत्तन को समुद्र से जोड़ते हैं। विश्व के कुछ प्रमुख पत्तन जैसे टेम्स नदी पर लन्दन तथा हुगली नदी पर कोलकाता समुद्र तट से दूर स्थित हैं। ज्वारीय जल इन नदियों में आकर इनमें निक्षेपित तलछट को साफ कर देता है और डेल्टा के विकास को धीमा कर देता है। यह नदियों के ऊपरी मार्ग को भी गहरा कर देता है, जिससे समुद्री जहाज सुरक्षित पत्तन तक पहुँच जाते हैं। कुछ स्थानों पर ज्वारीय बल का प्रयोग विद्युत उत्पादन के स्रोत के रूप में भी किया गया है।

- ज्वार–भाटा नदियों को नौसंचालन के योग्य बनाता है, अवसाद को बहा ले जाता है, डेल्टा निर्माण की प्रक्रिया को धीमा करता है और विद्युत उत्पादन का भी स्रोत है।

पाठगत प्रश्न 8.3

1. नीचे दिए हुए कथनों को सही विकल्प चुन कर पूरा करो–

   (i) समुद्र के जलीय धरातल पर अधिकतर तरंगों का मुख्य स्रोत _____ है।

   (क) पवन (ख) ज्वार–भाटा (ग) भूकम्प (घ) घनत्व में अन्तर

   (ii) किसी भी निश्चित स्थान पर दो लगातार तरंग–श्रृंगों के गुजरने के बीच की अवधि को तरंग की _____ कहते हैं।

   (क) ऊँचाई (ख) दैर्ध्य (ग) समय (घ) आवर्त–काल

टिप्पणी

(iii) उच्च ज्वार और निम्न ज्वार के बीच का अन्तराल लगभग _____ का होता है।

(क) 6 घंटा 13 मिनट (ख) 12 घंटे (ग) 24 घंटे
(घ) 23 घंटे 25 मिनट

2. ज्वार–भाटा की परिभाषा दीजिए –

_____

_____

3. तरंग–दैर्ध्य की परिभाषा लिखिए –

_____

_____

4. यदि कसी दिन पहला उच्च ज्वार सुबह 9 बजे आता है, तो दूसरे दिन उच्च ज्वार कितने बजे आयेगा?

_____

_____

(iii) धाराएँ

महासागरीय धारा एक सुस्पष्ट और निश्चित दिशा में काफी लंबी दूरी तक क्षैतिज रूप से बहने वाली महासागरीय जल की एक राशि को कहते हैं। ये नियमित रूप से समुद्र में बहती हैं। धारा की औसत गति 3.2 किलोमीटर से 10 किलोमीटर प्रति घंटा होती है। अधिक गति वाली महासागरीय धाराओं को **स्ट्रीम** कहते हैं तथा कम गति वाली धाराओं को **ड्रिफ्ट** कहते हैं।

महासागरीय जल धाराओं को मोटे तौर पर दो वर्गों में बाँटा जा सकता है–

1. वे जल धाराएँ जो विषुवतीय क्षेत्रों से ध्रुवों की ओर बहती हैं तथा जिनका सतही तापमान अधिक होता है, **गर्म जल धाराएं** कहलाती हैं।

2. वे जल धाराएँ जो ध्रुवीय क्षेत्र से विषुवतीय क्षेत्रों की ओर बहती हैं तथा जिनका सतही तापमान कम होता है, **ठंडी जल धाराएं** कहलाती हैं।

महासागरीय धाराओं की उत्पत्ति तथा उनके परिसंचरण की प्रकृति निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करती हैं–

(i) घनत्व में अन्तर

समुद्री जल का घनत्व हर स्थान पर अलग–अलग होता है। समुद्री जल का यह घनत्व

टिप्पणी

उसके तापमान और लवणता के औसत पर निर्भर करता है। जब जल का तापमान अधिक होता है तो उसका घनत्व कम होता है। इसलिए विषुवतीय क्षेत्र का कम घनत्व वाला जल ध्रुवों की ओर बहता है और ध्रुवीय प्रदेशों का अधिक घनत्व वाला ठंडा जल विषुवतीय क्षेत्रों की ओर बहता है। इस प्रकार से ठंडी जल धाराएँ हमेशा ध्रुवीय क्षेत्रों से विषुवतीय क्षेत्रों की ओर तथा गर्म जल धाराएँ विषुवतीय क्षेत्रों से ध्रुवीय प्रदेशों की ओर बहती है।

महासागरीय जल की लवणता में अन्तर से भी धाराएं उत्पन्न होती हैं। यदि जल में लवणता अधिक है, तो उस जल का घनत्व बढ़ जाता है तथा जल नीचे बैठ जाता है। इसलिए कम लवणता वाला जल अधिक लवणता वाले जल के ऊपर बहता है, जबकि उसके नीचे अधिक लवणता वाला जल कम घनत्व वाले जल की ओर बहता है। लवणता में अन्तर से बनने वाली जल धाराएं कम लवणता वाले अटलांटिक महासागर तथा अधिक लवणता वाले भूमध्य सागर के बीच पायी जाती है।

- जल का तापमान जितना अधिक होता है, उसका घनत्व उतना ही कम होता है।
- जल में जितनी अधिक लवणता होगी, उसका घनत्व भी उतना ही अधिक होगा।

(ii) पृथ्वी की घूर्णन गति

हम पहले एक पाठ में पढ़ चुके हैं कि पृथ्वी की घूर्णन गति उत्तरी गोलार्द्ध में हवा को दाईं ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में हवा को बांईं ओर मोड़ देती है। इसी प्रकार महासागरीय जल भी कोरिओलिस बल से प्रभावित होता है और धाराएँ फैरेल के नियम का अनुसरण करती हैं। अतः उत्तरी गोलार्द्ध में सभी महासागरीय धाराएँ दक्षिणावर्त दिशा या घड़ी की सुइयों के घूमने की दिशा में बहती हैं और दक्षिणी गोलार्द्ध में ये धाराएँ वामावर्त दिशा या घड़ी की सुइयों के घूमने की उल्टी दिशा में बहती हैं।

(iii) भूमंडलीय पवनें

भूमंडलीय पवनें जैसे व्यापारिक पवनें एवं पछुआ पवनें, महासागरीय जल को लगातार प्रवाहित करती रहती हैं। अगर हम भूमंडलीय पवनों की तुलना महासागरीय जल धाराओं से करें तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि जल धाराएँ भूमंडलीय पवनों की मुख्य दिशा का अनुसरण करती हैं। निम्न अक्षांशों वाले क्षेत्रों में अर्थात व्यापारिक पवनों के क्षेत्र में जल धाराओं के प्रवाह की दिशा मानसूनी पवनों की दिशा में परिवर्तन के साथ बदल जाती है।

8.5 अटलांटिक महासागर की धाराएँ

विषुवत रेखा के उत्तर व दक्षिण दिशा में, पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली दो धाराएँ हैं **उत्तर एवं दक्षिण विषुवतीय धारा**। इन दोनों विषुवतीय धाराओं के बीच पश्चिम से

टिप्पणी

पूर्व की ओर **विरूद्ध विषुवतीय धारा** बहती है। (चित्र संख्या 8.10 में देखिए) यह विरूद्ध धारा उत्तरी तथा दक्षिणी विषुवतीय धाराओं द्वारा महासागर के पूर्व में हटाए गये जल की आपूर्ति करती है।

ब्राजील के साओ रौक अन्तरीप के निकट दक्षिणी विषुवतीय धारा दो शाखाओं में बँट जाती है। इसकी उत्तरी शाखा उत्तरी विषुवतीय धारा में मिल जाती है। इस सम्मिलित धारा का कुछ भाग कैरेबियन सागर तथा मैक्सिको की खाड़ी में प्रवेश करता है तथा शेष भाग वेस्ट इंडीज द्वीप समूह के पूर्वी किनारे पर **अन्टाईल्स धारा** के रूप में बहती हुई गुजरती है। जो शाखा मेक्सिको की खाड़ी में प्रवेश करती है, वह फ्लोरिडा जलडमरूमध्य से निकलकर अन्टाईल्स की धारा में मिल जाती है। यह सम्मिलित धारा संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी पूर्वी तट के सहारे बहने लगती है। इसे हटेरस अन्तरीप तथा **फ्लोरिडा धारा** कहते हैं। हटेरस अन्तरीप से न्यू फाउण्डलैंड के समीप स्थित ग्रेंड बैंक तक इस धारा को **गल्फ स्ट्रीम** कहते हैं। ग्रेंड बैंक से गल्फ स्ट्रीम पछुआ पवनों और पृथ्वी की घूर्णन गति के सम्मिलित प्रभाव के कारण पूर्व की ओर मुड़ जाती है। यह अटलांटिक महासागर को पूर्व की ओर बहते हुए पार करती है। इसे **उत्तरी अटलांटिक अपवाह** कहते हैं।

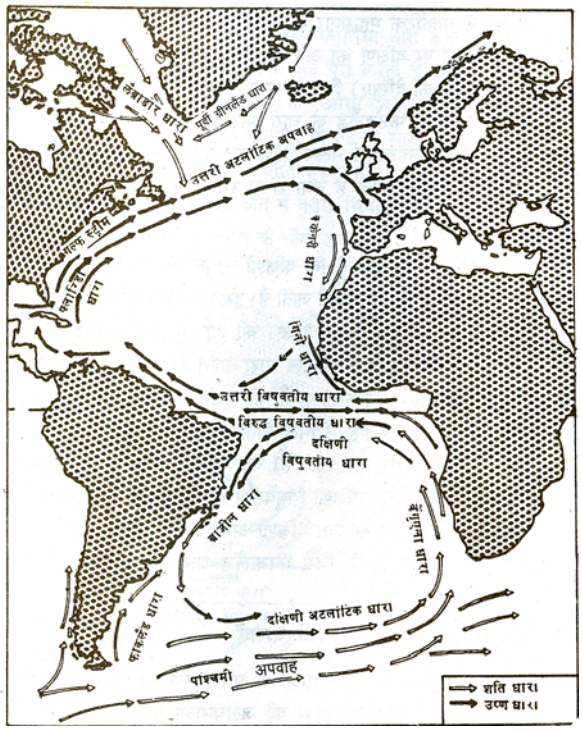

चित्र 8.10 अटलांटिक महासागर की धाराएं

उत्तरी अटलांटिक अपवाह महासागर के पूर्वी भाग में पहुँचकर दो भागों में बंट जाता है। इसकी उत्तरी शाखा उत्तरी अटलांटिक अपवाह के रूप में बहती रहती है। यह ब्रिटिश द्वीप समूह पहुँचकर वहाँ से नार्वे के तट के साथ बहते हुए यह **नार्वे धारा** के रूप में जानी

टिप्पणी

जाती है। वहाँ से यह आर्कटिक महासागर में प्रवेश कर जाती है। दक्षिणी शाखा स्पेन तथा एजोर्स द्वीप के मध्य से दक्षिण की ओर बहती है। यहाँ इसे **केनारी धारा** कहते हैं। यह एक ठंडी जलधारा है। **केनारी धारा** अंत में उत्तरी विषुवतीय धारा में मिल जाती है। उत्तरी अटलांटिक महासागर में धाराओं के चक्र के बीच में सारगेसो समुद्र का शांत क्षेत्र है जो अत्याधिक समुद्री शैवालों से भरा हुआ है। ये समुद्री शैवाल जो भूरे रंग के हैं, सरगैसम के नाम से जाने जाते हैं।

उत्तरी अटलांटिक महासागर में धाराओं के दक्षिणावर्ती परिसंचरण के अतिरिक्त दो ठंडी धारायें भी इस महासागर में बहती हैं। ये हैं – **पूर्वी ग्रीनलैंड धारा** तथा **लेब्राडोर धारा**। ये धाराएँ आर्कटिक महासागर से अटलांटिक महासागर में बहती है। **लेब्राडोर धारा** कनाडा के पूर्वी तट पर दक्षिण की ओर बहती हुई गर्म गल्फ स्ट्रीम धारा से मिलती है। (चित्र संख्या 8.10 को देखिए) भिन्न तापमान वाली इन दो धाराओं (एक ठंडी तथा दूसरी गर्म) के संगम से न्यू फाउंडलैण्ड के चारो ओर कोहरे का निर्माण होता है और इसे संसार का सबसे अधिक महत्वपूर्ण मत्स्य ग्रहण क्षेत्र बनाता है। पूर्वी ग्रीनलैंड धारा आइसलैंड और ग्रीनलैंड के बीच बहती है तथा संगम स्थल पर उत्तरी अटलांटिक अपवाह के तापमान को कम कर देती है।

हम पहले ही पढ़ चुके हैं कि दक्षिणी विषुवतीय धारा ब्राजील के साओ रोक अन्तरीप के निकट दो शाखाओं में बंट जाती है। इसकी उत्तरी शाखा उत्तरी विषुवतीय धारा से मिल जाती है और दक्षिणी शाखा दक्षिण की ओर मुड़कर दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी तट के साथ–साथ बहती है। इसे **ब्राजील धारा** कहते हैं। लगभग 35^0 दक्षिणी अक्षांश पर ब्राजील धारा को पछुआ पवनें तथा पृथ्वी की घूर्णन गति पूर्व की ओर मोड़ देती है, जहाँ यह पश्चिमी पवन अपवाह में मिल जाती है। आशा अन्तरीप के निकट दक्षिण अटलांटिक धारा उत्तर की ओर मुड़ जाती है। यह एक ठंडी जलधारा है और इसे **बैंगुएला** धारा कहते हैं। अन्त में यह दक्षिणी विषुवतीय धारा से मिलकर धाराओं के चक्र को पूरा करती है। एक और ठंडी जल धारा दक्षिणी अमरीका के दक्षिण–पूर्वी तट के सहारे दक्षिण से उत्तर की ओर बहती है, जिसे **फाकलैंड धारा** कहते हैं।

8.6 प्रशान्त महासागर की धाराएँ

यह देखा जा सकता है कि प्रशान्त महासागर में भी धाराओं का एक वृहद् चक्रीय तंत्र पाया जाता है, जो कि उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिणावर्त (घड़ी की सुई की दिशा में) व दक्षिणी गोलार्द्ध में वामावर्त (घड़ी की सुई की विपरीत दिशा में) है।

प्रशान्त महासागर के विषुवतीय भाग में दो विषुवतीय धाराएँ मध्य अमेरिका के तट से महासागर के आर–पार बहती हैं। इन दोनों–उत्तरी विषुवतीय धारा तथा दक्षिणी विषुवतीय धारा के बीच पश्चिम से पूर्व की ओर एक विरूद्ध विषुवतीय धारा बहती है। उत्तरी विषुवतीय धारा उत्तर की ओर मुड़ती है और **क्यूरो-सिवो धारा** के नाम से फिलीपीन द्वीप समूह, ताईवान तथा जापान के तटों के साथ–साथ बहती है। जापान के दक्षिणी–पूर्वी तट पर यह धारा पछुआ पवनों की चपेट में आकर महासागर के

टिप्पणी

आर–पार पश्चिम से पूर्व दिशा में **उत्तरी प्रशांत धारा** के नाम से बहती है। (चित्र 8. 11 देखें) उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट पर पहुँचकर यह धारा दो शाखाओं में बंट जाती है। इसकी उत्तरी शाखा ब्रिटिश कोलंबिया तथा अलास्का के तटों के साथ वामवर्ती दिशा में बहती है तथा अलास्का धारा के नाम से जानी जाती है। इस धारा का गर्म जल शीत ऋतु में अलास्का तट को बर्फ मुक्त रखता है। उत्तरी प्रशांत महासागरीय धारा की दूसरी शाखा कैलीफोर्निया तट के साथ दक्षिण की ओर बहती है। यह ठंडी जलधारा है और इसे **कैलीफोर्निया धारा** कहते हैं। अंत में यह धारा उत्तरी विषुवतीय धारा में मिलकर अपना चक्र पूरा करती है। प्रशांत महासागर के उत्तरी भाग में दो ठंडी जल धाराएँ भी बहती है। ये हैं– **ओया शिओ धारा** और **आखोटस्क धारा।** ठंडी ओया–शिओ धारा कमचटका प्रायद्वीप के तट के साथ बहती है। दूसरी ठंडी धारा ओखोटस्क धारा है जो सखालीन के पास बहती हुई होकेडो द्वीप के निकट ओया–शिओ धारा में मिल जाती है। ओया–शिओ धारा अंत में क्यूरो–सिवो धारा में मिल जाती है और उत्तरी प्रशांत महासागरीय धारा के गर्म जल के नीचे डूब जाती है। (चित्र 8.11 देखिये)

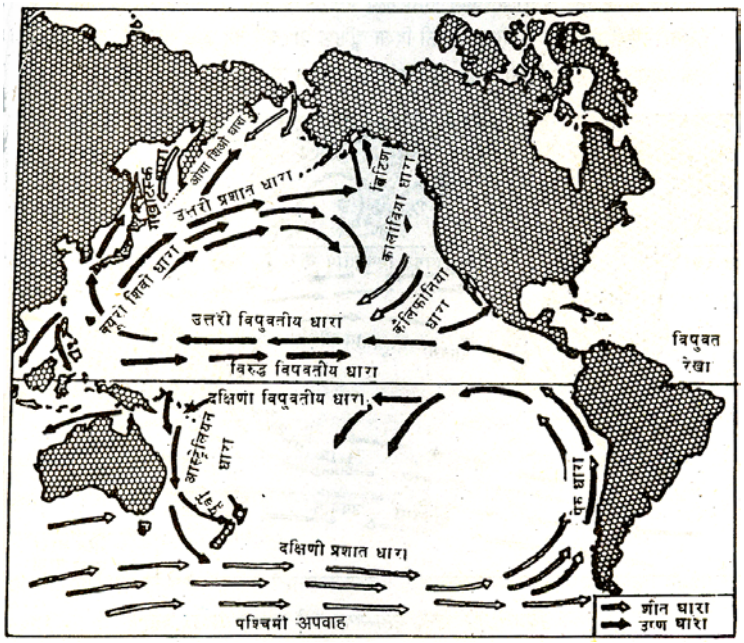

चित्र 8.11 प्रशान्त महासागर की धाराएँ

दक्षिणी प्रशांत महासागर में दक्षिणी विषुवतीय धारा पूर्व से पश्चिम की ओर बहती है और **पूर्वी आस्ट्रेलियाई धारा** के नाम से दक्षिण की ओर मुड़ जाती हैं। आगे चलकर यह तस्मानिया के निकट ठंडी दक्षिणी प्रशांत महासागरीय धारा में मिल जाती है जो पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है। दक्षिण अमेरिका के दक्षिण–पश्चिम तट पर पहुँचकर यह उत्तर की ओर मुड़ जाती है। इसे **पेरू धारा** कहते हैं। यह एक ठंडी जलधारा है। अन्त में यह दक्षिणी विषुवतीय धारा में मिलकर एक चक्र पूरा करती है। पेरू धारा का ठंडा जल ही चिली एवं पेरू के तटों को वर्षा विहीन बनाने के लिए कुछ हद तक उत्तरदायी है।

8.7 हिन्द महासागर धाराएँ

हिन्द महासागर की धाराओं के परिसंचरण का प्रतिरूप अटलांटिक महासागर एवं प्रशांत महासागर की धाराओं से भिन्न है। क्योंकि हिन्द महासागर उत्तर में पूर्वतः स्थल से घिरा है। इसके दक्षिणी भाग में धाराओं के परिसंचरण का सामान्य प्रतिरूप वामवर्ती है जैसा कि अन्य महासागरों में है। लेकिन इसके उत्तरी भाग में धाराएँ शीतु ऋतु एवं ग्रीष्म ऋतु में स्पष्ट रूप से अपनी दिशाएँ पूर्णतया बदल लेती हैं। ये धाराएँ पूर्णतः बदलते हुए मानसूनी मौसम के प्रभाव में हैं। इसलिए शीत ऋतु एवं ग्रीष्म ऋतु में धाराएँ उलट जाती है अर्थात उत्तरी–पूर्वी मानसून के दौरान इनकी दिशा दक्षिण–पश्चिम की ओर होती है, दक्षिण–पश्चिम मानसून के दौरान उत्तर–पूर्व की ओर तथा संक्रमण काल में अस्थिर होती है।

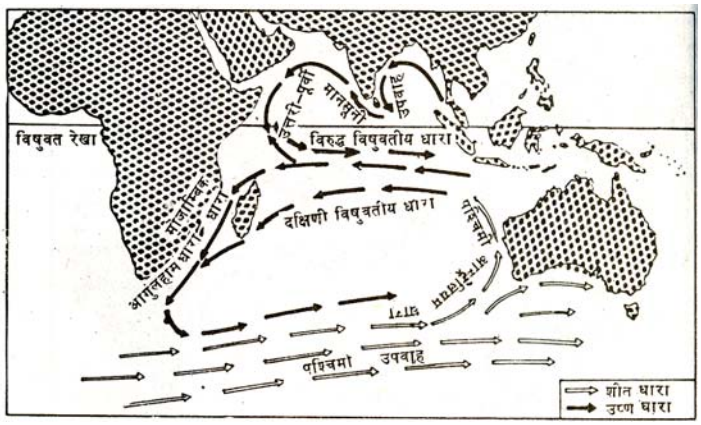

चित्र 8.12 हिन्द महासागर की धाराएँ (शीत ऋतु)

शीत ऋतु में श्रीलंका बंगाल की खाड़ी की धाराओं को अरब सागर से धाराओं को अलग कर देता है। श्रीलंका के ठीक दक्षिण में उत्तरी विषुवतीय धारा और दक्षिणी विषुवतीय धारा पश्चिम की ओर बहती है। उत्तरी विषुवतीय धारा और दक्षिणी विषुवतीय धारा के मध्य एक विरूद्ध विषुवतीय धारा पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है। (देखिये चित्र 8.12) इस समय इसके उत्तरी भाग में बंगाल की खाड़ी और अरब सागर के जल को उत्तरी पूर्वीमानसून प्रभावित करता है तथा उन्हें वामवर्ती दिशा में प्रवाह के लिए प्रेरित करती है। इस जलधारा को **उत्तरी-पूर्वी मानसूनी अपवाह** कहते है।

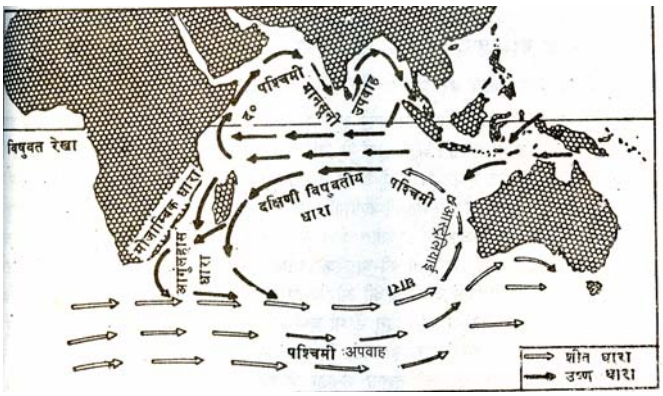

चित्र 8.13 हिन्द महासागर की धाराएँ (ग्रीष्म ऋतु)

टिप्पणी

ग्रीष्म ऋतु में वही उत्तरी भाग दक्षिणी–पश्चिमी मानसून के प्रभाव में आ जाता है। बंगाल की खाड़ी एवं अरब सागर का जल पूर्व की ओर बहने लगता है। इस समय जल का परिसंचरण दक्षिणवर्ती या घड़ी की सुइयों की अनुकूल दिशा में होता है। इस धारा को **दक्षिण-पश्चिम मानसून** अपवाह कहते हैं। सामान्यतः ग्रीष्म ऋतु की धाराएँ शीत ऋतु की धाराओं से अधिक नियमित हैं।

हिन्द महासागर के दक्षिणी भाग में विषुवतीय धारा पूर्व से पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है। अफ्रीका के मोजेंबिक तट के निकट यह धारा दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। इस धारा का एक भाग अफ्रीका की मुख्य भूमि और मेडागास्कर द्वीप के मध्य बहता है। इसे **गर्म मोजांबिक** धारा कहते हैं। दक्षिण की ओर बढ़ने पर यह दक्षिणी विषुवतीय धारा की उस शाखा से मिल जाती है जो मेडागास्कर के तट के साथ बहती है। इस संगम के बाद इसे **अगुल्हास धारा** कहते हैं। इसके बाद यह पूर्व की ओर मुड़ जाती है और **पश्चिमी पवन अपवाह** में मिल जाती है।

पश्चिमी पवन अपवाह उच्च अक्षांशों में महासागर के आर–पार पश्चिम से पूर्व दिशा में बहता हुआ आस्ट्रेलिया के दक्षिणी तट तक पहुँचता है। इस धारा की एक शाखा उत्तर की ओर मुड़कर आस्ट्रेलिया के पश्चिम तट के साथ–साथ बहने लगती है। इसे **पश्चिमी आस्ट्रेलियाई धारा** कहते हैं। यह ठंडी जलधारा हैं। अंत में पश्चिमी आस्ट्रेलियाई धारा दक्षिणी विषुवतीय धारा से मिलकर चक्र पूरा करती है।

8.8 महासागरीय धाराओं के प्रभाव

(क) जलवायु पर प्रभाव

महासागरीय धाराएँ तापमान, दाब, वायु एवं वर्षण के वितरण को नज़दीकी से प्रभावित करती हैं, जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समाज एवं अर्थव्यवस्था, विशेषतः तटीय प्रदेशों में रहने वालों पर पड़ता है। सागरीय धाराओं के कुछ प्रमुख प्रभाव इस प्रकार हैं–

जलधाराएँ अधिक तापमान वाले क्षेत्रों से कम तापमान वाले क्षेत्रों की ओर तथा इसके विपरीत कम तापमान वाले क्षेत्रों से अधिक तापमान वाले क्षेत्रों की ओर बढ़ती हैं। जब ये धाराएँ एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर बहती हैं तो ये उन क्षेत्रों के तापमान को प्रभावित करती हैं। किसी भी जलराशि के तापमान का प्रभाव उसके ऊपर की वायु पर पड़ता है। इसी कारण विषुवतीय क्षेत्रों से उच्च अक्षांशों वाले ठंडे क्षेत्रों की ओर बहने वाली जलधाराएँ उन क्षेत्रों की वायु के तापमान को बढ़ा देती है। उदाहरणार्थ, गर्म उत्तरी अटलांटिक अपवाह जो उत्तर की ओर यूरोप के पश्चिम तट की ओर बहती है। यह ब्रिटेन और नार्वे के तट पर शीत ऋतु में भी बर्फ नहीं जमने देती। जलधाराओं का जलवायु पर प्रभाव और अधिक स्पष्ट हो जाता है, जब आप समान अक्षांशों पर स्थित ब्रिटिश द्वीप समूह की शीत ऋतु की तुलना कनाडा के उत्तरी पूर्वी तट की शीत ऋतु से करते हैं। कनाडा का उत्तरी–पूर्वी तट लेब्राडोर की ठंडी धारा के प्रभाव में आ जाता है। इसलिए यह शीत ऋतु में बर्फ से ढका रहता है।

टिप्पणी

जब ठंडी और गर्म जलधाराएँ आपस में मिलती है तो ये कोहरा उत्पन्न कर देती हैं। उदाहरण के लिए, जब गल्फ स्ट्रीम की धारा न्यूफाउंडलैंड के निकट लेब्राडोर की धारा से मिलती है तो कोहरा उत्पन्न हो जाता है। ये तूफान आने के लिए भी अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करती हैं। न्यूफाउंडलैड में हरीकेन और जापान में टाइफून आने का कारण शायद गर्म और ठंडी धाराओं का मिलन है।

(ख) समुद्री जीवन का प्रभाव

तापमान का समुद्री जीवन पर भी बहुत प्रभाव पड़ता है। ये समुद्री वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं के प्रकार को निर्धारित करती हैं। जहाँ गर्म और ठंडी जल धाराएँ मिलती हैं, वे विश्व के अत्याधिक महत्वपूर्ण मत्स्य ग्रहण क्षेत्र हैं। धाराओं के रूप में महासागरीय जल के संचरण के कारण समुद्री जीव–जन्तु पूरे महासागर में फैल जाते हैं।

(ग) व्यापार पर प्रभाव

जलधाराओं का व्यापार पर भी प्रभाव पड़ता है। उच्च अक्षांशों में स्थित पत्तनों और बन्दरगाहों में जो गर्म, जल धाराओं के प्रभाव में होते हैं, बर्फ नहीं जमती और वहाँ पूरे वर्ष व्यापारिक गतिविधियाँ चलती रहती हैं। उदाहरण के लिए, उत्तर–पश्चिमी यूरोप के पत्तन पूरे वर्ष खुले रहते हैं, जबकि कनाडा का क्यूबैक पत्तन शीत ऋतु में बर्फ से ढक जाता है।

पाठगत प्रश्न 8.4

1. नीचे दिए गए मानचित्र को ध्यान से पढ़िए। मानचित्र में दर्शायी गई प्रत्येक जलधारा को एक अंक दिया गया है। नीचे दिए गए अंकों के सामने संबंधित जलधारा का नाम लिखिए। मानचित्र की सूची को भी उचित शब्द भरकर पूरी कीजिए।

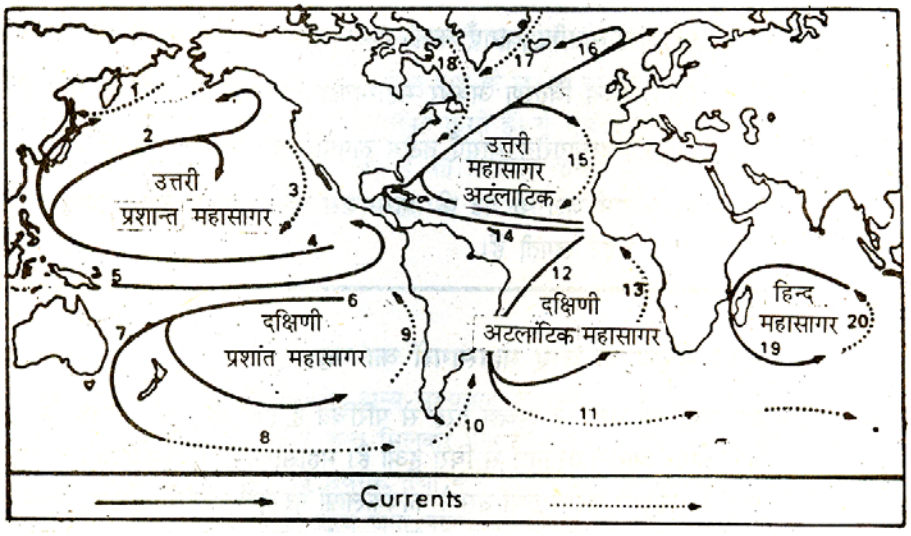

टिप्पणी

1._____ 11. _____
2._____ 12. _____
3._____ 13. _____
4._____ 14. _____
5._____ 15. _____
6._____ 16. _____
7._____ 17. _____
8._____ 18. _____
9._____ 19. _____
10._____ 20. _____

2. दक्षिण–पूर्वी अफ्रीका के पूर्वी तट के साथ बहने वाली गर्म जल धारा का नाम है. _____।

(i) बेंगुएला धारा (ii) केनारी धारा

(iii) मोजाम्बिक धारा (iv) पश्चिमी पवन अपवाह

3. नीचे दिए गए कथनों में से कौनसा कथन असत्य है।

(i) महासागरीय धाराएँ कभी–कभी कोहरा उत्पन्न करती हैं।

(ii) मत्स्य वितरण अक्सर महासागरीय धाराओं से प्रभावित होता है।

(iii) महासागरीय धाराएँ तटीय तापमान को प्रभावित करती है।

(iv) गर्म जल के तट के आस–पास इकट्ठा हो जाने से महासागरीय जलधारा बहने लगती हैं।

8.9 मनुष्य के लिए महासागरों का महत्त्व

हम सभी इस तथ्य से अच्छी तरह से परिचित हैं कि पृथ्वी के धरातल का 71 प्रतिशत भाग सागर और महासागरों से घिरा हुआ है। महासागर हमारे पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण भाग हैं और ये मनुष्य तथा उसके कार्यकलापों पर पूर्ण प्रभाव डालते हैं। पाठ के इस भाग में हम मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महासागर के प्रभाव के विषय में पढ़ेंगे।

(क) महासागर जलवायु के संशोधक के रूप में

महासागरों का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है–जलवायु को संशोधित या परिवर्तित करना।

(i) महासागरों की अथाह जलराशि बहुत बड़ी मात्रा में ऊर्जा का संग्रह करती है। इसी कारण महासागरों को ''सौर ऊर्जा का बचत बैंक'' कहा जाता है। ये

टिप्पणी

अधिक सूर्यातप वाले मौसम में इस ऊर्जा को जमा कर लेते हैं और आवश्यकता वाले मौसम में उसका भुगतान करते हैं। महासागरों का विशाल गहरा जल पृथ्वी के धरातल की अपेक्षा धीरे–धीरे ऊष्मा अवशोषित करता है और धीरे–धीरे ही विकरित करता है। सूर्यातप की एक ही समान मात्रा जलीय धरातल की अपेक्षा स्थलीय धरातल को शीघ्रता से और अधिक गर्म कर देती है। जलीय और स्थलीय तापमान में अन्तर के कारण ही समुद्रतटीय क्षेत्रों और आन्तरिक स्थलीय क्षेत्रों में तापमान में अन्तर होता है।

(ii) महासागर वायुमंडल को जलवाष्प प्रदान करते हैं। ये पृथ्वी पर कुल वर्षण के लिए मूल स्रोत हैं। ये पृथ्वी पर स्वच्छ जल का भी मुख्य स्रोत हैं।

(iii) महासागरीय जल धाराएँ पृथ्वी के धरातल पर महत्वपूर्ण तापमान नियंत्रक है। जल धाराएँ निम्न अक्षांशों से उच्च अक्षांशों में ऊष्मा के विनिमय में सहायता करती हैं। इस तरह से ये विश्व में ऊर्जा के संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। स्थानीय स्तर पर गर्म महासागरीय धाराएँ उच्च अक्षांशों के तटवर्ती क्षेत्रों की जलवायु को मृदुल बना देती है, जबकि ठंडी धाराएँ उष्णकटिबन्धीय मरूस्थल के तटवर्ती क्षेत्रों के तापमान को कम कर देती हैं।

(iv) महासागर पृथ्वी पर वायुदाब और प्रचलित पवन तंत्र के वितरण को भी बहुत सीमा तक नियंत्रित करते हैं। महासागरीय धरातल पर उच्च दाब के छः या छः से अधिक स्थाई केन्द्र हैं। यही केन्द्र भूमंडलीय पवन तंत्र को नियंत्रित करते हैं। ये भूमंडलीय पवनें पृथ्वी के धरातल पर वर्षा की मात्रा और उसके वितरण को नियंत्रित करती हैं। पछुआ पवनें गर्म उत्तरी अटलांटिक अपवाह से आर्द्रता ग्रहण करके पश्चिमी यूरोप के तटवर्ती क्षेत्रों में वर्षा करती है।

(ख) महासागर तथा संसाधन

मानव के लिए महासागर खाद्य–पदार्थ तथा अन्य मूल्यवान वस्तुओं के लिए हमेशा से बड़े स्रोत रहे हैं। समुद्री पौधे और जीव जन्तु मिलकर एक विशाल संसाधन हैं, जिनसे मनुष्य को खाद्य सामग्री, कृषि के लिए उर्वरक तथा कई उद्योगों के लिए कच्चा माल प्राप्त होता है। मछली और अन्य समुद्री जीव जन्तु मनुष्य के भोजन का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। मानव समाज की उन्नति तथा बढ़ती जनसंख्या के कारण मनुष्य की महासागरों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। पूरे संसार में आज मछली मनुष्य के भोजन के कुल जन्तु प्रोटीन का 10 प्रतिशत भाग प्रदान करती है।

(ग) महासागर और खनिज संसाधन

महासागर अनेक उपयोगी धात्विक तथा अधात्विक खनिजों के भंडार हैं। महाद्वीपीय निमग्न तट के खनिज तेल भंडार महासागरों में पाए जाने वाले सभी खनिजों से महत्वपूर्ण हैं। आज ऊर्जा के भूखे विश्व में, खनिज तेल की सबसे अधिक माँग है। खनिज तेल के विशाल भंडार उत्तरी सागर, दक्षिणी कैलीफोर्निया के तट पर, भूमध्यसागर, फारस की खाड़ी, और अरब सागर में बम्बई हाई में पाए गए हैं।

टिप्पणी

साधारण नमक (सोडियम क्लोराइड) समुद्र के जल से ही प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त मैग्नेशियम एवं ब्रोमीन बहुत समय से समुद्र के जल से प्राप्त किये जाते रहे हैं। समुद्र के जल में सभी प्रकार के धात्विक खनिज जाते हैं। लेकिन समुद्र के जल और तलछट में जिंक, ताँबा, चाँदी और सोना काफी मात्रा में पाया जाता है। ये धातुयें मुख्य रूप से महासागरीय पहाड़ी के ज्वालामुखी क्षेत्रों में पायी जाती हैं। इन खनिजों को समुद्री जल से निकालने की तकनीक अभी तक पूरी तरह से विकसित नहीं हुई है। महासागरों के अधस्तल में पाए जाने वाले मुख्य खनिज मेंगनीज़ और फॉसफोराइट हैं।

(घ) महासागर और ऊर्जा

महासागर में ऊर्जा संसाधन विभिन्न रूपों में पाए जाते हैं जैसे ज्वारीय ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा तथा महासागरीय जल के तापमान से प्राप्त ऊर्जा। 12 वीं शताब्दी में भी ज्वारीय ऊर्जा का उपयोग किया जाता था। उस समय गेहूँ पीसने के लिए ज्वारीय जल से चलने वाली चक्की का प्रयोग किया जाता था। आजकल विद्युत केन्द्रों में इस ज्वारीय शक्ति के प्रयोग करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। किन्तु ज्वारीय शक्ति के प्रयोग में कुछ समस्याएँ भी हैं। जैसे ज्वार–भाटा का क्रम नियमित नहीं है। फिर भी रूस, फ्रांस और जापान में ज्वारीय शक्ति के कुछ केन्द्र सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं।

महासागरों में भूतापीय ऊर्जा उन स्थानों से प्राप्त की जा सकती है जो सक्रिय ज्वालामुखी के क्षेत्र हैं। तटीय क्षेत्रों में विद्युत उत्पादन के लिए भूतापीय ऊर्जा का भविष्य में व्यापक उपयोग संभव है। भूतापीय ऊर्जा का विकास संयुक्त राज्य अमेरिका, मेक्सिको तथा न्यूजीलैंड में कर लिया गया है।

(ङ) महासागरीय परिवहन तथा व्यापार

कुछ वर्ष पहले तक महासागर महाद्वीपों को एक दूसरे से पृथक करने वाले अवरोध माने जाते थे; लेकिन अब ये उनके बीच परस्पर संबंध की कड़ी समझे जाते हैं। वे कम कीमत पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए प्राकृतिक मार्ग उपलब्ध कराते हैं। वे भारी वस्तुओं को लाने ले जाने में सहायता करते हैं। जल उत्प्लावक होता है और इसे कम प्रेरक शक्ति की आवश्यकता होती है। अतः महासागर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए वरदान सिद्ध हुए हैं।

पाठगत प्रश्न 8.5

1. नीचे दिए गए कथनों में से कौन सा कथन असत्य है?

   (क) महासागर वायुमंडल के ऊपरी भाग में दाब वितरण को नियंत्रित करते हैं।

   (ख) महासागर अधिक सूर्यातप वाले मौसम में सौर ऊर्जा को जमा कर लेते हैं और आवश्यकता वाले मौसम में उसका भुगतान करते हैं।

टिप्पणी

(ग) कई हजार किलोमीटर तक सौर ऊर्जा के पुनः वितरण में महासागर सहायक होते हैं।

(घ) महासागर प्राकृतिक रूप से बने महामार्ग हैं; परन्तु अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में बाधा डालते हैं।

(ङ) समुद्री जल के बारी–बारी ऊपर उठने और नीचे गिरने से प्राप्त ऊर्जा को भूतापीय ऊर्जा कहते हैं।

आपने क्या सीखा

पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव जल पर निर्भर हैं। पृथ्वी के धरातल का लगभग 71 प्रतिशत भाग जल से ढका है। हमारे सौर मंडल में पृथ्वी ही अकेला ऐसा ग्रह है जिस पर जल है। महासागर जल के अकेले सबसे बड़े अविच्छिन्न खण्ड हैं जो पृथ्वी के सभी भूखण्डों को चारों ओर से घेरे हुए हैं। संसार के समस्त जल का 97.2 प्रतिशत जल महासागरों में हैं। प्रमुख महासागर हैं– प्रशांत महासागर, अटलांटिक महासागर तथा हिन्द महासागर। महासागर के अधस्तल पर बहुत सी आकृतियाँ मिलती हैं, जैसे महाद्वीपीय निमग्न तट, महाद्वीपीय ढाल, वितल मैदान तथा गभीर तल।

प्रशांत महासागर सबसे बड़ा महासागर है। इसमें हजारों द्वीप हैं। इस महासागर के अतिकतर भाग में गहरी–गहरी खाइयाँ हैं। प्रशांत महासागर की मेरियाना खाई अब तक की जानकारी के अनुसार सबसे गहरी खाई है। अटलांटिक महासागर आकार में प्रशान्त महासागर का आधा है। विश्व के सबसे चौड़े महाद्वीपीय निमग्न तट जैसे डागर बैंक तथा ग्रांड बैंक यहाँ पाए जाते हैं। मध्य अटलांटिक कटक अटलांटिक महासागर की उल्लेखनीय विशेषता है। यह संसार की सबसे लंबी अविच्छिन्न कटक है। हिन्द महासागर इन दोनों महासागरों से छोटा है।

महासागरीय सतह के जल का तापमान महासागर के एक भाग से दूसरे भाग में भिन्न होता है। सामान्यतः यह विषुवत वृत्त के निकट उच्च तथा ध्रुवों के पास निम्न होता है। महासागरों के ऊर्ध्वाधर तापमान के वितरण में भी विविधता पाई जाती है। महासागरीय जल का तापमान गहराई बढ़ने के साथ घटता जाता है। लवणता को इस तरह से परिभाषित किया जाता है, यह 1000 ग्राम समुद्री जल के वाष्पीकरण के बाद बचे हुए ठोस पदार्थों की शेषांक है। इसे ग्राम प्रति हजार में व्यक्त करते हैं। अनेक रासायनिक योगिकों के जल में घुल जाने से ही यह लवणता उत्पन्न होती है। समुद्र में प्रत्येक स्थान पर लवणता एक समान नहीं है। उष्णकटिबन्धीय समुद्रों की अपेक्षा ध्रुवीय क्षेत्रों में लवणता कम होती है। महासागरीय जल सदैव गतिशील रहता है। महासागरीय जल में तीन प्रकार की गतियां होती हैं। ये हैं – तरंगे, ज्वार–भाटा एवं धाराएँ। तरंगें पवनों द्वारा उत्पन्न होती हैं। पवनों की गति गोलाकार होती है। किसी निश्चित स्थान

टिप्पणी

पर महासागरीय धरातल के बारी–बारी से ऊपर उठने और नीचे उतरने की प्रक्रिया को ज्वार–भाटा कहते हैं। ज्वार–भाटा चन्द्रमा और सूर्य की गुरूत्वाकर्षण शक्ति तथा पृथ्वी के घूर्णन से उत्पन्न अपकेन्द्रीय बल द्वारा उत्पन्न होते हैं। धाराएँ एक सुस्पष्ट और निश्चित दिशा में काफी लंबी दूरी तक क्षैतिज रूप से बहने वाली महासागरीय जल की एक राशि को कहते हैं। धाराएँ, समुद्री जल के घनत्व में अन्तर, पृथ्वी की घूर्णनगति तथा भूमण्डलीय पवनों द्वारा उत्पन्न होती हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में धाराएँ दक्षिणावर्त दिशा में बहती हैं तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में वामवर्ती दिशा में बहती हैं। हिन्द महासागर की धाराएँ मानसूनी पवनों द्वारा प्रभावित होती हैं।

महासागर मानव के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। वे जलवायु को प्रभावित करते हैं और खाद्य पदार्थों के अथाह स्रोत हैं। महासागर प्राकृतिक महामार्ग उपलब्ध कराके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में सहायक हैं।

पाठांत प्रश्न

1. महासागरीय तल के प्रमुख उच्चावच लक्षणों का चित्र की सहायता से वर्णन कीजिए।
2. निम्नलिखित शब्दों में अन्तर स्पष्ट कीजिएः–
   (क) महाद्वीपीय निमग्न तट एवं महाद्वीपीय ढाल
   (ख) अंतः समुद्री गर्त एवं अंतः समुद्री कटक
3. समुद्री टीला एवं गाईऑट में चित्र की सहायता से अन्तर बताइये।
4. मानव के लिए महाद्वीपीय निमग्न तट के महत्व की व्याख्या कीजिए।
5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिएः–
   (क) अंतः समुद्री केनियन (खाई)
   (ख) महाद्वीपीय उत्थान
6. 'लवणता' शब्द को परिभाषित कीजिए और बताइये कि यह कैसे व्यक्त की जाती है?
7. बढ़ती हुई गहराई के साथ महासागरीय जल का तापमान क्यों घटता जाता है?
8. ज्वार–भाटा क्या है? यह कैसे उत्पन्न होते हैं?
9. चित्र की सहायता से उच्च ज्वार और निम्न ज्वार में अन्तर स्पष्ट कीजिए?
10. निम्नलिखित के क्या कारण हैं?
    (क) उच्च ज्वार प्रत्येक अमावस्या या पूर्णिमा के दिन आता है।
    (ख) निम्न अक्षांशों में स्थलखंडों का पूर्वी भाग पश्चिमी भागों की अपेक्षा गर्म होता है।
    (ग) उच्च अक्षांशों में स्थल खंडों का पूर्वी भाग पश्चिमी भाग की अपेक्षा ठंडा होता है।

टिप्पणी

11. अटलांटिक महासागर की जलधाराओं के परिसंचरण को चित्र की सहायता से वर्णन कीजिए। प्रशान्त महासागर की जलधाराओं से इसकी तुलना कीजिए।

12. 'मानव के लिए महासागरों का महत्व' विषय पर एक छोटा सा निबन्ध लिखिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

8.1

(i) (क) प्रशान्त महासागर (ख) अटलांटिक महासागर
(ग) हिन्द महासागर (घ) आर्कटिक महासागर

(ii) (क) महाद्वीपीय निमग्न तट (ख) महाद्वीपीय ढाल
(ख) वितल मैदान (घ) महासागरीय गभीर

(iii) महाद्वीपीय निमग्न तट

(iv) (क) ऊज (ख) लाल सिंधुपंक

(v) अंतः समुद्री खाइयाँ

(vi) समुद्री टीला

(vii) मेरियाना गर्त

2.

(i) (क) महाद्वीपीय ढाल

(ii) (ख) महाद्वीपीय निमग्न तट

3.

(i) गलत

(ii) गलत

(iii) सही

8.2

1. लवणता 1000 ग्राम समुद्री जल के वाष्पीकरण के पश्चात बचे ठोस पदार्थ का ग्राम में दिया गया भार है।
2. 25‰
3. (क) अधिकतम, न्यूनतम (ख) 35‰ (ग) उच्च

8.3

1. (i) पवनें (ii) आवर्त–काल (iii) 6 घंटे 13 मिनट
2. एक निश्चित स्थान पर समुद्री सतह का बारी–बारी से ऊपर उठना और नीचे गिरना।
3. दो श्रृंगों अथवा दो गर्तों के बीच की क्षैतिज दूरी।
4. 9.51 पूर्वाह्न

8.4

टिप्पणी

1. **गर्म जल धाराएँ**
   1. ओखोटस्क धारा
   3. कैलीफोर्निया की धारा
   5. विरूद्ध विषुवतीय धारा
   7. पूर्वी आस्ट्रेलियाई धारा
   9. पीरू धारा
   11. पश्चिमी पवन अपवाह
   13. बेंगुएला धारा
   15. केनारी धारा
   17. पूर्वी ग्रीनलैंड धारा
   19. अगुलहास धारा
   2. (iii) मोजाम्बिक धारा
   3. (iv)

ठंडी जलधाराएँ
2. उत्तरी प्रशांत महासागरीय धारा
4. उत्तरी विषुवतीय धारा
6. दक्षिणी विषुवतीय धारा
8. पश्चिमी पवन अपंवाह
10. फाकलैंड धारा
12. ब्राजील धारा
14. विरूद्ध विषुवतीय धारा
16. नार्वे धारा
18. लेब्राडोर धारा
20. पश्चिमी आस्ट्रेलियाई धारा

8.5

(क) (घ) (ङ)

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. अनुच्छेद 8.2 देखिए
2. (क) अनुच्छेद 8.2 का (क) और (ख) देखिए
   (ख) अनुच्छेद 8.2 का (घ) और (ग) (i) देखिए
3. अनुच्छेद 8.2 (ग) (ii) देखिए
4. अनुच्छेद 8.2 (क) देखिए
5. महाद्वीपीय निमग्न तट व महाद्वीपीय ढाल देखिए
6. अनुच्छेद 8.3 (ii) देखिए
7. अनुच्छेद 8.3 (ii) देखिए
7. अनुच्छेद 8.4 (ii) देखिए
9. अनुच्छेद 8.4 (ii) (क) देखिए
10. (क) अनुच्छेद 8.4 (ii) (क) देखिए
    (ख) विषुवतीय क्षेत्रों में गर्म महासागरीय धाराएँ गर्म जल को ले जाते हुए पूर्व से पश्चिम दिशा में बहती हैं। इस प्रक्रिया में वह तटीय क्षेत्रों को गर्म कर देता है; जबकि महाद्वीपों के पश्चिमी तट ठंडी धाराओं से प्रभावित होते हैं। अपने स्पष्टीकरण के साथ उदाहरण भी दो।
    (ग) उच्च अक्षांशों में समान्यतः महाद्वीपों के पूर्वी तट ठंडी धाराओं से प्रभावित होते हैं और पश्चिमी तट गर्म धाराओं से। अपने स्पष्टीकरण के साथ उदाहरण भी दो।
11. अनुच्छेद 8.5 तथा 8.6 देखिए।
12. अनुच्छेद 8.9 देखिए।

टिप्पणी

9

वायुमण्डल : संघटन और संरचना

पृथ्वी एक अनोखा ग्रह है; क्योंकि इस ग्रह पर ही जीवन पाया जाता है। जीवन के लिए आवश्यक दशाओं में से वायु का विशेष स्थान है। वायु अनेक गैसों का मिश्रण है। वायु पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए है। वायु के इस घेरे को ही वायुमण्डल कहते हैं। वायुमण्डल हमारी पृथ्वी का अभिन्न अंग है जो पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण पृथ्वी से जुड़ा हुआ है। यह जीवन के लिए हानिकारक पराबैंगनी किरणों को रोकने तथा जीवन के लिए अनुकूल तापमान बनाए रखने में सहायक है।

पृथ्वी पर प्राणी के जीवित रहने के लिए वायु का विशेष योगदान है। इसके अभाव में किसी प्रकार के जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। वायुमण्डल विशाल कवच की तरह है। वायुमण्डल में गैसों के अतिरिक्त जलवाष्प और धूलकण भी पाए जाते हैं। इनके कारण पृथ्वी पर सभी मौसमी घटनाएं घटती हैं। इस पाठ में आप वायुमण्डल के संघटन और संरचना तथा प्रमुख गैसों की चक्रीय प्रक्रिया के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- वायुमण्डल के संघटन को समझा सकेंगे;
- वायुमण्डल की विभिन्न परतों की विशेषताएं बता सकेंगे;
- वायुमण्डल के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे;
- वायुमण्डल की प्रमुख गैसों – नाइट्रोजन, आक्सीजन और कार्बन–डाई–आक्साइड की चक्रीय प्रक्रिया को समझा सकेंगे;
- वायुमण्डल की प्रमुख गैसें – नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और कार्बन–डाइ–आक्साइड की चक्रीय प्रक्रिया के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।

टिप्पणी

9.1 वायुमण्डल का संघटन

वायुमण्डल विभिन्न प्रकार की गैसों, जलवाष्प और धूलकणों से बना है। वायुमण्डल का संघटन स्थिर नहीं है। यह समय और स्थान के अनुसार बदलता रहता है।

(क) वायुमण्डल की गैसें

जलवाष्प एवं धूलकण सहित वायुमण्डल विभिन्न प्रकार की गैसों का मिश्रण है। नाइट्रोजन और ऑक्सीजन वायुमण्डल की दो प्रमुख गैसें हैं। 99% भाग इन्हीं दो गैसों से मिलकर बना है। शेष 1% भाग में आर्गन, कार्बन–डाई–आक्साइड, हाइड्रोजन, नियॉन, हीलियम आदि गैसें पाई जाती हैं। वायुमण्डल की गैसों का विवरण सारणी संख्या 9.1 और आरेख संख्या 9.1 में दिया गया है।

सारणी 9.1 वायुमण्डल की शुष्क और शुद्ध वायु में गैसों की मात्रा

क्रमांक	*गैसें*	*मात्रा (प्रतिशत में)*	
(क) मुख्य-			
1.	नाइट्रोजन	78.1	99%
2.	आक्सीजन	20.9	
(ख) गौण-			
3.	आर्गन	0.9	0.99%
4.	कार्बन–डाई–आक्साइड	0.03	
5.	हाइड्रोजन	0.01	
6.	नियॉन	0.0018	
7.	हीलियम	0.0005	
8.	ओजोन	0.00006	
9.	अन्य		

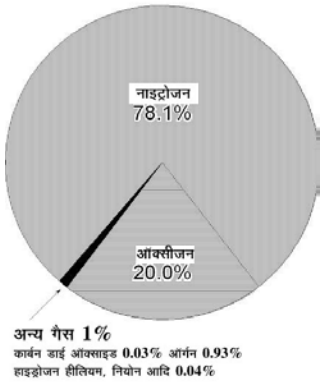

चित्र: 9.1

टिप्पणी

ओजोन गैस

वायुमण्डल में ओजोन गैस अल्प मात्रा में पाई जाती है। यह ओजोन क्षेत्र में ही सीमित है; लेकिन इसका विशेष महत्व है। यह सूर्य की पराबैंगनी किरणों को अवशोषित करके पृथ्वी पर जीव–जंतुओं की रक्षा करती है। यदि ओजोन गैस वायुमण्डल में न होती तो धरातल पर जीव–जन्तु एवं पेड़–पौधों का अस्तित्व नहीं होता।

(ख) जलवाष्प

वायुमण्डल में विद्यमान जल के गैसीय स्वरूप को जलवाष्प कहते हैं। वायुमण्डल में जलवाष्प के विद्यमान रहने के कारण ही पृथ्वी पर जीवन संभव हुआ है। जलवाष्प पृथ्वी पर होने वाले सभी प्रकार के वर्षण का स्रोत है। वायुमण्डल में इसकी अधिकतम मात्रा 4 प्रतिशत तक हो सकती है। जलवाष्प की सबसे अधिक मात्रा उष्ण–आर्द्र क्षेत्रों में पाई जाती है तथा शुष्क क्षेत्रों में यह सबसे कम मिलती है। सामान्यतः निम्न अक्षांशों से उच्च अक्षांशों की ओर इसकी मात्रा कम होती जाती है। इसी प्रकार ऊँचाई के बढ़ने के साथ इसकी मात्रा कम होती जाती है। वायुमण्डल में जलवाष्प वाष्पीकरण तथा वाष्पोत्सर्जन द्वारा पहुँचता है। वाष्पीकरण समुद्रों, नदियों, तालाबों, झीलों और वाष्पोत्सर्जन पेड़–पौधों और जीव जन्तुओं से होता है।

(ग) धूल कण

धूलकण अधिकतर वायुमण्डल के निचले स्तर में मिलते हैं। ये कण धूल, धुआँ, समुद्री लवण आदि के रूप में पाये जाते हैं। धूलकणों का वायुमण्डल में विशेष महत्व है। ये धूलकण जलवाष्प के संघनन में सहायता करते हैं। संघनन के समय जलवाष्प जलकणों के रूप में इन्हीं धूल कणों के चारों ओर संघनित हो जाती है, जिससे बादल बनते हैं और वर्षण सम्भव हो पाता है।

वायुमण्डल का महत्व

(i) ऑक्सीजन प्राणी जगत के लिए अति महत्वपूर्ण है।

(ii) कार्बन डाई–आक्साइड गैस पेड़–पौधों के लिए अधिक उपयोगी है।

(iii) वायुमण्डल में विद्यमान धूलकण वर्षण के लिए अनुकूल दशाएं पैदा करते हैं।

(iv) वायुमण्डल में जलवाष्प की मात्रा घटती–बढ़ती रहती है और प्रत्यक्ष रूप से पादप और जीव जगत को प्रभावित करती है।

(v) ओजोन सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणों से सभी प्रकार के जीवन की रक्षा करती है।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 9.1

(i) वायुमण्डल की दो प्रमुख गैसें कौनसी हैं?

(अ)_____ (ब)_____

(ii) जलवाष्प की सबसे अधिक मात्रा किस क्षेत्र में पाई जाती है?

_____

(iii) ओजोन गैस का मुख्य कार्य क्या है?

_____

_____

9.2 वायुमण्डल की संरचना

वायुमण्डल पृथ्वी का अभिन्न अंग है। यह पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए है। सामान्यतः यह धरातल से लगभग 1600 कि.मी. की ऊँचाई तक फैला है। वायुमण्डल के कुल भार की मात्रा का 97 प्रतिशत भाग लगभग 30 कि.मी. की ऊँचाई तक सीमित है। तापमान और घनत्व की विविधता के आधार पर वायुमण्डल को निम्नलिखित 5 परतों में बाँटा गया है:

(क) क्षोभमण्डल, (ख) समतापमण्डल, (ग) मध्यमण्डल, (घ) आयनमण्डल
(ड़) बहिर्मण्डल

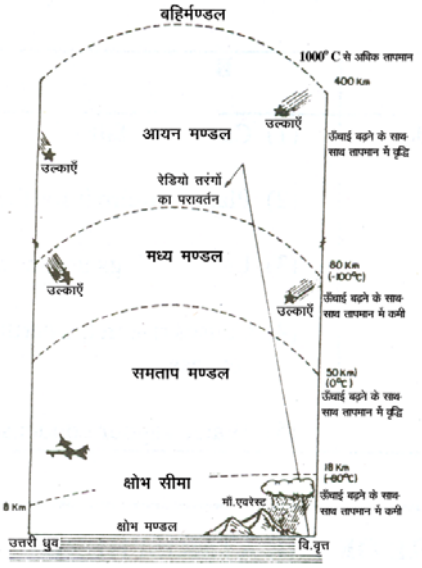

चित्र : 9.2 वायुमण्डल की संरचना

टिप्पणी

(क) क्षोभमण्डल

(i) यह वायुमण्डल की सबसे निचली परत है।

(ii) इस परत की ऊँचाई विषुवत वृत्त पर लगभग 18 कि.मी. और ध्रुवों पर इसकी ऊँचाई केवल 8 कि.मी. है। ऊँचाई की विभिन्नता का मुख्य कारण विषुवत वृत्त पर तेज संवहनीय धाराओं का चलना है, जो धरातल की ऊष्मा को अधिक ऊँचाई तक ले जाती हैं।

(iii) वायुमण्डल की यह सबसे महत्वपूर्ण परत है, क्योंकि इसी परत में सभी प्रकार के मौसमी परिवर्तन होते रहते हैं। इन परिवर्तनों के कारण पृथ्वी पर जीव–जगत की उत्पत्ति एवं विकास होता है। इस भाग में वायु कभी शान्त नहीं रहती। इसीलिए इस मण्डल को परिवर्तन मण्डल या क्षोभमण्डल भी कहते हैं।

(iv) इस मण्डल की ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान में कमी होती जाती है तथा प्रति 165 मीटर की ऊँचाई पर औसत 1° सेल्सियस तापमान घटता जाता है। इसे ही 'सामान्य ताप ह्रास दर' कहा जाता है।

(v) क्षोभमण्डल की ऊपरी सीमा से लगे क्षेत्र को क्षोभसीमा कहते हैं। यह एक संक्रमण क्षेत्र है। जिसमें क्षोभमण्डल और समतापमण्डल की मिली–जुली विशेषताएँ पाई जाती है।

(ख) समतापमण्डल

(i) यह क्षोभमण्डल के ऊपर की परत है।

(ii) इसकी धरातल से ऊँचाई लगभग 50 कि.मी. है। इसकी औसतन मोटाई लगभग 40 कि.मी. है।

(iii) इस परत के निचले भाग में 20 कि.मी. तक की ऊँचाई तक तापमान लगभग समान रहता है। इसके बाद ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान धीरे–धीरे बढ़ता जाता है। इस परत के ऊपरी भाग में ओजोन के होने के कारण ही तापमान बढ़ता है।

(iv) इस मण्डल में किसी प्रकार की मौसम की घटनाएं नहीं घटती है। यहाँ पर वायु क्षैतिजीय चलती है। इसी कारण यह परत वायुयानों की उड़ानों के लिए आदर्श मानी जाती है।

(ग) मध्यमण्डल

(i) समतापमण्डल के ऊपर वायुमण्डल की तीसरी परत का विस्तार है। इसे मध्यमण्डल कहते हैं।

(ii) इस परत की ऊँचाई धरातल से 80 कि.मी. तक है। इसकी मोटाई 30 किलोमीटर है।

टिप्पणी

(iii) इस मण्डल में तापमान पुनः कम होने लगता है। 80 कि.मी. की ऊँचाई पर तापमान 0^0 सेल्सियस से – 100^0 सेल्सियस तक नीचे चला जाता है।

(घ) आयनमण्डल

(i) यह वायुमण्डल की चौथी परत है। यह मध्यमण्डल के ऊपर स्थित है।

(ii) इस परत की ऊँचाई धरातल से 400 कि.मी. तक है। इस मण्डल की मोटाई लगभग 300 कि.मी. है।

(iii) इस मण्डल में तापमान ऊँचाई के साथ पुनः बढ़ता जाता है।

(iv) इस मण्डल में वायु में विद्युत आवेशित तरंगें प्रवाहित होती हैं और रेडियो तरंगें इसी मण्डल से परावर्तित होकर पुनः पृथ्वी पर लौट आती हैं जिससे रेडियो प्रसारण संभव होता है।

(ङ) बहिर्मण्डल

(i) आयनमण्डल के ऊपर स्थित परत वायुमण्डल की अन्तिम परत है।

(ii) इस मण्डल में गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव की कमी के कारण गैसें अति विरल हैं। अतएव यहाँ वायु का घनत्व बहुत कम है।

- क्षोभमण्डल में ही मौसम की सभी घटनाएं घटती हैं।
- समतापमण्डल में किसी प्रकार की मौसम की घटनाएं नहीं घटित होती हैं। यह वायुयानों की उड़ानों के लिए आदर्श परत है।
- आयनमण्डल में आयन की प्रधानता है। आयन रेडियो तरंगों को पृथ्वी पर परावर्तित करके संचार व्यवस्था को संभव बनाते हैं।
- बहिर्मण्डल में वायु का घनत्व सबसे कम पाया जाता है।

पाठगत प्रश्न 9.2

1. क्षोभसीमा किसे कहते हैं?

   _____

2. क्षोभमण्डल की ऊँचाई में विभिन्नता क्यों है?

   _____

3. किन दो मण्डलों में तापमान ऊँचाई के साथ बढ़ता है?

   _____

4. रेडियो तरंगें किस मण्डल से परावर्तित होती हैं?

   _____

टिप्पणी

5. वायुमण्डल की किस परत में घनत्व सबसे कम पाया है?

_____

6. ओजोन गैस वायुमण्डल की किस परत में पाई जाती है?

_____

9.3 वायुमण्डलीय गैसों की चक्रीय प्रक्रिया

वायुमण्डल में पाई जाने वाली प्रमुख गैसों का चक्रण नीचे दिया गया है–

(क) कार्बन चक्र

(ख) ऑक्सीजन चक्र

(ग) कार्बन–डाई–आक्साईड चक्र

(क) कार्बन चक्र

1. वायुमण्डल में कार्बन तत्व कार्बन–डाई–आक्साईड गैस के रूप में विद्यमान है। समस्त जीवों के कार्बन का स्रोत वायुमण्डल है।
2. हरे पेड़–पौधे वायुमण्डल से कार्बन–डाई–आक्साईड प्राप्त करते हैं। जिसका उपयोग सूर्य प्रकाश के माध्यम से भोजन निर्माण हेतु करते हैं। जिसे प्रकाश संश्लेषण कहते हैं। इस क्रिया द्वारा पेड़–पौधे 'कार्बोहाइड्रेट' भोजन के रूप में तैयार करते हैं। इनके द्वारा निर्मित कार्बोहाइड्रेट का उपयोग जीव जन्तु अपने भोजन के लिए करते हैं।
3. पृथ्वी पर कार्बन–डाई–आक्साईड गैस जल–भण्डारों में घुल जाती है और चूने के जमाव के रूप में इकट्ठी हो जाती है। चूने के पत्थर के अपघटन के बाद कार्बन–डाई–आक्साईड वायुमण्डल में पुनः पहुँच जाती है। इस प्रक्रिया को कार्बनीकरण कहते हैं। इस प्रकार वायुमण्डल और पृथ्वी के जलभण्डारों के बीच कार्बन–डाई–आक्साईड का आदान–प्रदान होता रहता है।
4. पेड़–पौधे तथा जीव–जन्तुओं के श्वसन के द्वारा, पौधों और जीव–जन्तुओं के अपघटकों द्वारा, कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस जैसे जीवाश्म ईंधन के जलने से उत्पन्न कार्बन–डाई–आक्साईड गैस वायुमण्डल में वापस चली जाती है।

इस प्रकार वायुमण्डल से कार्बन–डाई–आक्साईड का आना और धरातल से पुनः वायुमण्डल में वापस जाने की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है और इससे कार्बन एवं जैव मण्डल के बीच सन्तुलन बना रहता है।

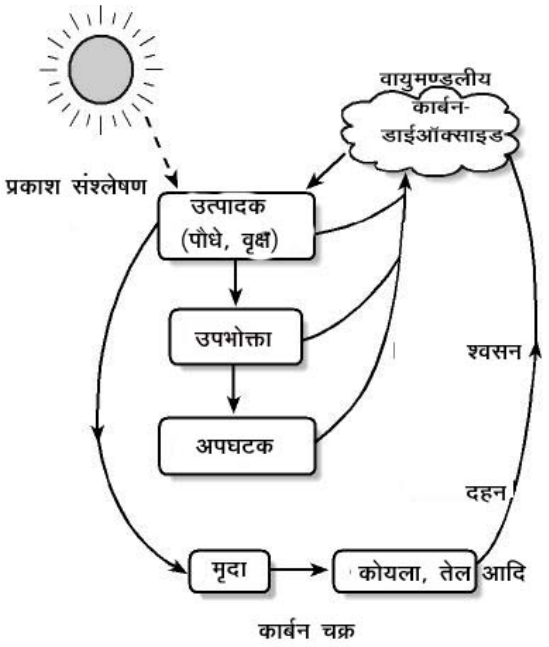

चित्र 9.3 कार्बन चक्र

(ख) ऑक्सीजन चक्र

1. ऑक्सीजन गैस वायुमण्डल में लगभग 21% है और समस्त जीव–जन्तु वायुमण्डल में उपस्थित ऑक्सीजन का उपयोग श्वसन के लिए करते हैं।

चित्र 9.4 ऑक्सीजन चक्र

2. ईंधन के रूप में लकड़ी, कोयला, पेट्रोलियम, गैस आदि के जलने के लिए ऑक्सीजन आवश्यक है और इसके जलने के बाद कार्बन-डाई-आक्साइड गैस उत्पन्न होती है।

टिप्पणी

3. वायुमण्डल में ऑक्सीजन का मुख्य स्रोत पेड़–पौधे हैं। जितने अधिक पेड़–पौधे होंगे उतनी ही अधिक ऑक्सीजन मिलेगी।

4. हरे पेड़–पौधे में प्रकाश संश्लेषण के द्वारा उत्पन्न ऑक्सीजन वायुमण्डल में वापस चली जाती है। इस प्रकार ऑक्सीजन चक्र की प्रक्रिया चलती रहती है।

(ग) नाइट्रोजन चक्र

नाइट्रोजन प्रत्येक जीवन का एक आवश्यक तत्व है। वायुमण्डल में 78% नाइट्रोजन गैस पाई जाती है। नाइट्रोजन का प्रमुख स्रोत मृदा में उपस्थित नाइट्रेट होते हैं। वायुमण्डल से नाइट्रोजन, वायुमण्डलीय तथा औद्योगिक प्रक्रियाओं द्वारा जैव घटकों में प्रवेश करती है। पौधों में से ये नाइट्रोजन यौगिक (खाद्य श्रृंखला) आहार द्वारा जन्तुओं में स्थानांतरित हो जाते हैं। वायुमण्डल की नाइट्रोजन गैस को नाइट्रोजन के यौगिक में परावर्तित करने की प्रक्रिया को नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहते हैं। पेड़–पौधों के सूखने और जीव–जन्तुओं के मरने पर जीवाणुओं द्वारा अपघटन होता है। इससे नाइट्रोजन गैस बनती है जो फिर से वायुमण्डल में वापस चली जाती है। इस तरह नाइट्रोजन गैस की चक्रीय प्रक्रिया पूरी होती है।

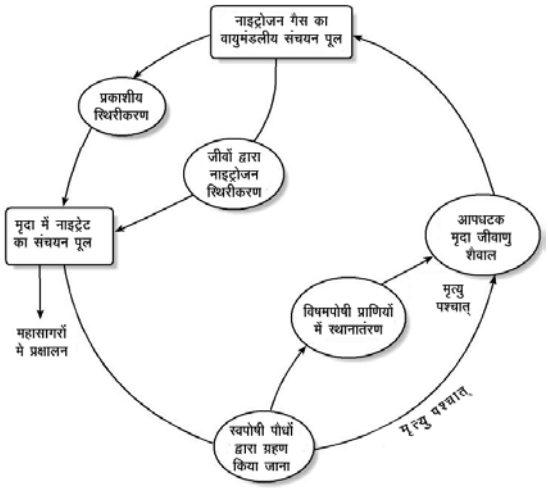

चित्र 9.5 नाइट्रोजन चक्र

- कार्बन का मुख्य स्रोत वायुमण्डल में पाई जाने वाली कार्बन डाई–आक्साइड गैस है।
- वायुमण्डल में ऑक्सीजन का मुख्य स्रोत पेड़–पौधे हैं।
- ऑक्सीजन का प्रयोग सांस लेने और ईंधन जलाने में होता है।
- नाइट्रोजन पृथ्वी पर जीवन के लिए अति आवश्यक है। पौधों में नाइट्रोजन का मुख्य स्रोत मृदा में उपस्थित नाइट्रेट होते हैं।

पाठगत प्रश्न 9.3

(i) कार्बन का मुख्य स्रोत क्या है?

_____

(ii) ऑक्सीजन का मुख्य स्रोत क्या है?

_____

(iii) वायुमण्डल में नाइट्रोजन का अनुपात कितना हैं?

_____

आपने क्या सीखा

वायुमण्डल विभिन्न प्रकार की गैसों से बना है। ये गैसें पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए हैं। दो प्रमुख गैसें नाइट्रोजन और ऑक्सीजन मिलकर वायुमण्डल के 99% भाग पर पायी जाती हैं। वायुमण्डल की संरचना क्षोभमण्डल, समतापमण्डल, मध्यमण्डल, आयनमण्डल और बहिर्मण्डल से मिलकर हुई है। क्षोभमण्डल में सभी प्रकार की मौसम सम्बंधी घटनाऐं घटित होती हैं, जबकि समतापमण्डल वायुयानों की उड़ानों के लिए आदर्श माना जाता है। आयनमण्डल से रेडियो तरंगे परावर्तित होकर पृथ्वी पर वापस आती है। इसके द्वारा रेडियो प्रसारण संभव होता है।

वायुमण्डल में कार्बन तत्व कार्बन–डाई–आक्साईड गैस के रूप में विद्यमान है। कार्बन का मुख्य स्रोत पेट्रोलियम, लकड़ी, कोयला और गैसे हैं। वायुमण्डल में ऑक्सीजन का मुख्य स्रोत पेड़–पौधे हैं। श्वसन और ईंधन के जलने हेतु ऑक्सीजन अति महत्वपूर्ण है। पौधों के नाइट्रोजन का प्रमुख स्रोत मृदा में उपस्थित नाइट्रेट है। पेड़-पौधों और जीव–जन्तुओं के अपघटन से नाइट्रोजन गैस बनती है और पुनः वायुमण्डल में वापस चली जाती है।

पाठान्त प्रश्न

1. वायुमण्डल किसे कहते हैं?
2. क्षोभमण्डल और समतापमण्डल में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
3. ओजोन गैस का महत्व बताइए।

टिप्पणी

4. नाइट्रोजन गैस की चक्रीय प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

5. ऑक्सीजन चक्र को आरेख की सहायता से स्पष्ट कीजिए।

(6) वायुमण्डल की संरचना का वर्णन आरेख की सहायता से कीजिए।

(7) निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए:

(i) कार्बन चक्र

(ii) वायुमण्डलीय गैसों का महत्व

(iii) जलवाष्प

(iv) धूल कण

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

9.1

(i) नाइट्रोजन और आक्सीजन

(ii) उष्णार्द्र क्षेत्र

(iii) सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणों का अवशोषण।

9.2

(1) देखें अनुच्छेद 9.1 (क)

(2) देखें अनुच्छेद 9.2 (ख)

(3) देखें अनुच्छेद 9.3 (ग)

(4) आयन मण्डल

(5) बहिर्मण्डल

(6) समताप मण्डल

9.3

(i) जलावन ईंधन एवं जीवाश्म ईंधन–कोयला, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस

(ii) पेड़–पौधे

(iii) 78 प्रतिशत

टिप्पणी

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1 अनुच्छेद 9.1 देखें

2 अनुच्छेद 9.2 (क और ख) देखें

3 अनुच्छेद 9.1 (क) के अन्तर्गत ओजोन गैस देखें

4 अनुच्छेद 9.3 (ग) देखें

5 अनुच्छेद 9.3 (ख) देखें

6 अनुच्छेद 9.7 देखें

7 (i) अनुच्छेद 9.3 (क) देखें, (ii) अनुच्छेद 9.1 देखें (iii) अनुच्छेद 9.1 (ख) देखें (iv) अनुच्छेद 9.1 (ग) देखें।

टिप्पणी

10

सूर्यातप और तापमान

हमने पिछले पाठ में अध्ययन किया है कि पृथ्वी के चारों ओर फैला वायु का आवरण वायुमंडल कहलाता है। वायुमंडल विभिन्न गैसों, जलवाष्प और धूल–कणों का मिश्रण है जो पेड़–पौधों और जीव–जंतुओं के जीवन के लिए आवश्यक है। हमें अपने आप को गर्म रखने तथा बढ़ने के लिए अनुकूल तापमान भी चाहिये। क्या आपने कभी विचार किया है कि पृथ्वी की सतह पर ताप और ऊर्जा प्राप्ति का स्रोत क्या है? धरातल दिन में गर्म और रात में ठंडा क्यों हो जाता है? आइये, प्रस्तुत पाठ में इन सभी प्रश्नों और इनसे सम्बन्धित अन्य प्रश्नों के उत्तर मालुम करें।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- सूर्यताप के महत्व को समझा सकेंगे और आरेख की सहायता से किसी स्थान पर सूर्य की किरणों के आपतन कोण और उससे मिलने वाली उष्मा की तीव्रता के बीच संबंध स्थापित कर सकेंगे;
- वायुमंडल को गर्म और ठंडा करने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं (विकरण, चालन, संवहन और अभिवहन) को स्पष्ट कर सकेंगे;
- आरेख की मदद से उष्मा बजट समझा सकेंगे;
- सूर्यातप एवं पार्थिव विकिरण में अन्तर बता सकेंगे;
- भूमंडल के गर्म होने के कारण और उसके प्रभाव को समझा सकेंगे;
- तापमान के क्षैतिज वितरण को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों की व्याख्या कर सकेंगे;
- जनवरी और जुलाई महीनों में तापमान के विश्व वितरण की प्रमुख विशेषताओं को मानचित्र की सहायता से समझा सकेंगे;
- ताप की विलोमता की दशाओं को स्पष्ट कर सकेंगे।

टिप्पणी

10.1 सूर्यातप (सौर विकिरण)

पृथ्वी पर ऊर्जा का प्रमुख स्रोत सूर्य है। यह ऊर्जा अंतरिक्ष में चारों ओर लघु तरंगों के रूप में विकरित होती रहती है। इस विकिरित ऊर्जा को सौर विकिरण कहा जाता है।

कुल सौर विकिरण का मात्र दो इकाई (1,00,00,00,000 का 0.000000002) ही धरातल पर पहुंचता है। दूसरे शब्दों में अगर हम सौर विकिरण की कुल मात्रा को एक अरब इकाई मान लें तो धरातल पर केवल 2 इकाई की उर्जा प्राप्त होती है। सौर विकिरण का यह अल्प भाग ही पृथ्वी के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि पृथ्वी पर होने वाली सारी भौतिक एवं जैविक घटनाओं के लिये ऊर्जा का एकमात्र स्रोत यही है।

लघु तरंगों के रूप में पृथ्वी की ओर आने वाले सौर विकिरण को सूर्यातप कहते हैं। पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाली सूर्याताप की मात्रा सूर्य से विकिरित ताप की मात्रा से बहुत ही कम होती है, क्योंकि पृथ्वी सूर्य से बहुत छोटी है और यह सूर्य से बहुत दूर है। इसके अतिरिक्त वायुमंडल में उपस्थित जलवाष्प, धूलकण, ओज़ोन तथा अन्य गैसे सूर्यातप की कुछ मात्रा को सोख लेती हैं।

- पृथ्वी की सतह पर ऊर्जा का प्रमुख स्रोत सूर्य है।
- पृथ्वी की ओर आने वाले सौर विकिरण को **सूर्यातप** कहते हैं।

(क) सूर्यातप को प्रभावित करने वाले कारक

सूर्यातप की मात्रा पृथ्वी की सतह पर सब जगह समान नहीं है। इसकी मात्रा स्थान–स्थान और समय–समय पर भिन्न होती है। ऊष्ण कटिबन्ध में मिलने वाला वार्षिक सूर्यातप सर्वाधिक होता है और ध्रुवों की ओर यह धीरे–धीरे कम होता जाता है। ग्रीष्म ऋतु में सूर्यातप अधिक होता है और शीत ऋतु में कम। धरातल पर प्राप्त सूर्यातप की मात्रा को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं :

(i) सूर्य की किरणों का आपतन–कोण

(ii) दिन की अवधि

(iii) वायुमंडल की पारदर्शकता

(i) सूर्य की किरणों का आपतन कोण : पृथ्वी के गोलाकार होने के कारण सूर्य की किरणें इसके तल के साथ विभिन्न स्थानों पर अलग–अलग कोण बनाती है। पृथ्वी के किसी बिन्दु पर सूर्य की किरण और पृथ्वी के वृत्त की स्पर्श रेखा के साथ बनने वाले कोण को **आपतन-कोण** कहते हैं। आपतन कोण सूर्याताप को दो प्रकार से प्रभावित करता है। पहला, जब सूर्य की स्थिति ठीक सिर के ऊपर होती है, उस समय सूर्य की किरणें लम्बवत् पड़ती हैं। आपतन कोण बड़ा होने के कारण सूर्य की किरणें छोटे से क्षेत्र पर संघनित हो जाती हैं, जिससे वहाँ अधिक ऊष्मा (सूर्यातप) प्राप्त होती है। यदि सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं तो आपतन कोण छोटा होता है। इससे सूर्य की किरणें बड़े क्षेत्र पर फैल जाती हैं और उनसे वहाँ

टिप्पणी

कम ऊष्मा (सूर्यातप) प्राप्त होती है। दूसरे, तिरछी किरणों को सीधी किरणों (लम्बवत्–किरणों) की अपेक्षा वायुमंडल में अधिक दूरी पार करके धरातल पर आना पड़ता है। सूर्य की किरणें जितना अधिक लम्बा मार्ग पार करेंगी उतनी ही अधिक उनकी ऊष्मा वायुमंडल द्वारा सोख ली जाएगी या परावर्तित कर दी जायेगी। इसी कारण एक स्थान पर तिरछी किरणों से लम्बवत् किरणों की अपेक्षा कम सूर्यातप प्राप्त होता है। (चित्र 10.1)

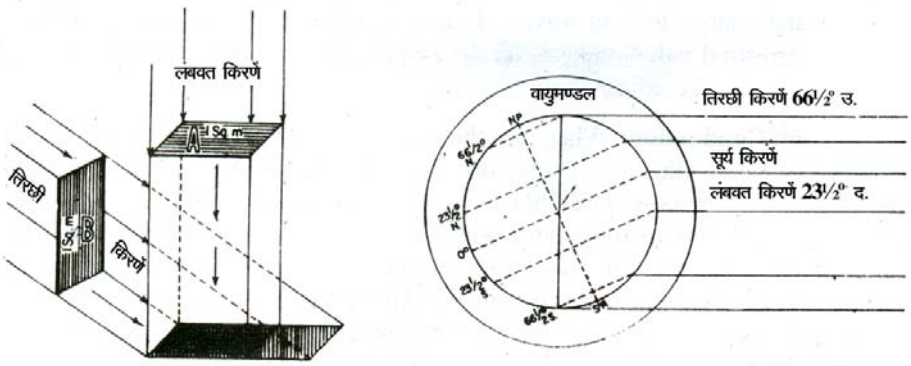

चित्र 10.1 सूर्यातप पर सूर्य की किरणों के आपतन कोण का प्रभाव

(ii) दिन की अवधि : दिन की अवधि स्थान–स्थान और ऋतुओं के अनुसार बदलती रहती है। पृथ्वी की सतह पर मिलने वाली सूर्यातप की मात्रा का दिन की अवधि से सीधा संबंध है। दिन की अवधि जितनी लम्बी होगी सूर्यातप की मात्रा उतनी ही अधिक मिलेगी। इसके विपरीत दिन की अवधि छोटी होने पर सूर्यातप कम मिलेगा।

(iii) वायुमंडल की पारदर्शकता : वायुमंडल की पारदर्शकता भी धरातल को मिलने वाली सूर्यातप की मात्रा को प्रभावित करती है। वायुमंडल की पारदर्शकता बादलों की उपस्थिति, उनकी गहनता, धूलकण तथा जलवाष्प पर निर्भर करती है; क्योंकि वे सूर्यातप को परावर्तित, अवशोषित तथा स्थानान्तरित करते हैं। घने बादल सूर्यातप को धरातल पर पहुँचने में बाधा डालते हैं; जबकि बादलों रहित साफ आकाश धरातल पर सूर्यातप पहुँचने में बाधा नहीं डालता। इसी कारण साफ आकाश की अपेक्षा बादलों से घिरे आकाश के समय सूर्यातप कम मिलता है। जलवाष्प भी सूर्यातप को अवशोषित कर धरातल पर उसकी प्राप्ति की मात्रा कम कर देती है।

- धरातल पर सूर्यातप प्राप्ति की मात्रा सूर्य की किरणों का आपतन कोण, दिन की अवधि और वायुमंडल की पारदर्शकता पर निर्भर करती है।

टिप्पणी

(ख) वायुमंडल का गर्म और ठंडा होना

वायुमंडल की ऊर्जा तथा गर्मी का एकमात्र स्रोत सूर्य है, परन्तु यह प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं करता। उदाहरणार्थ जब हम किसी पर्वत पर चढ़ते हैं या वायुमंडल में सूर्य की ओर ऊपर जाते हैं तो ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान बढ़ने के बजाय घटता है। इसका कारण है वायुमंडल के गर्म होने की प्रक्रिया का जटिल होना। वायुमंडल को सीधे गर्म करने वाली चार प्रक्रियाएं हैं। इनके नाम हैं :– (i) विकिरण, (ii) चालन, (iii) संवहन और (iv) अभिवहन।

(i) विकिरण : जब किसी ताप–स्रोत से ताप, तरंगों द्वारा किसी वस्तु तक सीधे पहुँचता है तो इस प्रक्रिया को **विकिरण** कहते हैं। विकिरण की इस प्रक्रिया में ऊष्मा आकाश में से होकर स्थानांतरित होती हैं। पृथ्वी को मिलने वाली और इससे छोड़ी जाने वाली अधिकांश ताप ऊर्जा विकिरण द्वारा ही स्थानांतरित होती हैं। विकिरण प्रक्रिया के लिये निम्नलिखित तथ्य उल्लेखनीय हैं :

(1) सभी वस्तुएं चाहे वे गर्म हों या ठंडी निरंतर ऊर्जा का विकिरण करती रहती हैं।

(2) ठंडी वस्तुओं की अपेक्षा गर्म वस्तुओं के प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक ऊर्जा विकिरित होती है।

(3) वस्तु का तापमान विकिरण तरंगों की लंबाई निर्धारित करता है। तापमान और विकिरण तरंगों की लंबाई में उल्टा संबंध होता है। कोई वस्तु जितनी अधिक गर्म होगी उसकी विकिरित तरंगों की लंबाई उतनी ही छोटी होगी।

(4) सूर्यातप पृथ्वी की सतह पर लघु तरंगों के रूप में पहुँचता है और पृथ्वी द्वारा छोड़ी जाने वाली ताप ऊर्जा दीर्घ तरंगों में होती है।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि वायुमंडल लघु तरंगों के लिये पारगम्य है और दीर्घ तरंगों के लिये अपारगम्य। यही कारण है कि वायुमंडल सूर्यातप की अपेक्षा पृथ्वी द्वारा छोड़ी गई ऊष्मा या पार्थिव विकिरण से अधिक गर्म होता है।

(ii) चालन : जब असमान तापमान की दो वस्तुएं एक–दूसरे के सम्पर्क में आती हैं तो ताप ऊर्जा अधिक गर्म वस्तु से कम गर्म वस्तु की ओर गमन करती है और इस प्रक्रिया को **चालन** कहते हैं। चालन क्रिया द्वारा ताप ऊर्जा का प्रवाह तब तक होता रहता है जब तक दोनों वस्तुओं के तापमान एक समान नहीं हो जाते अथवा उनके बीच संपर्क टूट नहीं जाता। वायुमंडल में चालन प्रक्रिया उस क्षेत्र में काम करती है, जहाँ वायुमंडल पृथ्वी की सतह के संपर्क में आता है। मगर चालन की प्रक्रिया वायुमंडल को गर्म करने में बहुत ही कम भूमिका निभाती है; क्योंकि चालन का प्रभाव धरातल के निकटस्थ वायु पर ही पड़ता है।

(iii) संवहन : वायु की सामान्यतः ऊर्ध्वाधर गति के कारण ऊष्मा का स्थानांतरण **संवहन** कहलाता है। वायुमडल की निचली परतें पृथ्वी द्वारा विकिरण अथवा चालन

टिप्पणी

द्वारा गर्म हो जाती है। वायु गर्म होकर फैलती है। इसका घनत्व कम हो जाता है और वह ऊपर उठती है। गर्म वायु के लगातार ऊपर उठने के कारण वायुमंडल की निचली परतों में खाली जगह हो जाती है। इस खाली जगह को भरने के लिए ऊपर से ठंडी वायु नीचे उतरती है और इस प्रकार संवहनीय धारायें बन जाती है। संवहन धाराओं में ताप का स्थानांतरण नीचे से ऊपर की ओर होता है और इस प्रकार वायुमंडल धीरे–धीरे गर्म हो जाता है।

(iv) **अभिवहन** : पवनें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ताप का स्थानांतरण करती हैं। यदि कोई स्थान गर्म क्षेत्रों से आने वाली पवनों के मार्ग में पड़ता है तो उसका तापमान बढ़ जाएगा। यदि वह ठंडे क्षेत्रों से आने वाली पवनों के मार्ग में पड़ता है तो उसका तापमान घट जाएगा। पवनों द्वारा ताप का क्षैतिज स्थानांतरण **अभिवहन** कहलाता है।

पाठगत प्रश्न 10.1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक या दो शब्दों में दीजिए :

   (क) सूर्य से पृथ्वी की ओर सौर ऊर्जा का प्रवाह किस प्रक्रिया द्वारा होता है ?

   _____

   (ख) पृथ्वी को सौर विकिरण का कितना भाग प्राप्त होता है ?

   _____

   (ग) उस प्रक्रिया का नाम बताइए जिसमें ऊष्मा का क्षैतिज स्थानांतरण पवनों द्वारा होता है?

   _____

   (घ) किसी स्थान पर सूर्यातप की मात्रा को प्रभावित करने वाले तीन कारकों के नाम बताइए।

   (i)_____(ii)_____(iii)_____

2. निम्नलिखित प्रत्येक में से सही विकल्प चुनिए और उस पर चिन्ह (√) लगाइये :

   (क) पृथ्वी की सतह पर सूर्यातप आता है :–

   (i) लघुतरंगों में (ii) दीर्घ तरंगों में

   (iii) दोनों तरंगों में (iv) उनमें में किसी द्वारा नहीं।

   (ख) वायुमंडल गर्म होता है –

   (i) सूर्यातप द्वारा (ii) पृथ्वी द्वारा छोड़ी गई ऊष्मा द्वारा

टिप्पणी

(iii) दोनों प्रक्रियाओं द्वारा (iv) किसी के द्वारा नहीं

(ग) सूर्यास्त के बाद भी वायुमंडल गर्म होता रहता है –

(i) सूर्यास्त द्वारा (ii) पार्थिव विकिरण द्वारा

(iii) चालन द्वारा (iv) संवहन द्वारा

10.2 ऊष्मा बजट

सौर विकिरण का वह भाग जो पृथ्वीतल पर लघु तरंगों के रूप में आता है, सूर्यातप कहलाता है। पृथ्वी भी अन्य वस्तुओं की भांति ताप ऊर्जा विकिरित करती रहती है इसे **पार्थिव विकिरण** कहते हैं। पृथ्वी की सतह का औसत वार्षिक तापमान हमेशा स्थिर रहता है। इसका प्रमुख कारण सूर्यातप और पार्थिव विकिरण के बीच संतुलन का होना है। इसी संतुलन को **ऊष्मा बजट** कहते हैं।

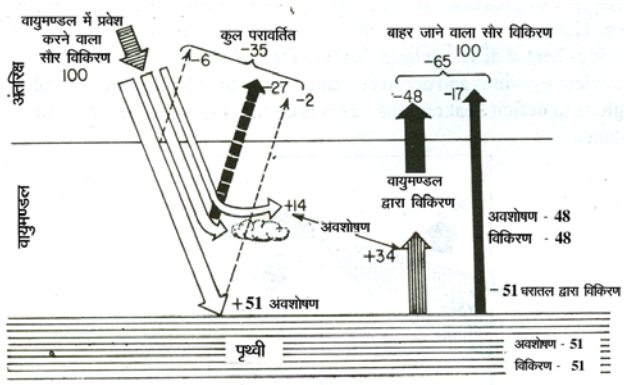

चित्र 10.2 ऊष्मा बजट (सूर्यातप और पार्थिव विकिरण के बीच संतुलन)

कल्पना करें कि वायुमंडल की ऊपरी सीमा पर सूर्यास्त की 100 इकाईयाँ प्राप्त हो रही है। इनमें से लगभग 35 इकाईयाँ पृथ्वी तल पर आने से पहले ही अंतरिक्ष में परावर्तित हो जाती हैं। इन 35 इकाइयों में से 6 इकाइयाँ वायुमंडल की ऊपरी सीमा से अंतरिक्ष को परावर्तित हो जाती हैं। 27 इकाइयाँ बादलों द्वारा और 2 इकाइयाँ धरातल के हिम और बर्फ से ढके क्षेत्रों द्वारा परावर्तित हो जाती हैं। शेष 65 (100–35) इकाइयों में से 51 इकाइयाँ सीधे पृथ्वीतल को प्राप्त होती हैं और 14 इकाइयों को वायुमंडल की विभिन्न गैंसे, जलवाष्प और धूलकण अवशोषित कर लेते हैं।

सूर्यातप द्वारा प्राप्त 51 इकाईयों को पृथ्वी भी पार्थिव विकिरण के रूप में लौटा देती है। इन 51 इकाइयों में से 34 इकाइयाँ वायुमंडल द्वारा अवशोषित की जाती हैं और शेष 17 इकाइयाँ अंतरिक्ष में विलीन हो जाती हैं।

वायुमंडल भी अवशोषित की गई 48 इकाइयों (14 सूर्यातप की और 34 पार्थिक विकिरण की) को धीरे–धीरे अंतरिक्ष में विलीन कर देता है। इस प्रकार ऊष्मा की 65

टिप्पणी

इकाइयाँ जिन्होंने वायुमंडल में प्रवेश किया था अंतरिक्ष में वापिस कर दी जाती हैं। इससे सूर्यताप और पार्थिव विकिरण के मध्य एक संतुलन बना रहता है।

- सूर्यताप और पार्थिव विकिरण के मध्य बने संतुलन को **ऊष्मा बजट** कहते हैं।

10.2 (क) अक्षांशीय ऊष्मा संतुलन

यद्यपि सम्पूर्ण पृथ्वी पर सूर्यातप और पार्थिव विकिरण के बीच संतुलन बना रहता है। परंतु यह संतुलन विभिन्न अक्षांशों के मध्य कायम नहीं रहता। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि सूर्यातप की मात्रा और पार्थिव विकरण का सीधा संबंध अक्षांशों से है। ऊष्ण कटिबंधीय प्रदेश में सूर्यातप की मात्रा पार्थिव विकरण से अधिक है। इसलिए यह अतिरिक्त ताप का क्षेत्र है। ध्रुवीय क्षेत्र में ताप–प्राप्ति ताप–ह्रास की अपेक्षा कम है। अतः यह ताप–अभाव का प्रदेश है। इस प्रकार सूर्यातप विभिन्न अक्षांशों के मध्य ऊष्मा असंतुलन पैदा करता है। धरातलीय पवनें और महासागरीय धारायें अतिरिक्त ताप–क्षेत्र से ताप–अभाव क्षेत्र की ओर ऊष्मा का स्थानांतरण करके इस असंतुलन को कुछ सीमा तक कम करती हैं। इसी को सामान्यतः **अक्षांशीय ऊष्मा संतुलन** कहते हैं।

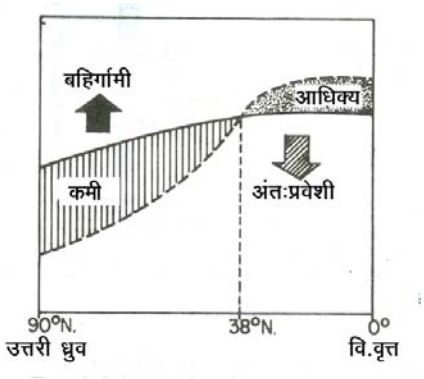

चित्र 10.3 अक्षांशीय ऊष्मा संतुलन

10.3 भूमंडलीय तापन

आज हमारी पृथ्वी के समक्ष सबसे बड़ी समस्या भूमंडलीय तापन है। वैज्ञानिक इसका संबंध वायु में ओजोन परत के घटने और कार्बन–डाइ–आक्साइड के बढ़ने से बताते हैं। आप जानते हैं कि समतापमंडल के ऊपरी भाग में ओज़ोन गैस की परत है। ओज़ोन सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणों को अवशोषित कर लेती है और उन्हें पृथ्वीतल तक नहीं पहुँचने देती। वैज्ञानिकों का मत है कि ओज़ोन परत की मोटाई अब घट रही है। इस कारण वायुमंडल की गैंसों का संतुलन बिगड़ रहा है और सूर्य की पराबैंगनी किरणें धरातल पर पहुंच रही है। ये धरातल के तापमान को बढ़ाने और पेड़–पौधों तथा जीव–जंतुओं को कई तरह से प्रभावित करने के लिए उत्तरदायी हैं।

गत 50 वर्षों में कोयला और पेट्रोलियम के उत्पादों को बड़ी मात्रा में जलाने के परिणाम स्वरूप वायुमंडल में कार्बन–डाई–ऑक्साइड का अनुपात धीरे–धीरे बढ़ रहा है। ऐसा

टिप्पणी

अनुमान है कि पिछले 100 वर्षों के अंतराल में कार्बन–डाइ–आक्साइड की मात्रा में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। कार्बन–डाई–आक्साइड सूर्यातप को तो गुजर जाने देती है; परन्तु पार्थिव विकिरण को अवशोषित कर लेती है। वायुमंडल में कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा बढ़ने के परिणाम स्वरूप, भूमण्डल का तापमान बढ़ रहा है। ऐसा अनुमान है कि गत 100 वर्षों में कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा बढ़ने के कारण वायुमंडल का तापमान लगभग 0.5ºC बढ़ गया है। बड़े पैमाने पर वनों के विनाश, कूड़े–करकट का जलाना, कारखानों में दोहन क्रियाओं और ज्वालामुखी के उद्‌गारों के कारण भी वायुमंडल में कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा बढ़ी है।

यदि ओजोन परत का ह्रास और कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि इसी प्रकार होती रही तो ऐसा समय आ सकता है, जब वायुमंडल का तापमान इस सीमा तक बढ़ जायेगा, कि इससे ध्रुवीय हिमचादर पिघल सकती है और समुद्र–तल के ऊँचा होने से तटीय भाग तथा द्वीप पानी में डूब सकते हैं। ओज़ोन परत के ह्रास और कार्बन–डाइऑक्साइड में वृद्धि के कारण सारी पृथ्वी के तापमान के बढ़ने को **भूमंडलीय तापन** कहते हैं।

- अक्षांशीय ऊष्मा संतुलन : सूर्यातप द्वारा अक्षांशों के मध्य पैदा किये ऊष्मा असंतुलन को कम करने के लिए पवनों और महासागरीय धाराओं द्वारा निम्न अक्षांशों से उच्च अक्षांशों की ओर ऊष्मा का स्थानांतरण
- भूमंडलीय तापन : ओज़ोन परत के ह्रास और कार्बन–डाइऑक्साइड की वृद्धि के कारण सारी पृथ्वी के वायुमंडल के तापमान का बढ़ना।

पाठगत प्रश्न 10.2

1. निम्नलिखित शब्दों की परिभाषा दीजिए :

   (क) ऊष्मा बजट (ख) अक्षांशीय ऊष्मा संतुलन (ग) भूमंडलीय तापन

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :

   (क) पृथ्वी की सतह को सूर्यातप का कितना प्रतिशत भाग प्राप्त होता है ?

   (ख) वायुमंडल की ऊपरी सीमा से सूर्यातप का कितने प्रतिशत भाग अंतरिक्ष को परावर्तित हो जाता है?

   (ग) अतिरिक्त ऊष्मा के क्षेत्र का नाम बताइए।

   (घ) ऊष्मा–अभाव का क्षेत्र कौन–सा है?

10.4 तापमान एवं उसका वितरण

ऊष्मा वह ऊर्जा है जो किसी वस्तु को गर्म करती है जबकि **तापमान** किसी वस्तु में ऊष्मा की तीव्रता की माप है। यद्यपि ऊष्मा और तापमान दो अलग–अलग पहलू हैं

टिप्पणी

परन्तु इन दोनों के बीच बहुत निकट का संबंध है। जब किसी वस्तु में ऊष्मा की वृद्धि या कमी होती है तो उस वस्तु का तापमान भी क्रमशः बढ़ या घट जाता है। इसके अतिरिक्त तापमान का अंतर ऊष्मा के प्रवाह की दिशा निर्धारित करता है। इस बात की जानकारी तापमान के वितरण का अध्ययन करके की जा सकती है।

तापमान का क्षैतिज एवं उर्ध्वाधर वितरण दोनों ही बदलते रहते हैं। अतः तापमान के वितरण का अध्ययन नीचे दिए दो रूपों में किया जाता है :

(क) तापमान का क्षैतिज वितरण

(ख) तापमान का ऊर्ध्वाधर वितरण

(क) तापमान का क्षैतिज वितरण : पृथ्वी की सतह पर अक्षांश और देशांतर रेखाओं के आरपार तापमान के वितरण को **तापमान का क्षैतिज वितरण** कहते हैं। इस वितरण को मानचित्र में समताप रेखाओं द्वारा दर्शाया जाता है। **समताप रेखा** मानचित्र पर खींची गई वह काल्पनिक रेखा है जो मध्य समुद्र तल पर उतारे गये समान तापमान वाली स्थानों को मिलाती है। यदि आप तापमान के वितरण को दर्शाने वाली समताप रेखाओं के मानचित्र का अध्ययन करें तो आपको ज्ञात होगा कि पृथ्वी की सतह पर तापमान का वितरण समान नहीं है। तापमान के असमान वितरण के लिये उत्तरदायी कारक हैं – (i) अक्षांश, (ii) स्थल और जल की विषमता, (iii) उच्चावच एवं ऊँचाई, (iv) महासागरीय धारायें, (v) पवनें, (vi) वनस्पति आवरण, (vii) मिट्टी की प्रकृति और (viii) भूमि का ढाल एवं अभिमुखता।

(i) **अक्षांश** : आपने सूर्यातप के अंतर्गत पहले ही पढ़ लिया है कि विषुवत वृत्त से ध्रुवों की ओर जाने पर सूर्य की किरणों का आपतन–कोण छोटा होता जाता है। आपतन कोण जितना बड़ा होगा उतना ही ऊँचा तापमान होगा। इसके विपरीत छोटे आपतन कोण के कारण तापमान नीचे होते हैं। इस सिद्धांत के आधार पर ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में ऊँचे तापमान पाये जाते हैं और ध्रुवों पर वर्ष के अधिकतर भाग में तापमान हिमांक बिंदु से नीचे रहते हैं।

(ii) **स्थल और जल की विषमता :** स्थल और जल की विषमता का तापमान के वितरण पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। दिन (सूर्य के प्रकाश) में स्थल भाग जल भाग की अपेक्षा शीघ्र और अधिक गर्म हो जाता है। यह रात में भी शीघ्र और अधिक ठंडा हो जाता है। अतः दिन के समय अपेक्षाकृत ऊँचे तापमान स्थल भाग पर पाये जाते हैं और रात के समय जलभाग पर। इसी प्रकार तापमान के वितरण में ऋतुओं के अनुसार भी भिन्नताएँ मिलती हैं। ग्रीष्म ऋतु में महासागरों की अपेक्षा महाद्वीपों पर ऊँचे तापमान मिलते हैं। शीत ऋतु में महाद्वीपों की अपेक्षा महासागरों पर ऊँचे तापमान पाये जाते हैं।

स्थल और जल के बीच तापमान की बहुत बड़ी विषमता होने के बावजूद भी अलग–अलग प्रकार के भूभागों के भी गर्म होने की दर अलग–अलग है। हिम से ढका ध्रुवीय भाग बहुत धीरे–धीरे गर्म होता है; क्योंकि वह सौर ऊर्जा का

टिप्पणी

अधिकतर भाग परावर्तित कर देता है। वनस्पति से ढका भूभाग भी ज्यादा गर्म नहीं हो पाता; क्योंकि सूर्यातप की अधिक मात्रा पौधों में से जल को वाष्पित करने में खर्च हो जाती है।

(iii) **उच्चावच एवं ऊँचाई :** पर्वत, पठार और मैदान जैसे उच्चावच लक्षण तापमान के वितरण को नियंत्रित करते हैं। पवनों के प्रवाह में पर्वत अवरोध का कार्य करते हैं। हिमालय पर्वतमाला शीतऋतु में मध्य एशिया से आने वाली ठंडी पवनों को रोक कर भारत के तापमान को नीचे गिरने से रोकती हें इसी कारण शीत ऋतु में कोलकत्ता (भारत) उतना ठंडा नहीं होता जितना वयांगजो (कैन्टन, चीन) यद्यपि दोनों नगर एक ही अक्षांश वृत्त पर स्थित हैं।

हम समुद्र तल से जैसे–जैसे ऊपर जाते हैं तापमान में धीरे–धीरे गिरावट का अनुभव करते हैं। तापमान औसतन प्रति 165 मीटर की ऊँचाई पर $1.^0$ सें. की दर से गिरता है। **इसे सामान्य ह्रास दर** कहते हैं। कम ऊँचाई की वायु तप्त धरातल के निकट होने और घनी होने के कारण अधिक ऊँचाई की वायु से ज्यादा गर्म होती है। यही कारण है कि ग्रीष्म ऋतु में मैदानों की अपेक्षा पर्वतीय भाग ठंडे होते हैं (चित्र 10.4)। यहाँ यह भी याद रखना चाहिए कि किसी स्थान पर ऊँचाई के साथ तापमान कम होने की दर दिन के विभिन्न समयों, ऋतु और स्थान की स्थिति के अनुसार बदलती रहती है।

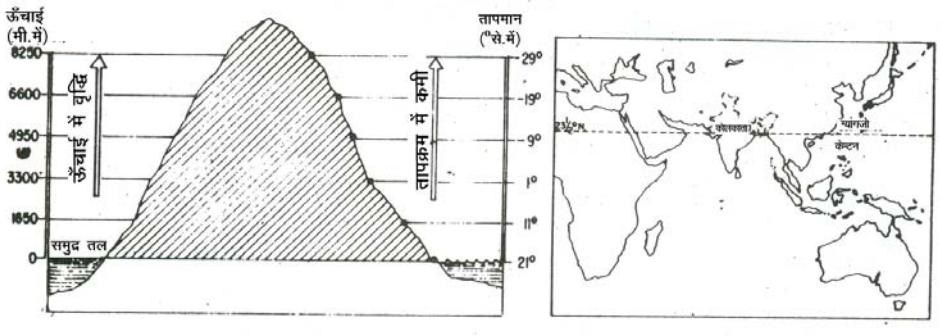

चित्र 10.4 ऊँचाई का तापमान पर प्रभाव

क्विटो और गुआयक्विल विषुवत वृत्त पर एक दूसरे के निकट स्थित इक्वेडोर (द. अमरीका) के दो नगर हैं। इन दोनों नगरों की समुद्र तल से ऊँचाई क्रमशः 2800 मीटर तथा 12 मीटर है। ऊँचाई में भिन्नता के कारण क्विटो का औसत वार्षिक तापमान 13.3 डिग्री सेल्सीयस है; जबकि गुआयाक्विल का औसत वार्षिक तापमान 25.5 डिग्री सेल्सीयस है।

टिप्पणी

(iv) **महासागर धाराएं :** महासागर धारायें गर्म और ठंडी दो प्रकार की होती हैं। गर्म धाराएं जिन तटों के साथ बहती हैं, उन्हें अपेक्षाकृत गर्म कर देती हैं और ठंडी धारायें निकटवर्ती तटों को ठंडा बना देती हैं। उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट (गर्म धारा) के कारण उत्तरी–पश्चिमी यूरोप का तट सर्दियों में जमने नहीं पाता, जबकि कनाडा का क्यूबेक तट लेब्राडोर ठण्डी धारा के कारण सर्दियों में जम जाता है। यद्यपि यह उत्तरी–पश्चिमी यूरोप के तट की अपेक्षा निम्न अक्षांशों में स्थित है।

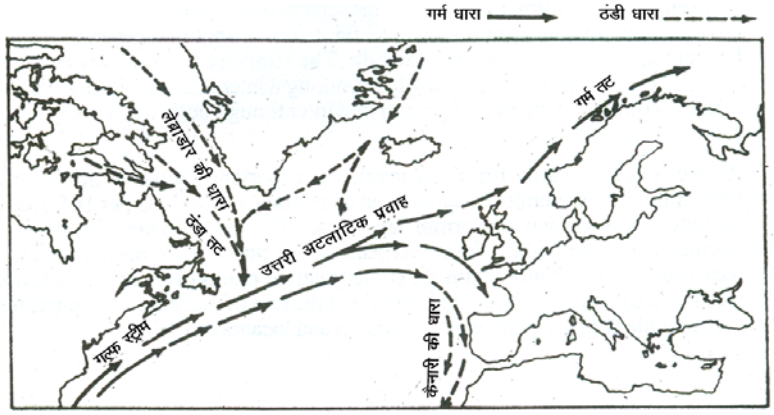

चित्र 10.5 गर्म और ठंडी महासागर धाराओं का प्रभाव

(v) **पवनें :** पवनें एक स्थान से दूसरे स्थान पर ऊष्मा का स्थानांतरण करती हैं। इसके बारे में आप अभिवहन के अंतर्गत भी पढ़ चुके हैं।

(vi) **वनस्पति आवरण :** वनस्पति आवरण सूर्य से प्राप्त ऊष्मा को सोख लेती है और पार्थिव विकिरण को रोकती है। इसके विपरीत वनस्पति विहीन मृदा सूर्य से प्राप्त ऊष्मा को शीघ्र सोख लेती है और शीघ्र ही विकिरित कर देती है। इसलिए घने वनों में तापमान में भिन्नता मरुस्थलीय प्रदेशों की अपेक्षा कम पाई जाती है। उदाहरणार्थ विषुवतीय प्रदेशों में वार्षिक ताप परिसर लगभग 5 डिग्री से. है, जबकि मरूस्थलीय प्रदेशों में यह 38 डिग्री तक बढ़ जाता है।

(vii) **मिट्टी की प्रकृति :** मिट्टी का रंग, उसकी बनावट तथा संगठन किसी स्थान के तापमान को प्रभावित करते हैं। बलुई मिट्टी की अपेक्षा काली, पीली तथा चिकनी मिट्टी अधिक ऊष्मा अवशोषित करती हैं। साथ ही बलुई मृदा, काली, पीली तथा चिकनी मृदा की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से ऊष्मा विकिरित कर देती है। यही कारण है कि काली मिट्टी के क्षेत्रों में तापमान की भिन्नता कम मिलती है; जबकि बलुई मिट्टी के क्षेत्रों में तापमान में बहुत अधिक भिन्नता मिलती है। समतल और चमकदार धरातल कम ऊष्मा ग्रहण करता है और शीघ्र विकिरित कर देता है जबकि ऊबड़–खाबड़ धरातल अधिक ऊष्मा सोखता है और इसका विकिरण धीरे–धीरे करता है।

टिप्पणी

(viii) भूमि का ढाल एवं अभिमुखता : भूमि के ढाल की दिशा और उसका कोण सूर्यातप की प्राप्ति को नियंत्रित करते हैं। सूर्य की ओर अभिमुख ढलान अधिक सूर्यातप प्राप्त करते है; जबकि सूर्य से विमुख ढाल कम ऊष्मा प्राप्त करते हैं। हिमालय के दक्षिणी ढाल, उत्तरी ढलानों की अपेक्षा अधिक गर्म हैं। यही कारण है कि अधिकांश बस्तियां और कृषि कार्य हिमालय के दक्षिणी ढलानों पर पाये जाते हैं।

- समुद्र तल पर उतारे गये समान तापमान वाले स्थानों को मिलाने वाली मानचित्र पर खींची गई रेखाओं को **समताप रेखा** कहते हैं।
- अक्षांश, स्थल और जल की विषमता, उच्चावच एवं ऊँचाई, महासागर धारायें, पवनें, वनस्पति आवरण, मिट्टी की प्रकृति एवं भूमि का ढाल तथा अभिमुखता धरातल पर तापमान के वितरण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं।

संसार में तापमान के क्षैतिज वितरण को जनवरी और जुलाई महीने के समताप रेखा मानचित्रों द्वारा अध्ययन किया जा सकता है। इन दो महीनों में अधिकतम और न्यूनतम तापमानों की ऋतुओं के अनुसार भिन्नता उत्तरी और दक्षिणी गोलार्ध में अधिक स्पष्ट होती है।

(1) जनवरी में तापमान का क्षैतिज वितरण

जनवरी में सूर्य की किरणें मकर वृत्त के निकट लम्बवत् पड़ती हैं। अतः दक्षिणी गोलार्ध में उस समय ग्रीष्म ऋतु होती है और उत्तरी गोलार्ध में शीत ऋतु। इस समय दक्षिण गोलार्ध में महाद्वीपों के तीन क्षेत्रों में ऊँचे तापमान पाये जाते हैं। ये क्षेत्र हैं उत्तरी–पश्चिमी अर्जेन्टीना, पूर्वी–मध्य अफ्रीका और मध्यवर्ती आस्ट्रेलिया। इन क्षेत्रों को 30 डिग्री से. समताप रेखा घेरती है। उत्तरी गोलार्ध में इस समय महासागरों की अपेक्षा महाद्वीप अधिक ठंडे होते हैं। इस ऋतु में उत्तरी पूर्वी एशिया में सबसे कम तापमान पाये जाते हैं।

उत्तरी गोलार्ध में महाद्वीपों की अपेक्षा महासागरों के ऊपर की वायु गर्म होती है। इसलिए यहाँ समताप रेखायें महाद्वीपों को पार करते समय विषुवत वृत्त की ओर एवं महासागरों को पार करते समय ध्रुवों की ओर मुड़ जाती है। दक्षिणी गोलार्ध में समताप रेखाओं की स्थिति उत्तरी गोलार्ध में समताप रेखाओं की स्थिति के ठीक विपरीत होती है। वे महाद्वीपों को पार करते समय ध्रुवों की ओर मुड़ जाती है और महासागरों को पार करते समय विषुवत रेखा की ओर मुड़ जाती है।

दक्षिणी गोलार्ध में महाद्वीपों की अपेक्षा महासागरों का विस्तार अधिक है। इसलिए यहाँ समताप रेखायें नियमित तथा दूर–दूर हैं। इसके विपरीत उत्तरी गोलार्ध में समताप रेखायें, महाद्वीपों का अधिक विस्तार होने के कारण, अनियमित तथा पास–पास है। इन्हीं कारणों से दक्षिणी गोलार्ध के मध्य और उच्च अक्षांशों में भूमि और जल के बीच तापमान में अधिक विषमता नहीं मिलती जैसी कि विषमता उत्तरी गोलार्ध में मिलती है।

टिप्पणी

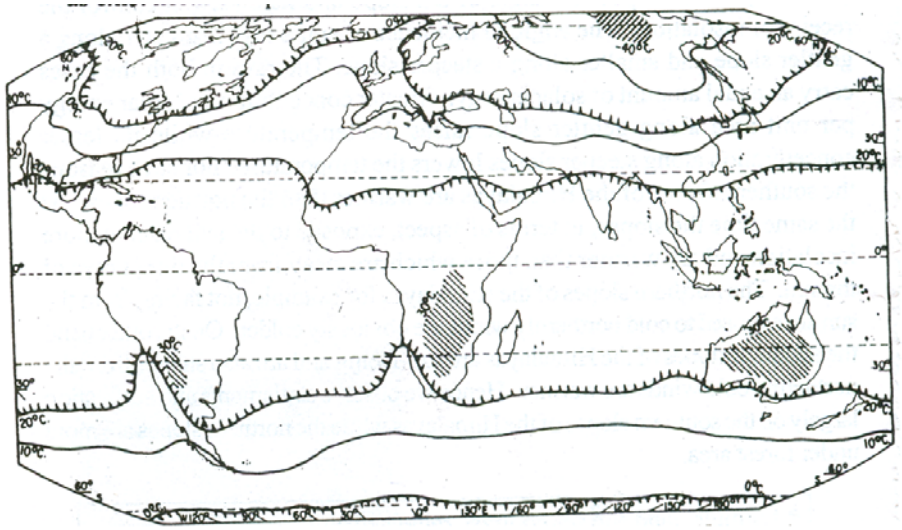

चित्र 10.6 तापमान का क्षैतिज वितरण (जनवरी)

(ii) जुलाई में तापमान का क्षैतिज वितरण

जुलाई में सूर्य की लम्बवत् किरणें कर्क वृत्त के निकट पड़ती हैं। इस कारण सम्पूर्ण उत्तरी गोलार्ध में ऊँचे तापमान पाये जाते हैं। 30 डिग्री से. की समताप रेखा 10 डिग्री और 40 डिग्री उत्तरी अक्षांशों के बीच गुजरती है। ऐसे ऊँचे तापमान के प्रमुख क्षेत्र हैं, दक्षिण–पश्चिम संयुक्त राज्य अमरीका, सहारा, अरब, ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, भारत का मरुस्थल और चीन। लेकिन ग्रीष्म ऋतु में उत्तरी गोलार्ध के मध्यवर्ती ग्रीनलैंड में 0^0 डिग्री से. के न्यूनतम तापमान भी पाये जाते हैं।

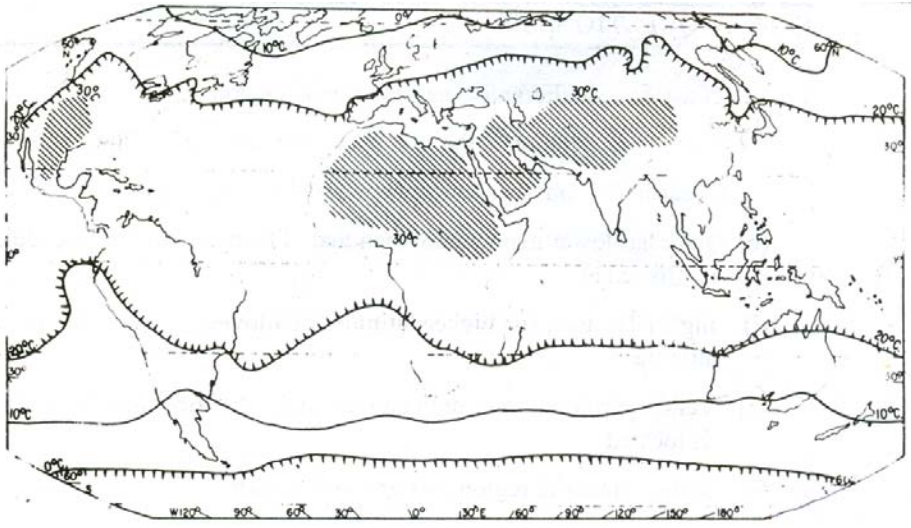

चित्र 10.7 तापमान का क्षैतिज वितरण (जुलाई)

टिप्पणी

उत्तरी गोलार्ध में ग्रीष्म ऋतु की अवधि में समताप रेखायें महासागरों को पार करते समय विषुवत वृत्त की ओर मुड़ जाती है और महाद्वीपों को पार करते समय वे ध्रुवों की ओर मुड़ती है। दक्षिणी गोलार्ध में समताप रेखाओं की स्थिति उत्तरी गोलार्ध की स्थिति से बिल्कुल विपरीत होती है। महासागरों पर समताप रेखायें दूर–दूर और महाद्वीपों पर वे पास–पास होती हैं।

जनवरी और जुलाई के समताप रेखाओं के मानचित्रों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर निम्नलिखित प्रमुख बातें स्पष्ट होती हैं :

1. सूर्य की लम्बवत् किरणों के क्षेत्र में परिवर्तन होने के कारण उच्चतम तापमान के क्षेत्रों में अक्षांशीय परिवर्तन होता है।

2. विषुवत वृत्त से ध्रुवों की ओर सूर्यातप की मात्रा घटने के कारण उच्चतम तापमान निम्न अक्षांशों में और न्यूनतम तापमान उच्च अक्षांशों में पाये जाते हैं।

3. उत्तरी गोलार्ध में समताप रेखायें स्थल भाग छोड़ते ही शीत ऋतु में तेजी से ध्रुवों की ओर मुड़ जाती हैं और ग्रीष्म ऋतु में विषुवत वृत्त की ओर। समताप रेखाओं के इस प्रकार मुड़ने का मुख्य कारण स्थल और जल के गर्म या ठंडा होने में अंतर है। महाद्वीप महासागरों की अपेक्षा ग्रीष्म ऋतु में अधिक गर्म और शीत ऋतु में अधिक ठंडे होते हैं।

   सबसे गर्म महीने और सबसे ठंडे महीने के औसत तापमानों का अंतर **वार्षिक ताप परिसर** कहलाता है। उत्तरी गोलार्ध के मध्य और उच्च अक्षांशों में महाद्वीपों के आंतरिक भागों में वार्षिक ताप परिसर बहुत अधिक है। उदाहरणार्थ साइबेरिया के वर्खोयांस्क स्थान का वार्षिक ताप परिसर 68 डिग्री से. है, जो संसार में सर्वाधिक हैं शीत ऋतु में इस स्थान का न्यूनतन तापमान – 50 डिग्री सें. है। इसलिए इसे पृथ्वी का ''शीत ध्रुव'' कहते हैं।

- वर्ष के सबसे गर्म और सबसे ठंडे महीनों के औसत तापमानों का अंतर **वार्षिक ताप परिसर** कहलाता है।

पाठगत प्रश्न 10.3

1. सही विकल्प चुन कर उस पर चिन्ह (√) लगाइए :

   (क) पार्थिव विकिरण में ऊष्मा विकिरित होती है –

   (i) पृथ्वी से, (ii) सूर्य से,

   (iii) वायुमंडल से, (iv) जलमण्डल से

   (ख) क्विटो का तापमान गुआयाक्विल की अपेक्षा नीचे है; क्योंकि क्विटो स्थित है –

टिप्पणी

(i) उच्च अक्षांश पर (ii) अधिक ऊँचाई पर

(iii) निम्न अक्षांश पर (iv) समुद्र–तल के निकट

(ग) वर्खोयांस्क का वार्षिक ताप परिसर बहुत ऊँचा है, क्योंकि यह स्थान स्थित है –

(i) विषुवतीय प्रदेश में (ii) समुद्र तट पर

(iii) एशिया के आंतरिक भाग में (iv) पर्वत पर।

2. निम्नलिखित प्रत्येक कथन के लिये एक पारिभाषित शब्द दीजिए :–

(क) पवनों द्वारा ताप का क्षैतिज स्थानांतरण।

(ख) मानचित्र पर खींची गई काल्पनिक रेखायें जो समुद्र तल पर उतारे गये समान तापमान वाले स्थानों को मिलाती है।

(ग) सबसे गर्म और सबसे ठंडे महीनों के औसत तापमानों का अंतर।

(ख) तापमान का ऊर्ध्वाधर वितरण

ऊँचाई के आधार पर तापमान के वितरण को तापमान का ऊर्ध्वाधर वितरण कहते हैं। इसका सबसे महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान घटता जाता है। आप जानते हैं कि वायुमंडन मुख्यतया पार्थिव विकिरण से गर्म होता है। वायुमंडल की परतें जो धरातल के निकट होती हैं, पृथ्वी से सर्वाधिक ऊष्मा प्राप्त करती हैं इसलिए वे सबसे ज्यादा गर्म में होती है। लेकिन जब हम ऊपर जाते हैं तो तापमान धीरे–धीरे कम होता जाता है; क्योंकि ऊपर की परतें पृथ्वी के विकिरण द्वारा कम ऊष्मा प्राप्त करती हैं। ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान गिरने की दर 1 डिग्री से. प्रति 165 मीटर है। इसे तापमान की **सामान्य ह्रास दर** कहते हैं।

(ग) ताप विलोमता

शीतकालीन लंबी रात, साफ आकाश, शुष्क वायु और पवनों की अनुपस्थिति के कारण धरातल तथा वायुमंडल की निचली परतों से ऊष्मा का विकिरण बड़ी तीव्रता से होता है। परिणामस्वरूप धरातल के निकट की वायु ठंडी हो जाती है। ऊपर की परतें, जिनसे ऊष्मा इतनी शीघ्रता से विकिरित नहीं हो पाती अपेक्षाकृत गर्म रहती है। अतः तापमान की सामान्य दशा, जिसमें ऊँचाई के साथ तापमान कम होता है, उलट जाती है। दूसरे शब्दों में ऊँचाई बढ़ने के साथ तापमान भी बढ़ता है। इसी स्थिति को **ताप की विलोमता** या **तापमान व्युत्क्रमण** कहते हैं। कभी–कभी ठंडी और भारी वायु धरातल के निकट

टिप्पणी

कई दिनों तक टिकी रहती है। अतः ताप की विलोमता की दशा कई दिनों तक चलती रहती है।

ताप की विलोमता की स्थिति विशेषतया अंतरपर्वतीय घाटियों में पायी जाती है। शीत ऋतु में पर्वतीय ढलान शीघ्र विकिरण के कारण बहुत जल्दी ठंडे हो जाते हैं। इन ढलानों के निकट की वायु भी ठंडी हो जाती है और उसका घनत्व बढ़ जाता है। अतः यह वायु नीचे की ओर खिसकती है और नीचे घाटी तल पर टिक जाती है। यह ठंडी और भारी वायु घाटी की अपेक्षाकृत गर्म वायु को ऊपर की ओर धकेल देती है और इस प्रकार ताप की विलोमता की स्थिति पैदा हो जाती है। कभी–कभी घाटी में वायु का तापमान हिमांक बिंदु से भी नीचे गिर जाता है, जबकि पर्वतीय ढलानों पर तापमान अपेक्षाकृत ऊँचा होता है। यही कारण है कि जापान के सुवा बेसिन में शहतूत के वृक्ष और हिमाचल प्रदेश में सेब के बागान पर्वतों के निचले ढलानों पर इसलिए नहीं लगाये जाते कि उनकी शीत ऋतु में पाले से बचाया जा सके। यदि आप कभी पर्वतीय नगर गये हों तो आपने अवश्य देखा होगा कि लोगों के यात्री निवास और धनी लोगों के मकान पर्वतों के ऊपरी ढलानों पर बने होते हैं।

- तापमान सामान्यतया ऊँचाई के साथ–साथ घटता है।
- सामान्य ह्रास दर में प्रति 165 मीटर ऊपर जाने पर 1^0 से. तापमान गिरता है।
- एक ऐसी घटना जिसमें ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ थोड़े समय के लिए तापमान में स्थानीय परिस्थितियों के कारण वृद्धि होती है। ताप की विलोमता कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 10.4

1. सही विकल्प चुनिये और उस पर चिन्ह (√) लगाइए:

   (क) तापमान कम होता जाता है –

   (i) ऊँचाई बढ़ने के साथ (ii) गहराई बढ़ने के साथ

   (iii) भार बढ़ने के साथ (iv) ऊँचाई तथा गहराई दोनों के बढ़ने के साथ

   (ख) तापमान की सामान्य ह्रास दर 1^0 से. प्रति –

   (i) 561 मीटर है (ii) 1000 मीटर है

टिप्पणी

(iii) 651 मीटर है (iv) 165 मीटर है।

(ग) वायुमंडल की एक ऐसी स्थिति जिसमें ऊँचाई बढ़ने के साथ तापमान भी बढ़ता है–

(i) ताप असंगति (ii) ताप विलोमता

(iii) तापमान की सामान्य ह्रास दर (iv) सूर्यातप

2. निम्नलिखित कथनों में से सही कथनों पर चिन्ह (√) लगाइये और गलत पर (x) का चिन्ह लगाइए।

(क) ठंडी वायु हल्की होती है।

(ख) ठंडी वायु अधिक घनत्व वाली होती है।

(ग) साफ आकाश, शुष्क वायु और पवनों की अनुपस्थिति के कारण पार्थिव विकिरण तेजी से होता है, जिससे ताप की विलोमता की स्थिति पैदा होती है।

(घ) ताप की विलोमता की स्थिति मैदानों में अधिक पाई जाती है।

(ड.) हिमाचल प्रदेश में सेब के बागान पर्वतों के निचले ढलानों पर नहीं लगाए जाते।

(छ) ताप की विलोमता स्थानीय एवं थोड़े समय के लिए होता है।

आपने क्या सीखा

पृथ्वी पर ऊर्जा का प्राथमिक स्रोत सूर्य है। सूर्य से ऊर्जा लघु तरंगों द्वारा धरातल पर पहुंचती है उसे सूर्यातप कहते हैं। किसी स्थान पर प्राप्त होने वाली सूर्यातप की मात्रा प्रभावित होती हैः आपतन कोण, दिन की अवधि तथा वायुमंडल की पारदर्शकता। वायुमंडल को गर्म एवं ठंडा करने में चालन, संवहन, विकिरण और अभिवहन का योगदान होता है। विकिरण की प्रधानता अन्य तीनों में रहती है। पार्थिव विकिरण वह ऊष्मा है जो पृथ्वी द्वारा लौटाई जाती है। धरातल पर सूर्यातप और पार्थिव विकिरण के बीच पाये जाने वाले संतुलन को ऊष्मा बजट कहते हैं। ओजोन परत के ह्रास होने और वायुमंडल में कार्बन–डाई–ऑक्साइड की मात्रा बढ़ने के कारण सारे संसार के तापमान बढ़ने को भूमंडलीय तापन कहा जाता है।

टिप्पणी

तापमान ऊष्मा की तीव्रता का माप होता है। तापमान के क्षैतिज वितरण को प्रभावित करने वाले कारक हैं – अक्षांश, जल और थल की विषमता, उच्चावच, महासागर धारायें, पवनें, वनस्पति आवरण, मिट्टी की प्रकृति और भूमि का ढाल तथा अभिमुखता। मानचित्र पर तापमान का क्षैतिज वितरण समताप रेखाओं द्वारा दर्शाया जाता है। समताप रेखायें मानचित्र पर खींची गयी वे काल्पनिक रेखायें हैं जो समुद्र तल पर उतारे गये समान तापमान वाले स्थानों को मिलाती हैं। तापमान ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ घटता है। तापमान का यह घटना 165 मीटर की ऊँचाई पर 1^0 से. है। इसे तापमान की सामान्य ह्रास दर कहते हें। जब ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान भी बढ़ता है तो इस स्थिति को ताप विलोमता कहा जाता है। यह सामान्यता स्थानीय और थोड़े समय के लिए होता है।

पाठांत प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में दीजिए :
   - (क) सामान्य ह्रास दर का क्या अर्थ है ?
   - (ख) सूर्यातप क्या है ?
   - (ग) पार्थिव विकिरण का क्या अर्थ है ?
   - (घ) ऊँचाई बढ़ने के साथ तापमान किस दर से घटता है ?
2. निम्नलिखित पर 50 शब्दों में लिखिए :
   - (क) जनवरी में तापमान का संसार में वितरण
   - (ख) ऊष्मा बजट
   - (ग) जनवरी और जुलाई के समताप मानचित्रों की तुलना
   - (घ) अक्षांशीय ऊष्मासंतुलन
3. तापमान के क्षैतिज वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन करिये।
4. निम्नलिखित को संसार के रेखा मानचित्र पर दर्शाइये :
   - (क) जुलाई मास की 30 डिग्री से. समताप रेखा
   - (ख) वर्खोयांस्क
   - (ग) सहारा मरूस्थल
   - (घ) बोर्नियो द्वीप

टिप्पणी

5. विभिन्न अक्षांश वृत्तों पर प्राप्त सूर्यातप की मात्रा में अंतर क्यों पाया जाता है ?

6. ऊष्मा बजट को आरेख बनाकर स्पष्ट कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

10.1

1. (क) विकिरण (ख) दो अरबवां (ग) अभिवहन (i) आपतन(ii) दिन की अवधि, और (iii) वायुमंडल की पारदर्शकता।

2. (क) (i); (ख) (i); (ग) (ii)

10.2

1. (क) कृपया अनुच्छेद 10.2 देखें (ख) कृपया अनुच्छेद 10.2 (क) देखें (ग) कृपया अनुच्छेद 10.3 देखें

2. (क) 51% (ख) 6% (ग) ऊष्ण कटिबंध (घ) ध्रुवीय प्रदेश

10.3

1. (क) (i); (ख) (i); (ग) (iii)

2. (क) अभिवहन (ख) समताप रेखायें (ग) वार्षिक ताप परिसर

10.4

1. (क) (i); (ख) (i); (ग) (ii)

2. (क) गलत (ख) सहीं (ग) गलत (घ) गलत (ड.) सहीं (च) सही (छ) सही।

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. (क) ऊँचाई के अनुसार तापमान घटने की सामान्य ह्रास दर।

   (ख) सौर विकिरण का पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाला भाग।

   (ग) पृथ्वी की सतह से ऊष्मा का विकिरण

   (घ) प्रति 165 मीटर ऊचाई पर 1 डिग्री से.।

2. (क) कृपया अनुच्छेद 10.4 देखें

   (ख) कृपया अनुच्छेद 10.2 (क) देखें

टिप्पणी

(ग) कृपया अनुच्छेद 10.4 देखें

(घ) कृपया अनुच्छेद 10.2 देखें।

3. कृपया अनुच्छेद 10.4 देखें।
4. कृपया पाठ में दिये मानचित्र देखिये।
5. कृपया अनुच्छेद 10.1 (क) (i) देखिये।
6. कृपया चित्र 10.2 और अनुच्छेद 10.2 देखिये।

11

वायुमंडलीय दाब और पवनें

हम सामान्यतया यह नहीं सोचते कि वायु में बहुत भार होता है। वास्तव में वायु में भार होता है और इसलिये यह दाब डालती है। साईकिल की एक खाली ट्यूब लीजिये और उसका वजन तोलिये। अब इस ट्यूब में हवा भरिये और इसका भार मालूम करिये। आप पायेंगे कि वायु से भरी ट्यूब का वजन खाली ट्यूब के वजन से अधिक है। यदि आप इस ट्यूब में और हवा भरें तो एक स्थिति ऐसी आती है जब ट्यूब फट जायेगी। ट्यूब में वायुदाब के बढ़ जाने के कारण वह फट जाती है। इसी प्रकार हमारे चारों ओर वायु दाब डालती है। लेकिन हम इस दाब को अनुभव नहीं करते; क्योंकि जो वायु हमारे शरीर के अन्दर होती है वह भी बाहर की ओर उतना ही दाब डालती है। वायुमंडलीय दाब हमारे लिये बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका सीधा संबंध पवनों से है और यह किसी स्थान की मौसम संबंधी दशाओं का निर्धारण करती है। प्रस्तुत पाठ में आप वायुमंडलीय दाब, उसका संसार में वितरण, पवनें और पवनों के प्रकार के बारे में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- कारण समझा सकेंगे कि ऊँचाई बढ़ने के साथ वायुदाब कम क्यों होता है;
- बहुत ऊँचाई पर निम्न वायुदाब का दैनिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को उदाहरण देकर समझा सकेंगे;
- समदाब रेखाओं के बीच की दूरी और वायुदाब प्रवणता में संबंध स्पष्ट कर सकेंगे;
- विषुवतीय निम्नदाब और ध्रुवीय उच्चदाब तथा तापमान के बीच संबंध स्थापित कर सकेंगे;
- उपोष्ण उच्च दाब और अधोध्रुवीय निम्नदाब के होने के कारण स्पष्ट कर सकेंगे;
- जनवरी और जुलाई के समदाब रेखीय मानचित्रों द्वारा संसार में वायुमंडलीय दाब का विवरण समझा सकेंगे;

टिप्पणी

- वायुदाब प्रवणता और पवन गति के बीच संबंध स्थापित कर सकेंगे;
- दोनों गोलार्धों में पवनों की दिशा पर पड़ने वाले कोरियालिस बल का प्रभाव स्पष्ट कर सकेंगे;
- वायुदाब पेटियों और भूमंडलीय पवनों को दर्शाने वाला आरेख बना सकेंगे;
- (क) भूमंडलीय और मानसून पवन, (ख) स्थल और समुद्र समीर, (ग) घाटी और पर्वत समीर तथा (घ) चक्रवात और प्रति चक्रवात में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे;
- प्रमुख स्थानीय पवनों की विशेषताएं बता सकेंगे।

11.1 वायुमंडलीय दाब की माप

वायुमंडल पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण उसके चारों ओर लिपटा रहता है। वायु का एक स्तम्भ जो धरातल पर अपना भार डालता है उसे **वायुदाब या वायुमंडलीय दाब** कहते हैं। वायुमंडलीय दाब को **वायुदाब मापी यंत्र (बेरोमीटर)** से मापा जाता है। आजकल वायुमंडलीय दाब को मापने के लिये सामान्यतया फोंटिंग एवं अनीरोइड बेरोमीटर का प्रयोग किया जाता है।

वायुमंडलीय दाब को प्रति इकाई क्षेत्रफल पर पड़ने वाले बल के रूप में मापा जाता है। वायुदाब के मापने की इकाई को **मिलीबार** कहते हैं। इसका छोटा रूप 'mb' या 'मिबा' है। एक मिलीबार प्रति वर्ग सेंटीमीटर क्षेत्र पर पड़ने वाले लगभग एक ग्राम बल के बराबर होता है। 1000 मिलीबार वायुदाब का भार समुद्र तल पर 1.053 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर होता है। यह भार 76 सेंटीमीटर ऊँचे पारे के स्तम्भ के बराबर होता है। वायुदाब का अंतर्राष्ट्रीय मानक इकाई **''पास्कल''** है जो प्रतिवर्गमीटर एक न्यूटन बल के बराबर होती है। व्यावहारिक तौर पर वायुदाब किलोपास्कल में अभिव्यक्त किया जाता है। (एक किलोपास्कल 1000 पास्कल के बराबर होता है)।

समुद्र तल पर औसत वायुमंडलीय दाब 1013.25 मिलीबार के बराबर होता है। परन्तु किसी स्थान पर किसी समय विशेष में वायुदाब 950 मिलीबार से लेकर 1050 मिलीबार तक पाया जाता है।

- एक निश्चित स्थान एवं निश्चित समय पर वायु के एक स्तम्भ का भार वायुदाब कहलाता है।
- वायुमंडलीय दाब को वायुदाब मापी यंत्र या बेरोमीटर में मापते हैं।
- वायुमंडलीय दाब की माप की इकाई मिलीबार (किलोपास्कल) है।
- एक मिलीबार प्रति वर्ग सेंटीमीटर क्षेत्र पर पड़ने वाले लगभग एक ग्राम बल के बराबर होता है।

टिप्पणी

11.2 वायुमंडलीय दाब का वितरण

वायुमंडलीय दाब का धरातल पर वितरण सब जगह समान नहीं है। इसमें क्षैतिज एवं ऊर्ध्वाधर दोनों प्रकार के वितरण में भिन्नता मिलती है।

(क) वायुदाब का ऊर्ध्वाधर वितरण

आप जानते हैं कि वायु विभिन्न गैसों का मिश्रण है। इसे अधिकाधिक दबाकर घनीभूत किया जा सकता है। दबी हुई या घनीभूत वायु का घनत्व अधिक होता है। वायु का घनत्व जितना अधिक होगा उसका दाब भी उतना अधिक होगा। इसके विपरीत कम घनत्व वाली वायु का दाब भी कम होगा। वायु के स्तम्भ में ऊपर की वायु नीचे वाली वायु पर दाब डालती है। इस कारण नीचे की वायु ऊपर की वायु की अपेक्षा अधिक घनी अर्थात अधिक घनत्व वाली हो जाती है। इसके परिणाम स्वरूप वायुमंडल की निचली परतें अधिक घनत्व वाली हो जाती है और इसलिये वे अधिक दाब डालती हैं। इसके विपरीत वायुमंडल की ऊपरी परतें कम दबी हुई हैं। अतः उनका घनत्व कम होता है और वे कम दाब डालती हैं। वायुमंडलीय दाब का स्तम्भीय वितरण वायुदाब का ऊर्ध्वाधर वितरण कहलाता है। वायुदाब, ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ कम होता जाता है, लेकिन यह एक ही दर से हमेशा कम नहीं होता है। वायुमंडल के घने संघटक समुद्र तल के निकट पाये जाते हैं। एक निश्चित समय पर एक निश्चित स्थान का वायुदाब वायु तापमान, उसमें उपस्थित जलवाष्प की मात्रा और पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल पर निर्भर करता है। ये कारक वायुमंडल की विभिन्न ऊँचाइयों पर बदलते रहते हैं, अतः ऊँचाई बढ़ने के साथ वायुदाब में कमी आने की दर भी बदलती रहती है। सामान्यतः वायुदाब प्रत्येक 300 मीटर की ऊँचाई पर 34 मिलीबार कम हो जाता है (चित्र 11.1)। कम वायुदाब के प्रभाव का अनुभव मैदानों में रहने वाले लोगों की अपेक्षा पर्वतीय एवं पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले लोग अधिक करते हैं। ऊँचे पर्वतीय भागों में चावल के पकने में अधिक समय लगता है; क्योंकि वहाँ निम्न वायुदाब के कारण पानी का क्वथनांक (उबलने का बिन्दु) घट जाता है। वहाँ पहाड़ों पर चढ़ने वाले अन्य क्षेत्रों से आये बहुत से लोगों को सांस लेने में तकलीफ होने लगती है। कुछ लोग बेहोश हो जाते हैं और नाक से खून भी आने लगता है। निम्न वायुदाब में वायु विरल हो जाती है और उसमें ऑक्सीजन की मात्रा भी कम हो जाती है।

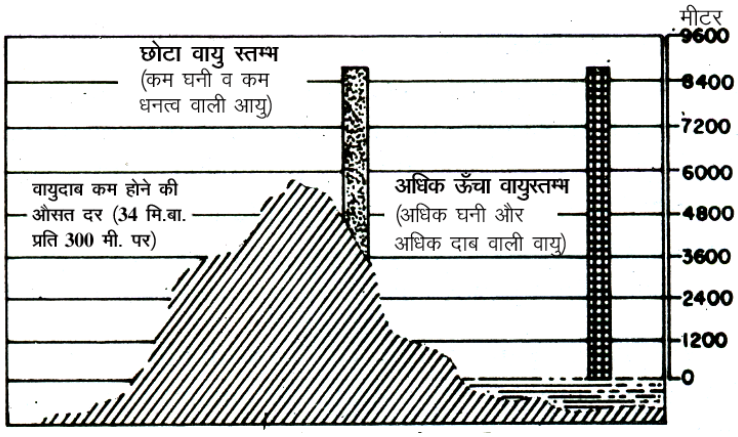

चित्र 11.1 वायुदाब का ऊर्ध्वाधार वितरण

टिप्पणी

(ख) वायुदाब का क्षैतिज वितरण

वायुमंडलीय दाब का सारे संसार में वितरण क्षैतिज वितरण कहलाता है। इसे मानचित्र में समदाब रेखाओं द्वारा दर्शाया जाता है। वे रेखा जो सभी समान वायुदाब वाले स्थानों को एक साथ जोड़ती है, **समदाब रेखा** कहलाती है। समदाब रेखाएं उच्चावच मानचित्र पर समोच्च रेखाओं जैसी होती हैं। समदाब रेखाओं के बीच की दूरी वायुदाब में आने वाले परिवर्तन की दर तथा उसकी दिशा को बताती है। वायुदाब की दर में इस परिवर्तन को वायुदाब की प्रवणता कहते हैं। वायुदाब की प्रवणता दो स्थानों के वायुदाब में भिन्नता तथा उनके बीच क्षैतिज दूरी का अनुपात होता है। समदाब रेखायें जब पास–पास होती हैं तो वे वायुदाब की तीव्र प्रवणता को बताती हैं और जब वे दूर–दूर होती है तो वायुदाब की मंद प्रवणता का बोध कराती हैं। (चित्र 11.5)

वायुदाब का क्षैतिज वितरण सारे संसार में समान नहीं है। एक ऋतु से दूसरी ऋतु में एक ही स्थान पर भी वायुदाब बदल जाता है। इसमें बदलाव एक स्थान से दूसरे स्थान पर एक छोटी दूरी के बाद भी देखा जाता है। वायुदाब के क्षैतिज वितरण में परिवर्तन के लिये उत्तरदायी प्रमुख कारक हैं– (i) वायु का तापमान, (ii) पृथ्वी का घूर्णन और (iii) वायु में उपस्थित जलवाष्प की मात्रा।

(i) वायु का तापमान : हम पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं कि पृथ्वी पर तापमान का वितरण सब जगह एक समान नहीं है; क्योंकि सूर्यातप हर स्थान पर समान रूप से नहीं मिलता, साथ ही स्थल भाग और जल भाग के गर्म और ठंडा होने की दर अलग–अलग है। सामान्यतया तापमान और वायुदाब में उल्टा संबंध है। वायु का तापमान जितना अधिक होगा उतना ही उसका वायुदाब कम होगा। हर गैस का यह नियम है कि जब उसे गर्म किया जाता है तो उसका घनत्व कम हो जाता है और वह फैलती है। इस प्रक्रिया में वायु ऊपर उठती है और धरातल पर उसका दाब कम हो जाता है। विषुवतीय प्रदेशों में निम्नवायुदाब पट्टी पायी जाती है जिसे विषुवतीय निम्नवायुदाब या डोलड्रम कहा जाता है। यही कारण है कि विषुवतीय प्रदेशों में वायुदाब निम्न होता है और ध्रुवीय प्रदेशों में वायुदाब उच्च होता है। विषुवतीय प्रदेशों में निम्न वायुदाब का कारण गर्म वायु का ऊपर उठना, धरातल के निकट वायु का विरल हो जाना और थोड़े समय के लिये खाली जगह का बन जाना है। ध्रुवीय प्रदेशों में ठंडी वायु घनी होती है। अतः यह नीचे उतरती हैं जिससे वायुदाब बढ़ जाता है। इस तथ्य के आधार पर हम कह सकते हैं कि विषुवत वृत्त से ध्रुवों की ओर तापमान घटने के साथ–साथ वायुदाब में शनैःशनैः वृद्धि होनी चाहिए। परंतु विभिन्न स्थानों पर लिए गये वायुदाब के पठन यह सिद्ध करते हैं कि विषुवत वृत्त से ध्रुवों की ओर जाने पर अक्षांशों के अनुसार वायुदाब में नियमित रूप से वृद्धि नहीं होती। इसके विपरीत संसार के उपोष्ण प्रदेशों में उच्च वायुदाब के क्षेत्र और अधो ध्रुवीय प्रदेशों में निम्न वायुदाब के क्षेत्र पाये जाते हैं।

(ii) पृथ्वी का घूर्णन : पृथ्वी के घूर्णन से केन्द्रविमुख बल पैदा होता है। इसके परिणाम

टिप्पणी

स्वरूप वायु अपने मूल स्थान से हट जाती है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अधोध्रुवी प्रदेशों का निम्न वायुदाब और उपोष्ण प्रदेशों का उच्च वायुदाब का निर्माण मुख्यतया पृथ्वी के घूर्णन के कारण हुआ है। वायु के अभिसरण क्षेत्र (जहां विभिन्न दिशाओं से आकर वायु मिलती है) में निम्न वायुदाब पाया जाता है और वायु के अपसरण क्षेत्र (जहां से वायु विभिन्न दशाओं को जाती है) में उच्च वायुदाब पाया जाता है (चित्र 11.7)।

(iii) वायु में उपस्थित जलवाष्प की मात्रा : वायु जिसमें जलवाष्प की मात्रा अधिक होती है उसका दाब कम होता है और जिस वायु में जलवाष्प की मात्रा कम होती है उसका दाब अधिक होता है। सर्दी में महाद्वीप अपेक्षाकृत ठंड़े होते हैं तथा उच्च वायुदाब केन्द्र के रूप में विकसित होते हैं। गर्मी में ये समुद्र की तुलना में गर्म हो जाते हैं तथा यहाँ पर निम्न वायुदाब क्षेत्र कायम हो जाता है। इसके विपरीत समुद्र पर सर्दी में निम्नदाब तथा गर्मी में उच्च दाब होता है।

- वह रेखा जो सभी समान वायुदाब वाले स्थानों को एक साथ जोड़ती है, समदाब रेखा कहलाती है।
- वायुदाब की प्रवणता दो स्थानों के बीच वायुदाब की भिन्नता और उन स्थानों के बीच क्षैतिज दूरी का अनुपात होता हैं
- ऊँचाई बढ़ने के साथ वायुदाब में औसतन कमी की दर प्रति 300 मीटर ऊँचाई पर 34 मिलीबार है।

पाठगत प्रश्न 11.1

1. कोष्ठक में दिये शब्दों में से उपयुक्त शब्द द्वारा रिक्त स्थान भरियेः

   (क) वायुमंडलीय दाब मापा जाता है प्रति इकाई _____ पर पड़ने वाला बल। (क्षेत्र, मीटर)

   (ख) वायुदाब के मापने की नई इकाई का नाम _____ है। (मिलीबार, हैक्टोपास्कल)

   (ग) एक समदाब रेखा मिलाती है समान _____ वाले स्थानों को। (तापमान, वायुदाब)

   (घ) संसार में वायुदाब का वितरण _____ है। (समान, असमान)

2. वायुदाब के क्षैतिज वितरण को प्रभावित करने वाले तीन कारकों के नाम बताइयेः

   (क) _____ (ख) _____ (ग) _____

टिप्पणी

3. वायुदाब को मापने में प्रयोग किये जाने वाले दो यंत्रों के नाम बताइये:

(क) _____ (ख) _____

4. समुद्रतल पर औसत वायुमंडलीय दाब कितना है?

_____

5. प्रत्येक के लिये सर्वोत्तम विकल्प चुनिये और उस पर चिन्ह (√) लगाइये।

(क) 1000 मिलीबार वायुदाब पारे के स्तम्भ के भार के बराबर होता है, जिसकी ऊँचाई है–

(i) 65 से.मी., (ii) 70 से.मी., (iii) 76 से.मी., (iv) 80 से.मी.

(ख) जिन क्षेत्रों में वायु विभिन्न दिशाओं से आकर मिलती है वहाँ विकसित होता है–

(i) उच्च दाब, (ii) निम्न दाब, (iii) दोनों उच्च और निम्न दाब, (iv) कोई दाब नहीं

(ग) कम जलवाष्प की मात्रा वाली वायु का दाब होता है–

(i) अधिक, (ii) कम, (iii) मध्यम, (iv) कुछ नहीं

11.3 वायुदाब की पेटियाँ

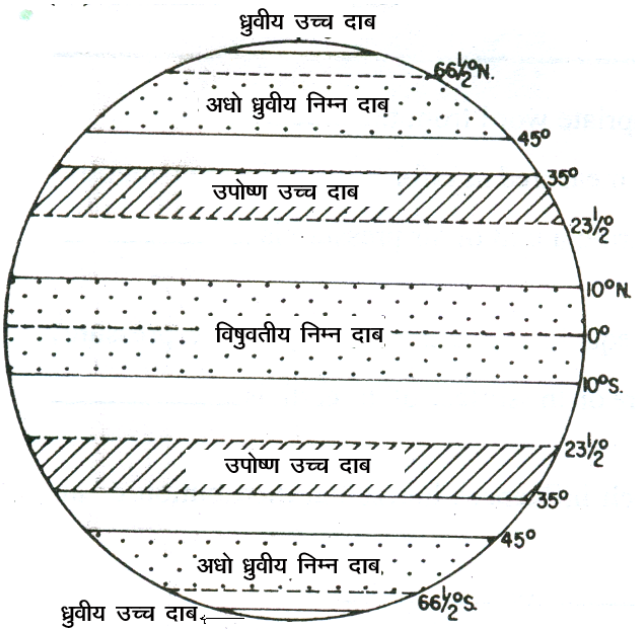

चित्र 11.2 वायुदाब की पेटियाँ

धरातल पर वायुदाब का क्षैतिज वितरण मुख्य–मुख्य अक्षांश वृत्तों के साथ पट्टियों के

रूप में पाया जाता है। इन्हीं को **वायुदाब पेटियाँ** कहा जाता है। वायुदाब का पेटियों के रूप में वितरण केवल सैद्धान्तिक नमूना है। वास्तव में वायुदाब की ऐसी पेटियाँ धरातल पर हमेशा इस प्रकार नहीं मिलती। इस बात की चर्चा हम आगे करेंगे कि वास्तविक वायुदाब की पेटियां आदर्श वायुदाब पेटियों से भिन्न क्यों हैं।

संसार में पाई जाने वाली वायुदाब की आदर्श चार पेटियाँ हैं (i) विषुवतीय निम्न वायुदाब पेटी, (ii) उपोष्ण उच्च दाब पेटी, (iii) अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटी और (iv) ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटी (चित्र 11.2)।

(i) विषुवतीय निम्न वायुदाब पेटी : विषुवत वृत्त पर सूर्य की किरणें लगभग वर्षभर लम्बवत् पड़ती हैं। इस कारण विषुवतीय क्षेत्रों में वायु गर्म होकर ऊपर उठ जाती है, जिससे यहां निम्न वायुदाब का क्षेत्र बन जाता है। इस वायुदाब की पेटी का विस्तार 10^0 उत्तरी और 10^0 दक्षिणी अक्षांश के बीच है। (चित्र 11.2)। बहुत अधिक गर्मी पड़ने के कारण यहां वायु की गति संवहन धाराओं के रूप में मुख्यतया ऊर्ध्वाधर होती है और क्षैतिज गति प्रायः नहीं होती। इसीलिये इन पेटियों को पवनों के अभाव में **शान्त पेटियाँ** (डोलड्रम) भी कहा जाता है। ये पेटियाँ पवनों के अभिसरण क्षेत्र हैं; क्योंकि उपोष्ण उच्च दाब से पवनें यहां आकर मिलती हैं (चित्र 11.7)। इस पेटी को **अंतः उष्ण कटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र** (आई. टी.सी. जेड.) भी कहते हैं।

(ii) उपोष्ण उच्चदाब पेटी : उपोष्ण उच्च दाब पेटी का दोनों गोलार्धों में विस्तार अयन रेखाओं (कर्क और मकर वृत्त) से 35^0 अक्षाशों तक है। उत्तरी गोलार्ध में इस पेटी का नाम उत्तरी उपोष्ण उच्च दाब पेटी है और दक्षिणी गोलार्ध में इसे दक्षिणी उपोष्ण उच्च दाब पेटी कहा जाता है (चित्र 11.2)। उपोष्ण उच्च दाब पेटी के बनने का कारण यह है कि विषुवतीय क्षेत्रों से उठी गर्म वायु पृथ्वी के घूर्णन से ध्रुवों की ओर बढ़ने लगती है। उपोष्ण क्षेत्र में आकर वह ठंडी और भारी हो जाती है, जिससे वह नीचे उतर कर इकट्ठी हो जाती है। परिणाम स्वरूप यहाँ उच्च वायुदाब क्षेत्र बन जाता है। इस क्षेत्र में भी परिवर्तनशील हल्की पवनों के साथ शांत की दशायें विद्यमान रहती हैं। प्राचीन काल में घोड़ों से लदे जहाज जब इस पेटी से गुजरते थे तो यहाँ शान्त दशाओं के कारण जहाज का आगे बढ़ना कठिन होता था। अतः घोड़ों को समुद्र में फेंककर जहाज को हलका कर लिया जाता था। इसी तथ्य के कारण इस पेटी को **घोड़े का अक्षांश** (अश्व अक्षांश) भी कहा जाता है। ये पेटियाँ पवनों के अपसरण क्षेत्र भी हैं; क्योंकि यहाँ से पवनें विषुवतीय और अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटियों की ओर जाती है (चित्र 11.7)।

(iii) अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटी : अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटी का उत्तरी गोलार्ध में विस्तार 45^0 उत्तर अक्षांश से आर्कटिक वृत्त तक है और दक्षिणी गोलार्ध में 45^0 दक्षिण अक्षांश से एन्टार्कटिक वृत्त तक है। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्धों में इन्हें क्रमशः **उत्तरी अधोध्रुवीय निम्नदाब पेटी और दक्षिणी अधोध्रुवीय निम्नदाब पेटी** कहते हैं (चित्र 11.2)। इन पेटियों में ध्रुवों और उपोष्ण उच्च दाब

टिप्पणी

क्षेत्रों में पवनें आकर मिलती हैं और ऊपर उठती हैं। इन आने वाली पवनों के तापमान और आर्द्रता में बहुत अन्तर होता है। इस कारण यहाँ चक्रवात या निम्न वायुदाब की दशायें बनती हैं। निम्न वायुदाब के इस अभिसरण क्षेत्र को **ध्रुवीय वाताग्र** भी कहते हैं (चित्र 11.7)।

(iv) ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटी : ध्रुवीय क्षेत्रों में सूर्य कभी सिर के ऊपर नहीं होता। यहाँ सूर्य की किरणों का आपतन कोण न्यूनतम होता है। इस कारण यहां सबसे कम तापमान पाये जाते हैं। निम्न तापमान होने के कारण वायु सिकुड़ती है और उसका घनत्व बढ़ जाता है, जिससे यहां उच्च वायुदाब का क्षेत्र बनता है। उत्तरी गोलार्ध में इसे **उत्तर ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटी** और दक्षिणी गोलार्ध में दक्षिण **ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटी** कहा जाता है (चित्र 11.2)। इन पेटियों से पवनें अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटियों की ओर चलती हैं (चित्र 11.7)।

वायुदाब पेटियों की प्रस्तुत व्यवस्था एक सामान्य तस्वीर प्रदर्शित करती है। वास्तव में वायुदाब पेटियों की यह स्थिति स्थायी नहीं है। सूर्य की आभासी गति कर्क वृत्त और मकर वृत्त की ओर होने के परिणाम स्वरूप ये पेटियाँ जुलाई में उत्तर की ओर, और जनवरी में दक्षिण की ओर खिसकती रहती हैं। **तापीय विषुवत रेखा** जो सर्वाधिक तापमान की पेटी है, वह भी विषुवत वृत्त से उत्तर और दक्षिण की ओर खिसकती रहती है। तापीय विषुवत रेखा के ग्रीष्म ऋतु में उत्तर की ओर और शीत ऋतु में दक्षिण की ओर खिसकने के परिणाम स्वरूप सभी वायुदाब पेटियाँ भी अपनी औसत स्थिति से थोड़ा उत्तर या थोड़ा दक्षिण की ओर खिसकती रहती हैं।

- उपोष्ण उच्च वायुदाब पेटी को 'घोड़े का अक्षांश' (अश्व अक्षांश) भी कहा जाता है।
- उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में वायु के नीचे उतरने और उसके इकट्ठा होने के कारण यहां उच्च वायुदाब बनता हैं।
- अधोध्रुवीय क्षेत्रों में ध्रुवीय क्षेत्रों और उपोष्ण क्षेत्रों से आने वाली पवनों के मिलने से यहाँ चक्रवातीय दशायें विकसित होती हैं।
- उच्च वायुदाब पेटियाँ शुष्क हैं और निम्न वायुदाब पेटियाँ नम।
- सूर्य की आभासी गति उत्तर और दक्षिण की ओर होने के कारण तापीय विषुवत रेखा भी उत्तर और दक्षिण की ओर खिसकती रहती है।
- तापीय विषुवत रेखा के खिसकने के कारण वायुदाब पेटियाँ भी उत्तर और दक्षिण की ओर खिसकती रहती हैं।

11.4 ऋतुओं के अनुसार वायुदाब का वितरण

धरातल पर वायुदाब का वितरण एक स्थान से दूसरे स्थान और एक ऋतु से दूसरी ऋतु में बदलता रहता है। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण प्रभाव मौसम और जलवायु पर पड़ता है।

टिप्पणी

इसीलिये हम वायुदाब के क्षैतिज वितरण का अध्ययन समदाब रेखी मानचित्रों द्वारा करते हैं। समदाब रेखी मानचित्र तैयार करते समय सभी स्थानों का वायुदाब समुद्र तल पर उतारा जाता है। ऐसा इसलिये किया जाता है कि वायुदाब के क्षैतिज वितरण में ऊँचाई जो वायुदाब को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है, निकाल देते हैं।

(i) जनवरी की वायुदाब दशायें : जनवरी में सूर्य के दक्षिण की ओर खिसकने के साथ, विषुवत्तीय निम्न वायुदाब की पेटी भी अपनी औसत स्थिति से कुछ दक्षिण की ओर खिसक जाती है (चित्र 11.3)। इस समय सबसे कम वायुदाब के क्षेत्र दक्षिण अमरीका, दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि स्थल भाग जलीय भाग की अपेक्षा जल्दी और ज्यादा गर्म हो जाता है। उपोष्ण उच्च वायुदाब के क्षेत्र दक्षिणी गोलार्ध के महासागरों पर पाये जाते हैं। यहाँ उच्च वायु दाब की पेटी, अपेक्षाकृत अधिक गर्म महाद्वीपों के बीच आ जाने के कारण, कई छोटे–छोटे भागों में बंट जाती है। महासागरों के पूर्वी भाग जहाँ ठंडी धारायें बहती हैं, उच्च वायुदाब क्षेत्र अधिक विकसित हैं।

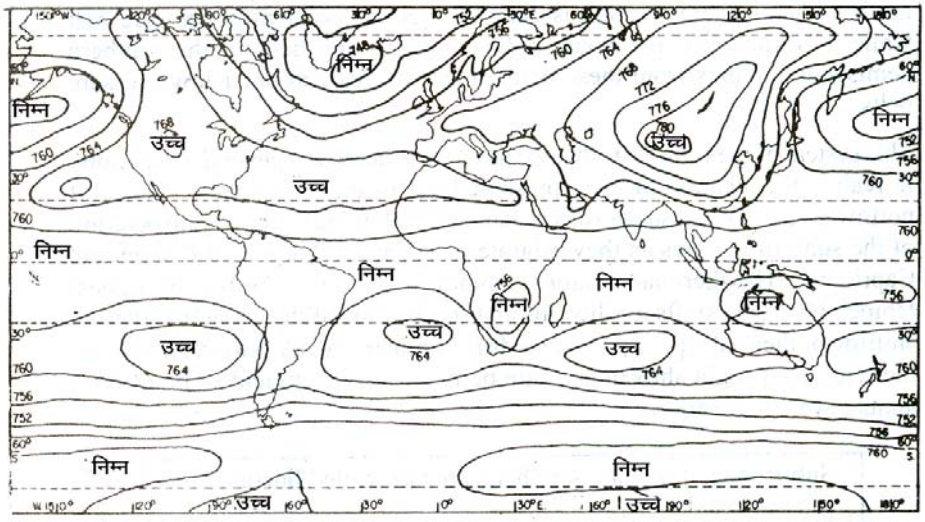

चित्र 11.3 वायुदाब का वितरण (जनवरी)

उत्तरी गोलार्ध के महाद्वीपों में उपोष्ण अक्षांशों पर उच्च वायुदाब के क्षेत्र मिलते हैं। यूरेशिया के आन्तरिक भाग में बहुत ही विकसित उच्च वायुदाब का क्षेत्र पाया जाता है। इसके बनने का प्रमुख कारण है आसपास के समुद्रों की अपेक्षा महाद्वीप का शीघ्र ठंडा हो जाना जिससे यहाँ शीत ऋतु में अति निम्न तापमान पाये जाते हैं।

दक्षिणी गोलार्ध में अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब का क्षेत्र वास्तविक निम्न दाब की पूरी पेटी है जो पृथ्वी को घेरे हुए है। यह छोटे–छोटे टुकड़ों में नहीं बटी है; क्योंकि दक्षिणी गोलार्ध के इन अक्षांशों में महाद्वीपों का अभाव है। उत्तरी

गोलार्ध में अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब के छोटे–छोटे दो क्षेत्र हैं। एक है उत्तरी अटलांटिक महासागर का आइसलैंड वाला निम्न वायुदाब क्षेत्र और दूसरा उत्तरी प्रशान्त महासागर का अल्यूशियन निम्न वायुदाब क्षेत्र।

(ii) जुलाई की वायुदाब दशायें : जुलाई में सूर्य के उत्तर की ओर खिसकने के साथ विषुवतीय निम्न वायुदाब की पेटी भी अपनी औसत स्थिति के कुछ उत्तर की ओर खिसक जाती है। अन्य वायुदाब पेटियाँ भी जुलाई में उत्तर की ओर थोड़ा–थोड़ा खिसक जाती हैं (चित्र 11.4)।

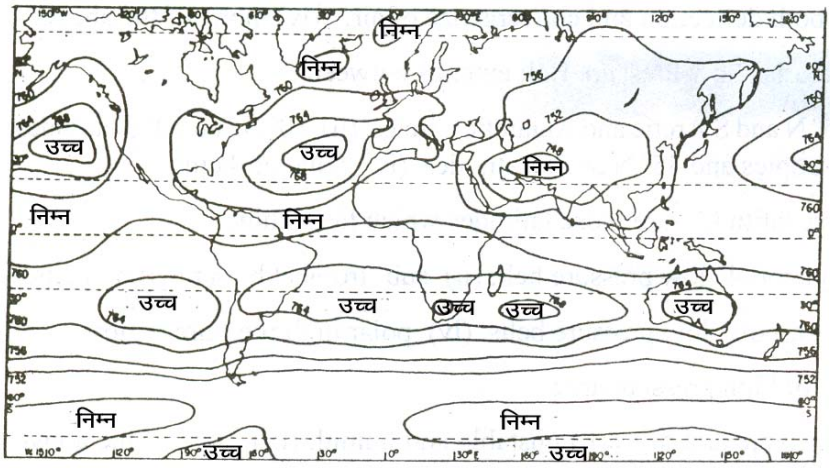

चित्र 11.4 वायुदाब का वितरण (जुलाई)

आईसलैंड निम्न वायुदाब क्षेत्र और अल्यूशियन निम्न वायुदाब क्षेत्र महासागरों पर से विलुप्त हो जाते हैं। परन्तु उन महाद्वीपों पर जहां शीत ऋतु में काफी विकसित उच्च वायुदाब क्षेत्र थे, वहां अब बहुत बड़े भूभाग पर निम्न वायुदाब क्षेत्र विकसित हो जाता है। एशिया में एक तीव्र निम्न वायुदाब का क्षेत्र पाया जाता है।

उत्तरी गोलार्ध के अटलांटिक और प्रशान्त महासागरों में उपोष्ण उच्च वायुदाब विकसित हो जाता है। दक्षिणी गोलार्ध में उपोष्ण उच्च वायुदाब का क्षेत्र लगातार है।

दक्षिणी गोलार्ध में इस समय अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब की पेटी लगातार है परन्तु उत्तरी गोलार्ध में यह महासागरीय क्षीण निम्न वायुदाब का छोटा सा क्षेत्र है।

पाठगत प्रश्न 11.2

1. कोष्ठक में दिये शब्दों में से उपयुक्त शब्द द्वारा रिक्त स्थान भरिये–

   (क) विषुवतीय निम्न वायुदाब की पेटी _____ क्षेत्र है।

   (अभिसरण, अपसरण, घोड़े का अक्षांश)

टिप्पणी

(ख) अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब की पेटी का संबंध _____ से है।
(अपसरण, डोलड्रम, चक्रवात)

2. निम्नलिखित को उपयुक्त वाक्यांशों से पूरा कीजिएः

(क) सर्वाधिक तापमान की पेटी का नाम है _____।

(ख) समदाब रेखा मानचित्र बनाते समय जो कारक निकाल दिया जाता है, उसका नाम है _____।

(ग) वायु का जितना अधिक घनत्व होगा उतना ही अधिक होगा, उसका _____।

(घ) वायु का जितना अधिक तापमान होगा उतना ही कम होगा, उसका _____।

3. प्रत्येक के लिये सही विकल्प पर चिन्ह (√) लगाइये–

(क) पृथ्वी के घूर्णन के कारण–

(i) वायु अपने मूल स्थान से छिटकती है।

(ii) वायु अभिसरित होती है।

(iii) दोनों छिटकती और अभिसरित होती हैं।

(iv) ऊपर में से कोई नहीं।

(ख) विषुवतीय निम्न वायुदाब की पेटी स्थित है–

(i) 45^0 उ.द. और आर्कटिक तथा एंटार्कटिक के बीच

(ii) 10^0 उ. और 10^0 द. अक्षांशों के बीच

(iii) अयन रेखाओं और 35^0 उ. और द. अक्षांशों के बीच

(iv) ऊपर में से कोई नहीं

(ग) घोड़े का अक्षांश स्थित है–

(i) विषुवतीय निम्न वायुदाब पेटी पर

(ii) उपोष्ण उच्च वायुदाब पेटी पर

(iii) अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटी पर

(iv) ध्रुवीय उच्च वायुदाब क्षेत्र में

(घ) उच्च वायुदाब की पेटियाँ

(i) अस्थिर तथा शुष्क हैं

(ii) अस्थिर तथा नम हैं

(iii) ऊपर की दोनों

(iv) इनमें से कोई नहीं

टिप्पणी

11.5 पवनें

हमने अभी अध्ययन किया कि वायुदाब का वितरण सब जगह समान नहीं है। वायु, वायुदाब के वितरण की इस असमानता को संतुलित करने का प्रयास करती है। अतः वह उच्च वायुदाब के क्षेत्र से निम्न वायुदाब के क्षेत्र की ओर चलती है। वायुदाब के अन्तर के कारण क्षैतिज रूप में चलने वाली वायु को **पवन** कहते हैं। जब वायु ऊर्ध्वाधर रूप में गतिमान होती है तो उसे **वायुधारा** कहते हैं। पवनें और वायुधाराएं मिलकर वायुमंडल की परिसंचरण व्यवस्था बनाती हैं।

(i) वायुदाब प्रवणता एवं पवनें : वायुदाब की प्रवणता और पवन की गति में बहुत निकट का संबंध है। दो स्थानों के बीच वायुदाब का जितना अधिक अन्तर होगा, उतनी ही पवन की गति अधिक होगी। इसके विपरीत यदि वायुदाब की प्रवणता मन्द होगी तो पवन की गति भी कम होगी (चित्र 11.5)।

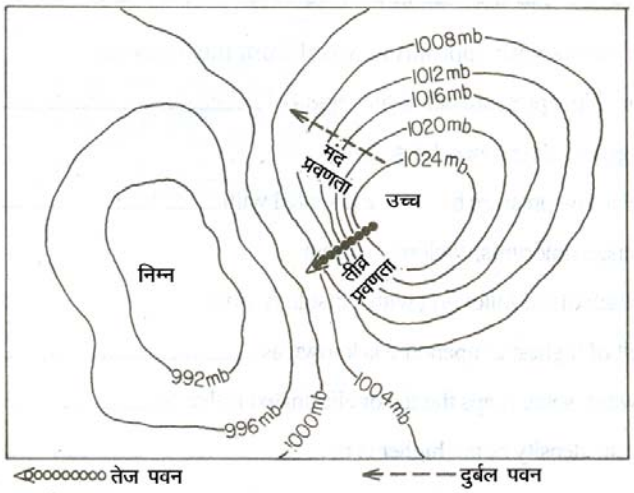

चित्र 11.5 वायुदाब प्रवणता और पवन में संबंध

(ii) कोरिओलिस प्रभाव और पवनें : वायुदाब की प्रवणता के अनुसार पवनें समदाब रेखाओं को समकोण पर नहीं काटतीं। वरन वे अपने मूल पथ से हट कर चलती हैं। पवन की दिशा में बदलाव का मुख्य कारण पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूर्णन है। इसका प्रतिपादन ई.सन् 1844 में गैसपर्ड डी कोरिओलिस महोदय द्वारा किया गया। इसे ही कोरिओलिस प्रभाव या कोरिओलिस बल कहा जाता है। इस बल के कारण पवनें उत्तरी गोलार्ध में अपने मार्ग से दाहिनी ओर हट जाती हैं और दक्षिणी गोलार्ध में बाईं ओर (चित्र 11.6)। इसे फैरल का नियम भी कहते हैं। विषुवत वृत्त पर कोरिओलिस बल नगण्य होता है, परन्तु ध्रुवों की ओर जाने पर यह बढ़ता जाता है।

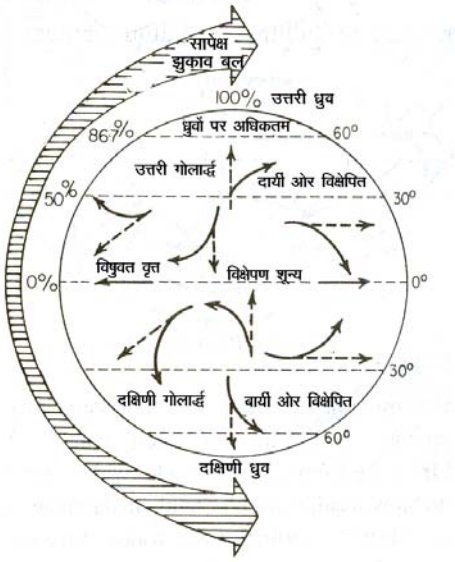

चित्र 11.6 कोरिओलिस बल के कारण पवनों का अपने मूल पथ से हटकर चलना

11.6 पवनों के प्रकार

मनुष्य कई पीढ़ियों से यह अनुभव करता आ रहा है कि संसार के कुछ क्षेत्रों में पवनें सारे वर्ष एक ही दिशा में चलती रहती हैं। इसके विपरीत कुछ क्षेत्रों में पवनों के चलने की दिशा ऋतु परिवर्तन के साथ बदल जाती है। साथ ही साथ कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जिनमें पवनें इतनी परिवर्तनशील होती है कि उनका कोई प्रतिरूप बता पाना कठिन है। धरातल पर चलने वाली पवनों को स्थूल रूप से तीन वर्गों में रखा जाता है। ये वर्ग हैं–

(क) भूमण्डलीय या स्थाई पवनें

(ख) आवर्ती पवनें

(ग) स्थानीय पवनें।

(क) भूमण्डलीय पवनें

भूमण्डलीय या स्थाई पवनें सदैव एक ही दिशा से वर्ष भर उच्च वायुदाब पेटियों से निम्न वायुदाब पेटियों की ओर चला करती हैं। ये पवनें महाद्वीपों और महासागरों से बहुत बड़े भागों पर चलती हैं। इनके तीन उपविभाग हैं– (i) पूर्वी पवनें, (ii) पश्चिमी पवनें और (iii) ध्रुवीय पूर्वी पवनें (चित्र 11.7)।

(i) पूर्वी पवनें : पूर्वी पवनें या व्यापारिक पवनें उपोष्ण उच्च वायुदाब क्षेत्रों से विषुवतीय निम्न वायुदाब क्षेत्र की ओर चलती है। इन्हें 'ट्रेड विंड' भी कहते हैं। 'ट्रेड' जर्मन भाषा का शब्द हैं जिसका अर्थ है 'पथ'। 'ट्रेड' के चलने का अर्थ है नियमित रूप से एक ही पथ पर निरन्तर एक ही दिशा से चलना। अतः इन्हें

टिप्पणी

सन्मार्गी पवनें भी कहते हैं। उत्तरी गोलार्ध में पूर्वी या सन्मार्गी पवनें उत्तर–पूर्व दिशा से तथा दक्षिणी गोलार्ध में दक्षिण–पूर्व दिशा से चलती हैं। सन्मार्गी पवनें उष्ण कटिबंध में मुख्यतया पूर्व दिशा से चलती हैं अतः इन्हें उष्ण कटिबन्धीय पूर्वी पवनें भी कहते हैं (चित्र 11.7)।

(ii) पश्चिमी या पछुआ पवनें : पश्चिमी या पछुआ पवनें उपोष्ण उच्च वायुदाब की पेटी से अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब की पेटी की ओर चलती हैं। कोरिओलिस बल के कारण ये पवनें उत्तरी गोलार्ध में अपने दायीं ओर को मुड़कर चलती हैं और यहाँ इनकी दिशा दक्षिण–पश्चिम होती है। दक्षिणी गोलार्ध में ये बाईं ओर मुड़कर चलती है और यहाँ इनकी दिशा उत्तर–पश्चिम होती है (चित्र 11.7)। मुख्य दिशा पश्चिम होने के कारण इन्हें पश्चिमी पवनें कहते हैं।

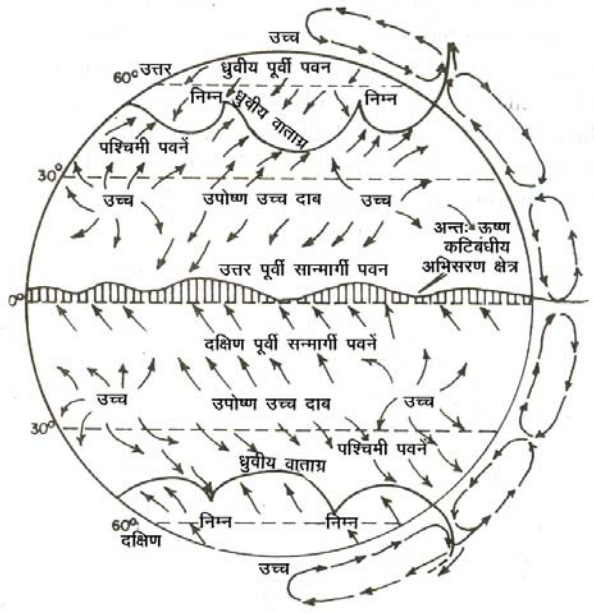

चित्र 11.7 भूमण्डलीय पवनें

(iii) ध्रुवीय पूर्वी पवनें : ये पवनें ध्रुवीय उच्च वायुदाब क्षेत्र से अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब क्षेत्र की ओर चलती हैं। उत्तरी गोलार्ध में इनकी दिशा उत्तर–पूर्व और दक्षिण गोलार्ध में दक्षिण–पूर्व होती है।

- उत्तरी गोलार्ध में पवनें अपने मार्ग से दाहिनी ओर मुड़ जाती हैं और दक्षिणी गोलार्ध में बायी ओर। इसे फैरल का नियम कहा जाता है।

पाठगत प्रश्न 11.3

1. कोष्ठक में दिये शब्दों में से उपयुक्त शब्द द्वारा रिक्त स्थान भरिये:

   (क) _____ में अन्तर होने के कारण वायु चलती है।
   (वायुदाब, वायु, तापमान)

टिप्पणी

(ख) वायु की ऊर्ध्वाधर गति को _____ कहते हैं।
(पवन, वायुधारा)

(ग) पवनें और वायु धारायें मिलकर वायुमंडल की _____ व्यवस्था बनाती हैं। (परिसंचरण, वायुदाब)

2. भूमण्डली पवनों के नाम बताइये।

(क)_____ (ख)_____ और (ग) _____

3. फैरल का नियम क्या है?

_____

_____

4. सही विकल्प पर चिन्ह (√) लगाइये।

(क) पवनें चलती हैं उच्च वायुदाब से–

(i) निम्न वायुदाब की ओर, (ii) उच्च वायुदाब की ओर,

(iii) दोनों निम्न तथा उच्च वायुदाब की ओर, (iv) किसी ओर नहीं

(ख) पवनें अपने मूल मार्ग से मुड़ जाती हैं–

(i) कोरिओलिस बल के कारण, (ii) वायुदाब प्रवणता के कारण, (iii) अपनी गति के कारण, (iv) उच्च दाब के कारण

(ग) पवनें मुख्यतया उत्पन्न होती हैं–

(i) कोरिओलिस बल के कारण, (ii) वायुदाब में अनतर के कारण, (iii) पृथ्वी के घूर्णन के कारण, (iv) आर्द्रता में अन्तर के कारण।

(घ) कोरिओलिस बल विषुवत वृत्त पर

(i) अधिकतम है, (ii) मध्यम है, (iii) नगण्य है (iv) ऊपर के तीनों नहीं

(ख) आवर्ती पवनें

इन पवनों की दिशा ऋतु परिवर्तन के साथ बदलती रहती है। मानसून पवनें बहुत ही महत्वपूर्ण आवर्ती पवनें हैं।

मानसून पवनें : 'मानसून' शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा के शब्द 'मौसम' से हुई है, जिसका अर्थ है मौसम। जो पवनें ऋतु परिवर्तन के साथ अपनी दिशा उलट लेती हैं, उन्हें मानसून पवनें कहते हैं। ग्रीष्म ऋतु में मानसून पवनें समुद्र से स्थल की ओर तथा शीत ऋतु में स्थल से समुद्र की ओर चलती हैं। परम्परागत रूप से इन पवनों की व्याख्या बड़े पैमाने पर चलने वाली समुद्र–समीर और स्थल–समीर से की जाती थी। परन्तु अब यह व्याख्या अधिक उचित नहीं समझी जाती। आज के युग में मानसून

टिप्पणी

पवनों को सामान्य भूमंडलीय पवन व्यवस्था का ही संशोधित रूप माना जाता है। एशियाई मानसून, भूमंडलीय पवन व्यवस्था और स्थानीय कारकों की पारस्परिक क्रिया का परिणाम है। इसके अन्तर्गत धरातल तथा क्षोभ मण्डल दोनों में ही घटित होने वाली क्रियाएं शामिल हैं। (चित्र 11.8)

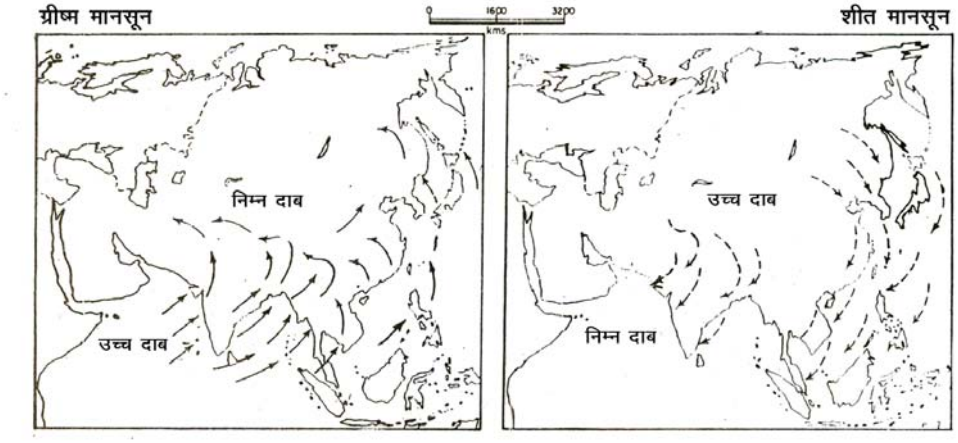

चित्र 11.8 मानसून पवनें

मानसून पवनों के प्रमुख प्रभाव क्षेत्र भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, म्यानमार (बर्मा) श्रीलंका, अरब सागर, बंगाल की खाड़ी, दक्षिण–पूर्व एशिया, उत्तरी आस्ट्रेलिया, दक्षिणी चीन और जापान हैं।

- पवनें जो ऋतु के परिवर्तन के साथ अपनी दिशा उलट लेती हैं, मानसून पवनें कहलाती हैं।

(ग) स्थानीय पवनें

अब तक हमने पृथ्वी–तल पर चलने वाली प्रमुख पवनों के बारे में अध्ययन किया है। ये पवनें पृथ्वी के प्रमुख जलवायु प्रदेशों को समझने में बहुत सहायक हैं। लेकिन हम सब जानते हैं कि कुछ पवनें ऐसी भी हैं जो स्थानीय मौसम को प्रभावित करती हैं। सामान्यतः स्थानीय पवनें छोटे क्षेत्र को प्रभावित करती हैं। ये क्षोभमण्डल के निम्नभाग तक ही सीमित रहती हैं। कुछ स्थानीय पवनों का वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

(i) समुद्र-समीर एवं स्थल-समीर : समुद्र–समीर और स्थल–समीर समुद्र तटों और झीलों के आस–पास के क्षेत्रों में चला करती हैं। स्थल भाग और जल भाग के अलग–अलग ठंडा और गर्म होने के कारण उच्च और निम्न वायुदाब बदलने के दैनिक क्रम हैं। दिन के समय स्थल भाग समुद्र या झील की अपेक्षा शीघ्र और अधिक गर्म हो जाता है। अतः स्थल भाग के ऊपर की वायु फैलती है और ऊपर

उठती है। इस कारण स्थल भाग पर स्थानीय निम्न वायुदाब विकसित हो जाता है और इसके विपरीत समुद्र या झील की सतह पर उच्च वायुदाब होता है। वायुदाबों में अन्तर होने के कारण समुद्र से स्थल की ओर वायु चलती है। इसे **समुद्र-समीर** कहते हैं। **समुद्र-समीर** दोपहर से कुछ पहले चलना आरंभ करती है और इसकी तीव्रता दोपहर और दोपहर बाद सबसे अधिक होती है। इन शीतल पवनों का तटीय भागों के मौसम पर समकारी प्रभाव पड़ता है (चित्र 11.9)।

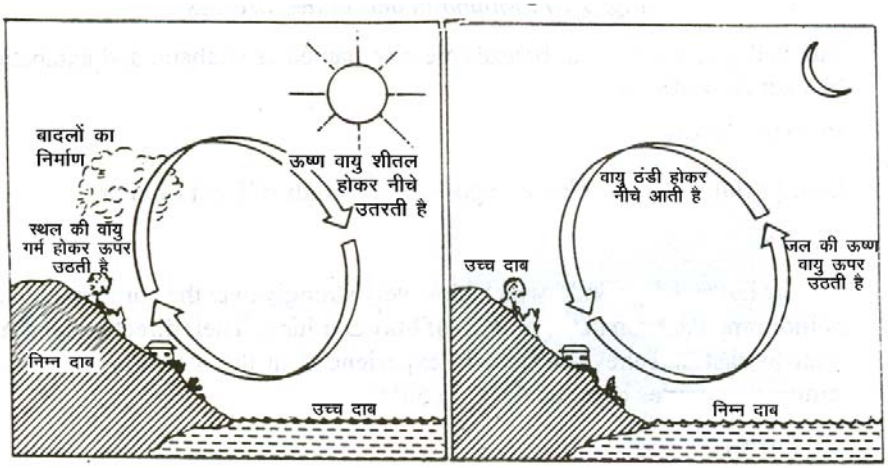

चित्र 11.9 समुद्र-समीर और स्थल-समीर

रात के समय स्थल भाग शीघ्र ठंडा हो जाता है और आसपास के जलीय भागों की अपेक्षा तापमान कम होता है। इसके परिणामस्वरूप स्थल भाग पर उच्च वायुदाब होता है और समुद्री–भाग पर अपेक्षाकृत निम्न वायुदाब, अतः पवनें स्थल–भाग से समुद्र की ओर चला करती है। ऐसी पवनों को **स्थल-समीर** कहते हैं (चित्र 11.9)।

(ii) घाटी एवं पर्वतीय समीर : पवनों की दिशा में दैनिक बदलाव होने वाले अन्य युगल पवनें घाटी एवं पर्वतीय समीर हैं। दिन के समय पर्वतीय ढाल घाटी की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाते हैं। इससे ढालों पर वायु दाब कम और घाटी तल पर वायुदाब अधिक होता है। अतः दिन के समय घाटी तल से वायु मन्द गति से पर्वतीय ढालों की ओर चला करती है। इसे घाटी–समीर कहते हैं (चित्र 11.10)।

सूर्यास्त के बाद पर्वतीय ढालों पर तेजी से ताप का विकिरण हो जाता है। अतः पर्वतीय ढालों पर घाटी तल की अपेक्षा शीघ्रता से उच्च वायुदाब विकसित हो जाता है। अतः पर्वतीय ढालों की ठंडी और भारी वायु नीचे घाटी तल की ओर बहने लगती है। इसे **पर्वतीय-समीर** कहते हैं (चित्र 11.10)। घाटी–समीर और पर्वतीय–समीर को क्रमशः **एनाबेटिक** तथा **केटाबेटिक** समीर भी कहते हैं।

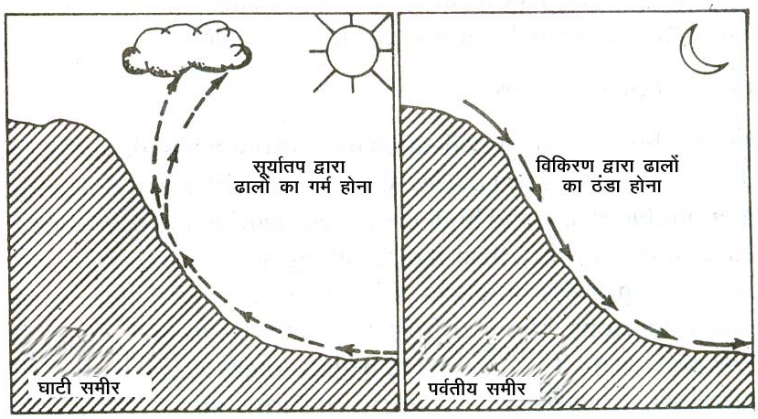

चित्र 11.10 घाटी एवं पर्वतीय समीर

(iii) गर्म पवनें : लू, फोहन और चिनूक प्रमुख गर्म प्रकार की स्थानीय पवनें हैं।

(1) **लू** : लू अति गर्म तथा शुष्क पवनें हैं जो मई तथा जून के महीनों में भारत के उत्तरी मैदानों और पाकिस्तान में चला करती हैं। इन पवनों की दिशा पश्चिम से पूर्व है ओर ये सामान्यतया दोपहर के बाद चलती हैं। इन पवनों का तापमान 45^0 सें. से 50^0 से. के बीच होता है।

(2) **फोहन :** आल्प्स पर्वत माला के पवनाविमुख (उत्तरी) ढालों पर नीचे की ओर उतरने वाले तीव्र, झोंकेदार, शुष्क और गर्म स्थानीय पवन को **फोहन** कहते हैं। स्थानीय वायुदाब प्रवणता के कारण वायु आल्प्स पर्वत के दक्षिणी ढलानों पर चढ़ती है। चढ़ते समय इन ढ़लानों पर कुछ वर्षा भी करती है। परन्तु पर्वतमाला को पार करने के बाद ये पवनें उत्तरी ढ़लानों पर गर्म पवन के रूप में नीचे उतरती हैं। इनका तापमान 15^0 से. से 20^0 से. तक होता है और ये पर्वतों पर पड़ी हिम को पिघला देती हैं। इनसे चारागाह पशुओं के चरने योग्य बन जाते हैं और अंगूरों को शीघ्र पकने में इनसे सहायता मिलती है।

(3) **चिनूक :** संयुक्त राज्य अमरीका और कनाड़ा में रॉकी पर्वतमाला के पूर्वी ढ़ालों पर नीचे उतरती गर्म पवन को **चिनूक** कहते हैं। स्थानीय भाषा में चिनूक शब्द का अर्थ है 'हिम भक्षक' क्योंकि वे हिम को समय से पूर्व पिघलाने में समर्थ हैं। अतः ये घास स्थलों को हिमरहित बना देती हैं, जिससे चारागाहों पर पर्याप्त मात्रा में घास उपलब्ध हो जाती है।

(4) **ठंडी पवनें :** ठंडी पवनें शीत ऋतु में हिमाच्छादित पर्वतों पर उत्पन्न होती हैं और ढाल के अनुरूप घाटी की ओर नीचे उतरती हैं। भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में इनके अलग–अलग नाम हैं। इनमें से प्रमुख **मिस्ट्रल** पवन हैं।

मिस्ट्रल : मिस्ट्रल पवनें आल्प्स पर्वत पर उत्पन्न होती हैं, ये फ्राँस में रोन नदी की घाटी में से होकर भूमध्य सागर की ओर चलती है। मिस्ट्रल बहुत ठंडी, शुष्क एवं तेज गति

वाली स्थानीय पवनें हैं जो अपने प्रभाव क्षेत्रों का तापमान हिमांक बिन्दु से नीचे गिरा देती हैं। इन पवनों से बचने के लिये लोग अपने बागानों के चारों ओर झाड़ियाँ लगा देते हैं। लोगों के घरों के मुख्य द्वार और खिड़कियां भी भूमध्य सागर की ओर होते हैं, जिससे इन ठंडी पवनों का प्रभाव कुछ कम हो सके।

पाठगत प्रश्न 11.4

1. निम्नलिखित प्रत्येक के लिये सही विकल्प पर चिन्ह (√) लगाइये:

   (क) फोहन पवनें हैं–

   (i) नम, (ii) ठंडी, (iii) नम और ठंडी, (iv) तीनों में से कोई नहीं

   (ख) चिनूक पवनें हैं–

   (i) फोहन पवनों के समान, (ii) मिस्ट्रल पवनो के समान,
   (iii) दोनों प्रकार की, (iv) तीनों में से कोई नहीं।

2. फोहन पवनें कहाँ से उत्पन्न होती हैं?

3. उन स्थानीय पवनों का नाम बताइये जो रॉकी पर्वतमाला के हिमाच्छादित भागों से पूर्वी ढलानों पर उतरती हैं।

4. निम्नलिखित में से प्रत्येक पवन के सामने गर्म या ठंडी लिखिये:

   (क) लू_____ (ख) मिस्ट्रल _____ (ग) चिनूक _____.

11.7 उष्ण कटिबन्धीय एवं शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात

(1) **वायु राशि :** विस्तृत क्षेत्र पर वायुमण्डल की वह स्थिति जिसमें क्षैतिज दृष्टिकोण से तापमान और आर्द्रता में एकरूपता होती है **वायु-राशि** कहलाती है। एक वायु–राशि उस समय विकासित होती है, जब वायु बहुत बड़े और लगभग एक समान स्थल भाग या महासागर तल पर बहुत लम्बे समय तक स्थिर रहती है, जिससे वह तल के तापमान या आर्द्रता को ग्रहण कर लेती है। वायु–राशियों के प्रमुख स्रोत प्रदेश समान दशाओं वाले उच्च अक्षांशों के ध्रुवीय प्रदेश या निम्न अक्षांशों के उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र होते हैं। अतः वायु–राशियाँ दो प्रकार की होती हैं– ध्रुवीय वायु–राशि और उष्ण कटिबंधीय वायु–राशि। ध्रुवीय वायु–राशि ठंडी और उष्ण कटिबंधीय वायु–राशि गर्म होती है। जब ठंडी वायु–राशि और गर्म वायु–राशि एक दूसरे की ओर बहती है तब इनके मिलन तल को **वाताग्र** कहते हैं। जब गर्म वायु–राशि ठंडी वायु–राशि के ऊपर चढ़ती है तो इससे बने वाताग्र को **गर्म वाताग्र** कहते हैं। जब ठंडी वायु–राशि अधिक गतिशील होने के साथ गर्म वायु–राशि को नीचे से काटती हुई गर्म वायु–राशि को ऊपर उठने के लिये

बाध्य करती है, तो इस स्थिति में शीत–वाताग्र बनता है। **शीत-वाताग्र** का तल गर्म वाताग्र के तल से तीव्र होता है (चित्र 12.5)। कोई वायु–राशि चाहे वह ध्रुवीय, उष्णकटिबंधीय, महासागरीय या महाद्वीपीय हो, जब वह किसी प्रदेश पर हावी हो जाती है तो वह मुख्यतया वहाँ के मौसम को नियंत्रित करती है।

(2) **चक्रवात** : एक विशिष्ट चक्रवात में समदाब रेखाओं की व्यवस्था दीर्घवृत्ताकार होती है और उनके केन्द्र में निम्न वायुदाब होता है तथा पवनें निम्न वायुदाब केन्द्र की ओर चलती हैं। उत्तरी गोलार्ध में चक्रवात के भीतर पवनें घड़ी की सुइयों के घूमने की वपरीत दिशा में चलती हैं और दक्षिणी गोलार्ध में घड़ी की सुइयों के घूमने की दिशा के अनुरूप चलती हैं (चित्र 11.11)। चक्रवात दो प्रकार के होते हैं– (क) शीतोष्ण कटिबंधीय या मध्य अक्षांशीय चक्रवात और (ख) उष्णकटिबंध ीय या निम्न अक्षांशीय चक्रवात। (चित्र 11.11)

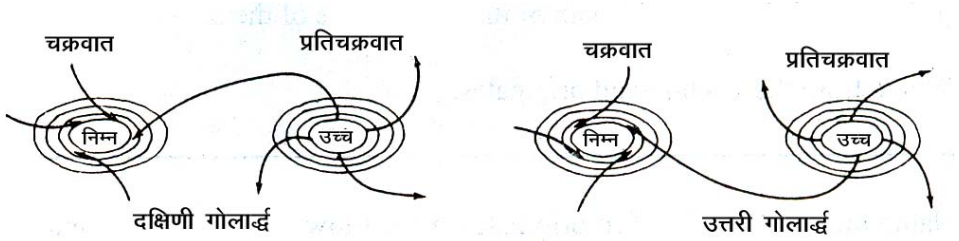

चित्र 11.11 उत्तरी व दक्षिणी गोलार्धों में चक्रवात और प्रतिचक्रवात से संबंधित वायु व्यवस्था

(क) शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात को निम्न वायुदाब के अवदाब भी कहते हैं, ये 35^0 और 65^0 उ. तथा द. अक्षाशों के बीच या मध्य अक्षांशों की पछुआ पवनों की पेटी में वाताग्रों के साथ निर्मित होते हैं। ये पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर चलते हैं और शीत ऋतु में अधिक विकसित होते हैं। इन चक्रवातों के प्रमुख क्षेत्र अटलांटिक महासागर और उत्तर–पश्चिम यूरोप हैं। शीतोष्ण कटिबन्धीय चक्रवातों का विस्तार बहुत अधिक होता है। इनकी मोटाई 9 से 11 किलोमीटर तथा छोटे और बड़े व्यास क्रमशः 1040 से 1920 किलोमीटर तक होते हैं (चित्र 11.12)। ऐसे प्रत्येक चक्रवात के पीछे उच्च वायुदाब का प्रतिचक्रवात होता है। चक्रवात में बादलों से घिरा आकाश और फुहार जैसी वर्षा की मौसम दशायें कई दिनों तक रहती हैं। परन्तु प्रतिचक्रवात में मौसम शान्त, धूपवाला और शीत लहर से युक्त होता है।

(ख) उष्ण कटिबंधीय चक्रवात ऐसे क्षेत्र में बनते हैं, जहाँ उत्तर–पूर्व और दक्षिण–पूर्व सन्मार्गी पवनें मिलती हैं। इस क्षेत्र को अंतः उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र (आई.टी.सी. जेड.) कहते हैं। उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों के प्रमुख क्षेत्रों में मैक्सिको, उत्तरी प्रशान्त महासागर का दक्षिणी–पश्चिमी भाग, उत्तरी हिन्द महासागर तथा दक्षिणी प्रशान्त महासागर सम्मिलित हैं। उष्ण कटिबंधीय चक्रवात शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात से कई बातों में भिन्न होते हैं। इनमें शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवातों के समान सुस्पष्ट गर्म तथा

ठंडे वाताग्र नहीं होते, क्योंकि अंतः उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र में तापमान सब जगह लगभग एक समान होते हैं। इनमें कोई स्पष्ट पवन व्यवस्था नहीं होती और ये सामान्य तथा उथले अवदाब हैं और इनमें पवन की गति क्षीण होती है। इनके साथ या पीछे प्रति चक्रवात नहीं होते। इन चक्रवातों में समदाब रेखाओं की व्यवस्था लगभग वृत्ताकार होती है। ये बहुत बड़े विस्तार के नहीं होते और इनका व्यास 160 से 640 किलोमीटर तक होता है। फिर भी इनमें से कुछ बहुत ही प्रचंड तथा तूफानी होते हैं जो अपने प्रभाव क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर विनाश लीला करते हैं। इस प्रकार के भयानक चक्रवातों को कैरीबियन सागर में हरीकेन; चीन, जापान तथा फिलीपिन द्वीपों में टाइफून; हिन्द महासागर में चक्रवात और उत्तरी आस्ट्रेलिया में विली–विली कहते हैं (चित्र 11.12)।

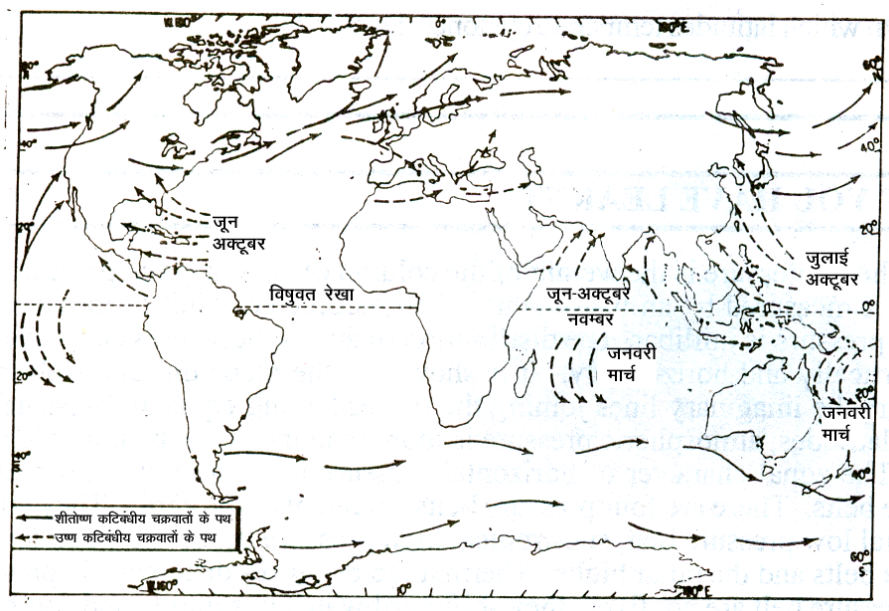

चित्र 11.12 शीतोष्ण एवं उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के मार्ग

उष्ण कटिबंधीय चक्रवात तटीय भागों में अधिकतर विनाश करते हैं। आपने भारत के तटों पर ग्रीष्म और शरद ऋतुओं में चक्रवातों के आने के बारे में सुना होगा। इनके द्वारा इस क्षेत्र में प्रति वर्ष जन–धन की अपार हानि होती है। इन चक्रवातों में अति तीव्र वायुदाब प्रवणता के कारण बहुत तेज पवनें चलती हैं जो सीमित क्षेत्र में तूफान और बहुत भारी वर्षा के साथ विनाश लीला करती हैं। फिर भी ऐसे चक्रवातों के केन्द्र के चारों ओर लगभग 8 से 48 किलोमीटर क्षेत्र, जिसे इन तूफानी चक्रवातों की आँख कहते हैं, में मौसम शांत और वर्षा रहित होता है। यदि इस आँख को खोज लिया जाये तो आधुनिक विज्ञान की मदद से ऐसे तूफानी चक्रवातों का आगे बढ़ना रोका जा सकता है और इस प्रकार हम उनसे अपनी रक्षा कर सकते हैं।

टिप्पणी

- वायुराशि वायु की वह विस्तृत मात्रा है जिसमें तापमान, वायुदाब तथा आर्द्रता सब जगह समान होती है।
- दो वायुराशियों को अलग करने वाला तल वाताग्र कहलाता है।
- शीतोष्ण चक्रवात मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों से विकसित होते हैं, जबकि उष्ण कटिबंधीय चक्रवात निम्न अक्षांशीय क्षेत्रों में बनते हैं।

पाठगत प्रश्न 11.5

1. कोष्ठक में से सही शब्द चुनकर रिक्त स्थान भरिये।

   (क) समान तापमान, वायुदाब तथा आर्द्रता वाली वायु की विस्तृत मात्रा _____ कहलाती है। (वायु राशि, जेट वायुधारा, पवन, वायुधारा)

   (ख) दो प्रकार की वायुराशियों के नाम हैं _____ वायुराशि और _____ वायुराशि। (शीतोष्ण कटिबंधीय, उष्ण कटिबंधीय, ध्रुवीय, विषुवतीय)

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में दीजिये:

   (क) किन चक्रवातों द्वारा जन–धन की हानि सर्वाधिक होती है।

   _____

   (ख) शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात किन अक्षांशों में विकसित होते हैं?

   _____

आपने क्या सीखा

एक निश्चित स्थान और समय पर वायु के स्तम्भ का दाब वायुमंडलीय दाब कहलाता है। इसे वायुदाबमापी यंत्र (बैरोमीटर) से मापा जाता है। मिलीबार वायुदाब मापने की इकाई है। वायुदाब के क्षैतिज एवं ऊर्ध्वाधर दोनों प्रकार के वितरण असमान हैं। मानचित्र पर वायुदाब के वितरण को समदाब रेखाओं द्वारा दर्शाया जाता है। समदाब रेखायें काल्पनिक रेखायें हैं जो मानचित्र पर समुद्र तल पर उतारे गये समान दाब वाले स्थानों को मिलाती हैं। उच्च अक्षांशों पर वायुदाब निम्न अक्षांशों की अपेक्षा अधिक होता है। क्षैतिज वायुदाब की क्षेत्रीय व्यवस्था वायुदाब पेटियाँ कहलाती हैं। संसार की प्रमुख चार वायुदाब पेटियां हैं– विषुवतीय निम्नवायुदाब पेटी, उपोष्ण उच्च वायुदाब पेटी, अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटी और ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटी। तापमान एवं घूर्णन के कारण

टिप्पणी

धरातल पर वायुदाब में भिन्नता पाई जाती है। वायुदाब पेटियां स्थिर नहीं हैं। वे सूर्य की आभासी गति के अनुसार ग्रीष्म ऋतु में उत्तर की ओर और शीत ऋतु में दक्षिण की ओर खिसकती रहती हैं। वायुदाब प्रवणता, दो स्थानों के बीच की दूरी और उनके बीच वायुदाब के अन्दर के अनुपात को कहते हैं। कुछ पवनें दैनिक प्रतिरूप के तौर पर हमेशा बहती है। उदाहरण के लिए स्थल समीर और समुद्र–समीर, घाटी एवं पर्वतीय समीर। वायुदाब प्रवणता और पवनगति के बीच निकट का संबंध है। कोरिओलिस बल के कारण पवनें उत्तरी गोलार्ध में मूल पथ से अपने दांईं ओर तथा दक्षिणी गोलार्ध से अपने बांईं ओर मुड़ जाती हैं। इसे फेरल का नियम भी कहते हैं। कुछ पवनें सारे वर्ष एक ही दिशा से चलती हैं तो कुछ पवनें स्थानीय कारणों से दिशा परिवर्तित कर लेती हैं। मानसून ऋतुवत पवनें हैं। स्थानीय पवनें दैनिक हैं। वायुराशियाँ समान तापमान, वायुदाब और आर्द्रता वाली वायु की विशाल मात्रा होती है। दो विभिन्न वायुराशियों के मिलन तल को वाताग्र कहते हैं। मध्य अक्षांशों में वायुराशियों और वाताग्र के कारण शीतोष्ण चक्रवात बनते हैं। निम्न अक्षांशों में उष्ण कटिबंधीय चक्रवात बनते हैं और ये तटीय भागों की जलवायु को प्रभावित करते हैं। कभी–कभी ये बहुत प्रचण्ड या तूफानी होते हैं जो जनधन को अपार हानि करते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 30–30 शब्दों में दीजिये।
   (क) वायुदाब से क्या तात्पर्य है?
   (ख) वायुदाब किस यंत्र की मदद से मापा जाता है?
   (ग) निम्नलिखित क्या हैं?
      (1) मिलीबार
      (2) समदाब रेखा
   (घ) ऊँचाई का वायुदाब पर क्या प्रभाव पड़ता है?
2. 50–50 शब्दों में निम्नलिखित प्रत्येक जोड़े के बीच अंतर बताइये:
   (क) वायुधारा और पवन
   (ख) भूमंडलीय एवं आवर्ती पवनें
   (ग) फोहन एवं मिस्ट्रल
   (घ) एनाबेटिक और कैटाबेटिक पवनें
3. 100–100 शब्दों में निम्नलिखित के कारण बताइए:
   (क) अधोध्रुवीय क्षेत्र में निम्न वायुदाब पाया जाता है।
   (ख) समुद्र समीर दिन के समय चलती है।

टिप्पणी

(ग) दोनों गोलार्धों में पवनें अपनी दिशा बदलती हैं।

4. निम्नलिखित की परिभाषा दीजिये:

(क) वायुराशि (ख) वाताग्र

5. शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात क्या है? ये उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों से किस प्रकार भिन्न हैं?

6. पवनों के अपने मूल पथ से मुड़ने में कोरिओलिस बल की क्या भूमिका रहती है?

7. निम्नलिखित की व्याख्या कीजिए:

(क) घोड़ों का अक्षांश (ख) डोलड्रम

8. संसार के रेखामानचित्र में निम्नलिखित दर्शाइये:

(क) जनवरी महीने के प्रमुख निम्न दाब क्षेत्र:

(ख) जुलाई महीने में उत्तरी गोलार्ध के प्रमुख उच्च दाब क्षेत्र।

9. सही विकल्प पर चिन्ह (√) लगाइये:

(क) दक्षिण–पश्चिम मानसून होती है–

(i) स्थानीय पवनें (ii) बड़े पैमाने पर समुद्र एवं स्थल समीर

(iii) दक्षिण–पूर्व सन्मार्गी पवनों का संशोधित रूप (iv) बहुत गर्म पवनें

(ख) पवनों के उत्पन्न होने का मुख्य कारण है–

(i) कोरिओलिस प्रभाव, (ii) वायुदाब की भिन्नता

(iii) पृथ्वी का घूर्णन, (iv) आर्द्रता में अन्तर

(ग) शान्त पेटी के क्षेत्र में होता है–

(i) उच्च वायुदाब तथा तेज पवनें,

(ii) मध्यम वायुदाब

(iii) निम्न वायुदाब तथा शान्त दशाएं

(iv) उच्च वायुदाब एवं शान्त दशाएं

(घ) विषुवत वृत्त पर कोरिओलिस बल होता है–

(i) सबसे अधिक, (ii) मध्यम, (iii) बिल्कुल नहीं, (iv) सबसे कम

(ङ) भारत अपनी वर्षा का अधिकतर भाग प्राप्त करता है–

(i) उत्तर–पूर्व मानसून से, (ii) पीछे हटते दक्षिण–पश्चिम मानसून से,

(iii) दक्षिण–पश्चिमी मानसून से, (iv) शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवातों से

(च) मानचित्र पर वायुदाब की दशाएं प्रदर्शित की जाती हैं–

टिप्पणी

(i) समताप रेखाओं द्वारा, (ii) समदाब रेखाओं द्वारा,

(iii) समवृष्टि रेखाओं द्वारा, (iv) समलवण रेखाओं द्वारा

(छ) घोड़ों के अक्षांश स्थित हैं–

(i) उपोष्ण उच्च दाब पेटी में, (ii) विषुवतीय निम्न वायुदाब पेटी में,

(iii) अधोध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटी में,

(iv) ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटी में

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

11.1

1. (क) क्षेत्र, (ख) हेक्टोपास्कल, (ग) वायुदाब (घ) असमान
2. (क) वायु का तापमान, (ख) पृथ्वी का घूर्णन और
   (ग) वायु में जलवाष्प की मात्रा
3. (क) फोर्टिन बैरोमीटर (ख) एनरॉइड बैरोमीटर
4. 1013.25 मिलीबार
5. (क) 76 से.मी. (ख) निम्न वायुदाब (ग) अधिक वायुदाब

11.2

1. (क) अभिसरण, (ख) चक्रवात
2. (क) तापीय विषुवत वृत्त, (ख) ऊँचाई, (ग) वायुदाब (घ) वायुदाब/घनत्व
3. (क) (i); (ख) (ii); (ग) (ii); (घ) (iv);

11.3

1. (क) वायुदाब (ख) वायुधारा, (ग) परिसंचरण
2. (क) सन्मार्गी पवनें, (ख) पश्चिमी पवनें, (ग) ध्रुवीय पवनें
3. उत्तरी गोलार्ध में पवनें अथवा अन्य कोई गतिमान वस्तु अपने मार्ग से दाईं ओर मुड़ जाती हैं और दक्षिणी गोलार्ध में बाईं ओर, इसे फैरल का नियम कहते हैं।
4. (क) (i); (ख) (i); (ग) (ii); (घ) (iii);

11.4

1. (क) (iv); (ख) (i);
2. आल्प्स पर्वतमाला के पवनाविमुख ढालों पर
3. चिनूक
4. (क) गर्म, (ख) ठंडी, (ग) गर्म

टिप्पणी

11.5

1. (क) वायुराशि, (ख) उष्ण कटिबंधीय एवं ध्रुवीय
2. (क) उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों द्वारा

   (ख) मध्य अक्षांशों में

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. (क) एक निश्चित समय में किसी स्थान पर वायु के स्तम्भ का भार

   (ख) वायुदाब वायुदाबमापी (बैरोमीटर) यंत्र की मदद से मापा जाता है।

   (ग) (1) वायुदाब मापने की इकाई। यह एक वर्ग से.मी. क्षेत्र पर पड़ने वाले लगभग एक ग्राम बल/भार के बराबर होता है।

   (2) समान वायुदाब वाले स्थानों को जोड़ने वाली रेखा समदाब रेखा कहलाती है।

2. (क) कृपया अनुच्छेद 11.5 देखिये।

   (ख) कृपया अनुच्छेद 11.6 (क) और (ख) देखिये।

   (ग) कृपया अनुच्छेद 11.6 (ग) (iii) (2) और (iv) (1) देखिये।

   (घ) कृपया अनुच्छेद 11.6 (ग) (ii) देखिये।

3. (क) कृपया अनुच्छेद 11.3 (iii) देखिये।

   (ख) कृपया अनुच्छेद 11.6 (ग) (i) देखिये।

   (ग) कृपया अनुच्छेद 11.5 (ii) देखिये।

4. (क) कृपया अनुच्छेद 11.7 (1) देखिये।

   (ख) कृपया अनुच्छेद 11.7 (1) देखिये।

5. (घ) कृपया अनुच्छेद 11.7 (2) (क) और (ख) देखिये।

6. कृपया अनुच्छेद 11.5 (ii) देखिये।

7. (क) कृपया अनुच्छेद 11.3 (ii) देखिये।

   (ख) कृपया अनुच्छेद 11.3 (ii) देखिये।

8. कृपया चित्र 11.3 और चित्र 11.4 देखिये।

9. (क) (ii); (ख) (ii); (ग) (iii); (घ) (iii); (ड़) (iii); (च) (ii); (छ) (i)

टिप्पणी

12

आर्द्रता और वर्षण

पिछले पाठ में वायुमंडल का संघटन बताते हुए हमने यह जाना कि जलवाष्प एक छोटा घटक होने के बावजूद वायुमंडल का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अवयव है। इस पाठ में हम दिन प्रतिदिन में होने वाले मौसम संबंधी परिवर्तनों में जलवाष्प की भूमिका का अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- निरपेक्ष एवं सापेक्ष आर्द्रता में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे;
- तापमान का वायु की (क) निरपेक्ष आर्द्रता और (ख) सापेक्ष आर्द्रता के साथ संबंध स्थापित कर सकेंगे;
- सापेक्ष आर्द्रता के बढ़ने और घटने के लिये आवश्यक दशाओं के बारे में निष्कर्ष निकाल सकेंगे;
- असतृप्त और संतृप्त वायु में अन्तर बता सकेंगे;
- वाष्पीकरण को प्रभावित करने वाले कारक बता सकेंगे;
- गुप्त ताप और उसके महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे;
- संघनन के विभिन्न रूपों का वर्णन कर सकेंगे;
- वर्षण के लिये आवश्यक दशाओं की व्याख्या कर सकेंगे;
- आरेखों की मदद से वर्षण के तीन रूपों में अन्तर कर सकेंगे;
- संसार में वर्षण के वितरण की प्रमुख विशेषतायें क्षेत्रीय एवं ऋतुवत विविधताओं के संदर्भ में समझा सकेंगे;
- वर्षण के वितरण को प्रभावित करने वाले विविध कारकों की व्याख्या कर सकेंगे।

टिप्पणी

12.1 वायुमंडल में जलवाष्प

जलवाष्प, वायुमंडल का सबसे अधिक परिवर्तनशील अवयव है। वायुमंडल के एक इकाई आयतन में जलवाष्प का अनुपात शून्य से चार प्रतिशत तक होता है। वायु में जल पदार्थ के तीनों रूपों– ठोस (हिमकण), द्रव (जलबिन्दु) तथा गैस (जलवाष्प) में विद्यमान रह सकता है। जल सामान्यतया वायु में स्वाद रहित, गन्ध रहित एवं पारदर्शी गैस के रूप में रहता है। इस गैस को ही जलवाष्प कहते हैं। वायुमंडल में जलवाष्प के विद्यमान रहने के ही कारण पृथ्वी पर जीवन संभव हुआ है। आइये, पृथ्वी पर पाये जाने वाले विविध प्रकार के जीवन के लिये जलवाष्प के महत्त्व का अध्ययन करें।

(1) हमने दसवें पाठ में अध्ययन किया है कि वायुमंडल में विद्यमान जलवाष्प सूर्यातप एवं पार्थिव विकिरण के महत्वपूर्ण अंश को सोख लेती है। इस प्रकार यह पृथ्वी के तल से होने वाले ऊष्मा ऊर्जा की क्षति को रोकती है और पृथ्वी पर अनुकूल तापमान बनाये रखने में मदद देती है।

(2) वायु में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा वाष्पीकरण की दर को प्रभावित करती है।

(3) एक इकाई आयतन की वायु में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा उसके गुप्त ताप या उसमें संग्रह की हुई ऊर्जा का निर्धारण करती है जो वायुमंडल में परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(4) किसी स्थान या प्रदेश की वायु में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा वर्षण के लिए उसकी संभावित क्षमता का संकेत देती है। यदि वायु में जलवाष्प की मात्रा अधिक है तो वह अधिक मात्रा में वर्षण करने में सक्षम है। अथवा कम है तो कम मात्रा में ही वर्षण कर सकती हैं

(5) वायु में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा फसलों पर अनुकूल प्रभाव डालती है। इसके विपरीत गर्म और शुष्क वायु फसलों को क्षति पहुँचाती है, जैसा कि उत्तरी–पश्चिमी भारत की रबी की फसल को होता है।

(6) शुष्क वायु हमारे शरीर की त्वचा को शुष्क व कड़ा बना देती है। यही कारण है कि हम लोग कड़ाके की शीत ऋतु और ग्रीष्म ऋतुओं में अपने चेहरे की त्वचा की सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रकार की क्रीमों का उपयोग करते हैं।

- वायुमंडल में जलवाष्प विकिरण को सोखती है, वाष्पीकरण की दर को नियंत्रित करती है, गुप्त ताप को छोड़कर मौसम में परिवर्तन लाती है, वर्षण की क्षमता को निर्धारित करती है, फसलों को और हमारे शरीर की त्वचा को प्रभावित करती है। अतः जलवाष्प का महत्व बहुत अधिक है।

12.2 आर्द्रता

जल, जलवाष्प में कैसे बदल जाता है? सूर्य की ऊष्मा जल को जलवाष्प में बदलती रहती है। किसी स्थान पर किसी समय वायुमण्डल में गैस के रूप में विद्यमान इस

अदृश्य जलवाष्प को वायु की आर्द्रता कहते हैं। दूसरे शब्दों में, आर्द्रता से तात्पर्य जल की उस नमी से है जो किसी वायु में जलवाष्प की मात्रा के रूप में विद्यमान होती है। वायु में विद्यमान आर्द्रता को निम्न दो प्रकार से व्यक्त किया जाता है:

(i) निरपेक्ष आर्द्रता

(ii) सापेक्ष आर्द्रता

(i) निरपेक्ष आर्द्रता : किसी इकाई आयतन की वायु में किसी समय विशेष में विद्यमान जलवाष्प की वास्तविक मात्रा को निरपेक्ष आर्द्रता कहते हैं। इसे ग्राम प्रतिघन मीटर में व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिये, यदि किसी वायु की निरपेक्ष आर्द्रता 10 ग्राम है तो इसका तात्पर्य है कि उस वायु में एक घन मीटर आयतन में 10 ग्राम आर्द्रता जलवाष्प के रूप में विद्यमान है। निरपेक्ष आर्द्रता स्थान व समय के परिवर्तन के साथ बदलती रहती है।

किसी वायु की जलवाष्प धारण करने की क्षमता पूर्णतः उसके तापमान पर निर्भर करती है। तापमान के बढ़ने के साथ वायु में जलवाष्प धारण करने की क्षमता बढ़ जाती है। उदाहरण के लिये 10^0 से. तापमान वाली कोई वायु अपने अन्दर 11.4 ग्राम जलवाष्प प्रतिघन मीटर धारण कर सकती है। यदि इस वायु का तापमान बढ़कर 21^0 से. हो जाता है तो यही वायु एक घन मीटर आयतन में 22. 2 ग्राम आर्द्रता जलवाष्प रूप में धारण कर सकती है। चित्र 12.1 में वायु तापमान तथा उसमें अधिकतम आर्द्रता धारण करने की क्षमता के संबंध को दर्शाया गया है। इस चित्र पर एक सामान्य दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि तापमान के बढ़ने के साथ वायु की आर्द्रता धारण करने की क्षमता भी बढ़ जाती है। तापमान तथा वायुदाब में परिवर्तन होने के कारण वायु के आयतन में परिवर्तन होता है, फलस्वरूप उसकी निरपेक्ष आर्द्रता भी बदल जाती है। अतः आर्द्रता मापने के लिये अधिक विश्वसनीय माप की आवश्यकता होती है।

(ii) सापेक्ष आर्द्रता : सापेक्ष आर्द्रता वायुमण्डलीय नमी का सबसे महत्वपूर्ण तथा विश्वसनीय माप है। सापेक्ष आर्द्रता किसी निश्चित आयतन की वायु में वास्तविक जलवाष्प की मात्रा तथा उसी वायु के किसी दिये गए तापमान पर अधिकतम आर्द्रता धारण करने की क्षमता का अनुपात है। इसे प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है। $\text{सापेक्ष आर्द्रता} = \frac{\text{वायु में वाष्प दबाव}}{\text{संतप्त वाष्प दबाव}} \times 100$

चित्र 12.1 से यह स्पष्ट है कि कोई वायु किसी दिए गये तापमान पर जलवाष्प की एक निश्चित अधिकतम मात्रा ही अपने अन्दर धारण कर सकती है। जब यह स्थिति आ जाती है तो हम कहते हैं कि वायु पूर्णतया संतृप्त हो गई है जिस तापमान पर वायु पूर्वत या संतृप्त हो जाता है उसे ओसांक या संतृपन बिन्दु कहते हैं। किसी वायु की सापेक्ष आर्द्रता इस बिन्दु पर शत–प्रतिशत होती है।

सापेक्ष आर्द्रता इस पाठ को भली भांति समझने के लिये एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विचार है। अतः इसे एक उदाहरण की मदद से समझें। चित्र 12.1 से यह स्पष्ट है कि 21^0 से. वाली वायु अपने अन्दर अधिकतम 22.2 ग्राम प्रति घन मीटर ही आर्द्रता रख सकती है। यदि वायु 21^0 से. तापमान पर 11.1 ग्राम आर्द्रता धारण किये हुये है। तो इस वायु की सापेक्ष आर्द्रता 11.1/22.2X100 अर्थात 50 प्रतिशत होगी। यदि यही वायु 21^0 से. पर वास्तव में 22.2 ग्राम आर्द्रता धारण किए हुए हो तो उसकी सापेक्ष आर्द्रता 22.2/22.2X100 अर्थात 100 प्रतिशत होगी। जब वायु की सापेक्ष आर्द्रता शत प्रतिशत होती है तो वायु संतृप्त हो जाती है। यदि सापेक्ष आर्द्रता 100 प्रतिशत से कम है तो वायु असंतृप्त कहलाती है।

सापेक्ष आर्द्रता उस समय बढ़ती है, जब वायु का तापमान गिर जाता है या उस वायु में अधिक नमी वाली वायु आकर मिल जाती है। सापेक्ष आर्द्रता उस समय घटती हैं जब वायु का तापमान बढ़ जाता है या उस वायु में कम नमी वाली वायु आकर मिल जाती है।

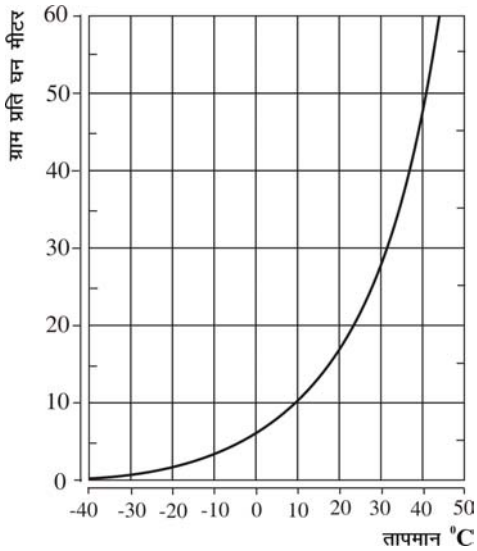

चित्र 12.1: सापेक्ष आर्द्रता

यह स्पष्ट करने के लिए कि किसी वायु में विद्यमान जलवाष्प की सापेक्ष आर्द्रता उसकी निरपेक्ष आर्द्रता की तुलना में अधिक उपयोगी माप है, इसे एक और उदाहरण लेकर स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिये एक गिलास में 250 ग्राम पानी है। लेकिन जब तक किसी को यह ज्ञात न हो कि उस गिलास में अधिकतम कितना पानी भरा जा सकता है, वह यह नहीं बता सकता कि गिलास पानी से कितना भरा है। लेकिन जब उसे यह ज्ञात होता है कि गिलास में 500 ग्राम पानी भरा जा सकता है तो वह तत्काल यह बता सकता है कि गिलास पानी से आधा भरा हुआ है। इसी प्रकार, जब कोई किसी वायु की सापेक्ष आर्द्रता मापता है तो उसे न केवल उसकी वास्तविक जलवाष्प की मात्रा ज्ञात होनी चाहिए, बल्कि यह भी जानना आवश्यक है कि उस वायु में उस तापमान पर कितने ग्राम प्रतिघन मीटर अधिकतम आर्द्रता समा सकती है।

- किसी इकाई आयतन की वायु में किसी समय विशेष में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा या भार को निरपेक्ष आर्द्रता कहते हैं।
- किसी वायु की निरपेक्ष आर्द्रता तथा उस तापमान पर उसकी अधिकतम आर्द्रता धारण करने की क्षमता के अनुपात को सापेक्ष आर्द्रता कहते हैं। इसे प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है। (सा.आ.=नि.आ./अधिकतम क्षमता X100)
- वह तापमान जिस पर एक दी गई वायु पूर्णतया संतृप्त हो जाती है, उसे ओसांक या संतृप्त बिन्दु कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 12.1

1. वायुमंडल में विद्यमान जल के तीनों रूपों के नाम बताइए।

   (क) _____ (ख) _____ (ग) _____

2. निम्न में से प्रत्येक के लिये भौगोलिक नाम बताइए:

   (क) वायु में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा _____

   (ख) प्रति आयतन इकाई वायु में विद्यमान वास्तविक आर्द्रता का भार

   _____

   (ग) वास्तविक आर्द्रता तथा उस वायु की दिये गये तापमान पर अधिकतम आर्द्रता धारण करने की क्षमता के अनुपात का प्रतिशत

   _____

   (घ) अपनी पूर्ण क्षमता तक आर्द्रता धारण करने वाली वायु कहलाती है

   _____

   (ङ) तापमान जिस पर कोई वायु संतृप्त होती है।

   _____

3. सही कथनों पर चिन्ह (√) लगाइए:

   (क) गर्म वायु ठंडी वायु की तुलना में कम आर्द्रता धारण कर सकती है।

   (ख) ठंडी वायु गर्म वायु की तुलना में कम आर्द्रता धारण कर सकती है।

   (ग) उष्ण कटिबंधीय मरूस्थलों के ऊपर की वायु सामान्यतः असंतृप्त होती है।

   (घ) तापमान बढ़ने से किसी वायु की अधिक आर्द्रता धारण करने की क्षमता घट जाती है।

टिप्पणी

(ङ) किसी वायु की सापेक्ष आर्द्रता उसके तापमान के कम होने से बढ़ती है।

(च) किसी वायु के ठंडी वायु से मिलने पर उसका तापमान कम होता है।

(छ) किसी वायु का तापमान पहाड़ी ढालों पर नीचे उतरने से कम होता है।

12.3 वाष्पीकरण

वह प्रक्रिया, जिसके द्वारा जल गैस अवस्था में परिवर्तित होता है, वाष्पीकरण कहलाती है। वाष्पीकरण की प्रक्रिया ओसांक अवस्था को छोड़कर प्रत्येक तापमान, स्थान व समय में होती है, वाष्पीकरण की दर कई कारकों पर निर्भर करती है। इनमें से प्रमुख कारक इस प्रकार हैं:–

(i) जल की उपलब्धता : स्थल भागों की अपेक्षा जल भागों से वाष्पीकरण अधिक होता है। यही कारण है कि वाष्पीकरण महाद्वीपों की तुलना में महासागरों पर अधिक होता है।

(ii) तापमान : हम जानते हैं कि गर्म वायु ठंडी वायु की तुलना में अधिक नमी धारण कर सकती है। अतः जब किसी वायु का तापमान अधिक होता है, वह अपने अन्दर कम तापमान की तुलना में अधिक नमी धारण करने की स्थिति में होती है। यही कारण है कि शीत काल की तुलना में ग्रीष्म काल में वाष्पीकरण अधिक होता है, अतः गीले कपड़े सर्दियों की तुलना में गर्मियों में जल्दी सूख जाते हैं।

(iii) वायु की नमी : यदि किसी वायु की सापेक्ष आर्द्रता अधिक है तो वह कम मात्रा में अतिरिक्त नमी धारण कर सकती है। इसके विपरीत यदि सापेक्ष आर्द्रता कम है तो अधिक मात्रा में अतिरिक्त नमी धारण कर सकती है। ऐसी स्थिति में वाष्पीकरण अधिक तेजी से होगा। वायु की शुष्कता भी वाष्पीकरण की दर को तेज करती है। वर्षा वाले दिनों में वायु में अधिक नमी होने के कारण गीले कपड़े देर से सूखते हैं।

(iv) पवन : हवा भी वाष्पीकरण की दर को प्रभावित करती है। यदि वायु शांत है, तो जलीय धरातल से लगी वायु वाष्पीकरण होते ही संतृप्त हो जाएगी। वायु के संतृप्त होने पर वाष्पीकरण रूक जाएगा। यदि वायु गतिशील है तो वह संतृप्त वायु को उस स्थान से हटा देती है उसके स्थान पर कम आर्द्रता वाली वायु आ जाती है। इससे वाष्पीकरण की प्रक्रिया फिर प्रारम्भ हो जाती है और तब तक होती रहती है जब तक संतृप्त वायु पवन द्वारा हटायी जाती रहती है।

(v) बादलों का आवरण : मेघाच्छादन सौर विकिरण में अवरोध डालता है और किसी स्थान की वायु के तापमान को प्रभावित करता है। इस प्रकार यह अप्रत्यक्ष रूप से वाष्पीकरण प्रक्रिया को नियंत्रित करता है।

यह रोचक तथ्य है कि एक ग्राम जल को जलवाष्प में बदलने के लिये लगभग 600 कैलोरी ऊष्मा की आवश्यकता होती है। एक ग्राम जल के तापमान को 10^0 से बढ़ाने में जो ऊष्मा ऊर्जा खर्च होती है उसे कैलोरी कहते हैं। तापमान में बिना परिवर्तन किये जब जल द्रव अवस्था से गैसीय अवस्था में बदलता है या जब वह ठोस (बर्फ) अवस्था से द्रव (जल) अवस्था में बदलता है तो इस क्रिया में जो ऊष्मा ऊर्जा खर्च होती है, उसे गुप्त ऊष्मा कहते हैं। यह एक प्रकार की छिपी हुई ऊष्मा होती है। इसका प्रभाव तापमापी पर दिखाई नहीं देता। जब जलवाष्प जल की नन्हीं–नन्हीं बूँदों या बर्फ के कणों में बदलती है तो यह गुप्त ऊष्मा वायु में छोड़ दी जाती है। वायुमंडल में छोड़े जाने वाली यह गुप्त ऊष्मा मौसम परिवर्तनों के लिये ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत बनती हैं।

वाष्पोत्सर्जन एक विशिष्ट प्रक्रिया है जिसमें वनस्पतियों के पत्तों एवं उसके तनों द्वारा जल वाष्प के रूप में परिवर्तित होता है। किसी क्षेत्र से वाष्पीकरण तथा वाष्पोत्सर्जन द्वारा संयुक्त रूप से हुए जल के ह्रास को वानस्पतिक–वाष्पोत्सर्जन कहते हैं।

- जल से जलवाष्प में बदलने की प्रक्रिया को वाष्पीकरण कहते हैं।
- वाष्पीकरण की दर, जल की उपलब्धता, तापमान, वायु की शुष्कता, पवन तथा मेघाच्छादन द्वारा नियंत्रित होती है।
- तापमान में बिना परिवर्तन किये जब जल द्रव अवस्था से गैसीय अवस्था में बदलता है या जब वह ठोस (बर्फ) अवस्था से द्रव (जल) अवस्था में बदलता है तो इस क्रिया में जो ऊष्मा ऊर्जा खर्च होती है, उसे गुप्त ऊष्मा कहते हैं।

12.4 संघनन

संघनन वह प्रक्रिया है जिसमें वायुमंडलीय जलवाष्प जल या बर्फ के कणों में बदलती है। यह वाष्पीकरण के ठीक विपरीत प्रक्रिया है। जब किसी संतृप्त वायु का तापमान ओसांक से नीचे गिरता है तो वह वायु अपने अन्दर उतनी आर्द्रता धारण नहीं कर सकती जितनी वह पहले धारण किये हुये थी। अतः आर्द्रता की अतिरिक्त मात्रा, तापमान (जिस पर संघनन होता है) के अनुसार जल की सूक्ष्म बूँदों या बर्फ के कणों में बदल जाती है।

(क) संघनन की प्रक्रिया

वायु का तापमान दो स्थितियों में कम होता है। एक तो तब जब स्वतंत्र रूप से बहती वायु किसी अधिक ठंडी वस्तु के संपर्क में आती है। दूसरी स्थिति में जब वायु ऊँचाई की ओर उठती है। संघनन धुँआ, नमक तथा धूलकणों के चारों ओर होता है; क्योंकि ये कण जलवाष्प को अपने चारों ओर संघनित होने के लिए आकर्षित करते हैं। इन कणों को आर्द्रता ग्राही केन्द्रक कहते हैं। जब किसी वायु की सापेक्ष आर्द्रता अधिक होती है, तो थोड़ी सी ठंड होने पर ही तापमान ओसांक से नीचे आ जाता है। लेकिन, जब किसी वायु की सापेक्ष आर्द्रता कम होती है तथा वायु का तापमान अधिक होता है तो

टिप्पणी

उस वायु के तापमान को ओसांक से नीचे अधिक ठण्ड होने पर ही लाया जा सकता है। इस प्रकार संघनन की गति व मात्रा वायु की सापेक्ष आर्द्रता तथा उसके ठण्डा होने की दर पर निर्भर करती है।

- संघनन जलवाष्प के छोटे–छोटे जलकणों या हिमकणों में बदलने की प्रक्रिया है।
- संघनन तब होता है जब किसी वायु का तापमान ओसांक से कम होता है या नीचे गिरता है तथा यह वायु की सापेक्ष आर्द्रता तथा ठण्डे होने की दर पर निर्भर करता है।

(ख) संघनन के रूप

संघनन दो परिस्थितियों में होता है: प्रथम, जब ओसांक हिमांक बिन्दु या 0^0 से. से कम होता है तथा दूसरी स्थिति में तब जब यह हिमांक बिन्दु से अधिक होता है। इस प्रकार, संघनन के रूपों को दो वर्गों में रखा जा सकता है:–

(i) ओसांक के हिमांक बिन्दु से नीचे तापमान होने पर बनते हैं– पाला, हिम तथा कुछ प्रकार के बादल।

(ii) ओस, धुन्ध, कोहरा, कुहासा तथा कुछ प्रकार के बादल ओसांक के हिमांक बिन्दु से ऊँचे तापमान पर बनने वाले रूप हैं।

संघनन के रूपों को स्थान के आधार पर भी वर्गीकृत किया जा सकता है। उदाहरण के लिए धरातल पर या प्राकृतिक पदार्थों जैसे घास व पेड़–पौधों की पत्तियों पर, भूतल के पास वाली वायु में अथवा क्षोभमण्डल में कुछ ऊँचाइयों पर।

(i) ओस : जब वायुमण्डलीय नमी संघनित होकर जल बिन्दुओं के रूप में ठोस पदार्थों के ठण्डे धरातल जैसे घास, पेड़–पौधों की पत्तियों तथा पत्थरों पर जमा हो जाती है तो उसे ओस कहते हैं। ओस के रूप में संघनन तब होता है जब आकाश साफ हो, हवा न चल रही हो तथा ठण्डी रातों में वायु की सापेक्ष आर्द्रता अधिक हो। इन दशाओं में पार्थिव विकिरण अधिक तीव्रता से होता है तथा ठोस पदार्थ इतने ठण्डे हो जाते हैं कि उनके संपर्क में आने वाली वायु का तापमान ओसांक से नीचे गिर जाता है। फलस्वरूप, वायु की अतिरिक्त आर्द्रता इन पदार्थों पर जल बिन्दुओं के रूप में जमा हो जाती है। ओस तब बनती है जब ओसांक हिमांक से अधिक होता है। ओस बनने की प्रक्रिया को देखा जा सकता है। जब रेफ्रिजेरेटर में रखी पानी की बोतल से एक गिलास में पानी डालने से गिलास की ठण्डी बाहरी सतह उसके पास की वायु के तापमान को ओसांक से नीचे गिरा देती है, जिससे वायु की अतिरिक्त नमी गिलास की सतह पर छोटी–छोटी बूंदों के रूप में जमा हो जाती है।

(ii) पाला : ऊपर बताई गई परिस्थिति में जब ओसांक हिमांक बिन्दु के नीचे होता है तो अतिरिक्त नमी बर्फ के अति सूक्ष्म कणों में बदल जाती है। इसे पाला कहते हैं। इस प्रक्रिया में वायु की नमी प्रत्यक्ष रूप में बर्फ के छोटे–छोटे कणों में बदल जाती है। संघनन का यह रूप खेतों में खड़ी फसलों जैसे आलू, मटर, अरहर, चना आदि के लिये हानिकारक होता है। यह सड़क यातायात के लिये भी कठिनाई पैदा करता है।

(iii) धुंध और कोहरा : जब संघनन पृथ्वी–तल के निकट की वायु में छोटे–छोटे जल बिन्दुओं के रूप में होता है और ये जल बिन्दु वायु में तैरते रहते हैं, तो इसे धुंध कहते हैं। धुंध में दृश्यता एक किलोमीटर से अधिक और दो किलोमीटर से कम होती है। लेकिन जब दृश्यता एक किलोमीटर से कम होती है तो संघनन का यह रूप कोहरा कहलाता है।

(iv) धूम-कोहरा : धूम–कोहरा एक विशेष प्रकार का कोहरा है जो धुँआ, धूल, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाईऑक्साइड और अन्य धुओं द्वारा प्रदूषित कर दिया जाता है। धूम–कोहरा बड़े–बड़े नगरों और औद्योगिक केन्द्रों में अक्सर पाया जाता है। इसका लोगों की आँखों तथा श्वसन क्रिया पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

(v) बादल : वायुमण्डल में तैरते हुए हम जल बिन्दुओं, बर्फ के कणों अथवा विभिन्न आकार के धूल कणों के साथ दोनों के मिश्रित झुंड को बादल कहते हैं। एक बादल में 060.01 से लेकर 0.02 मि.मि. के लाखों कण होते हैं। 10 लाख कणों के बादल में इसके मात्र 10वें भाग के बराबर जल या बर्फ के कण होते हैं। बादलों को सामान्यतया उनके रूप या आकृति तथा ऊँचाई के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। इन दोनों विशेषताओं को मिलाने से बादलों को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है:

निम्न मेघ : ये बादल धरातल से 2000 मीटर की ऊँचाई तक बनते हैं। स्तरीय मेघ इस परिवार का प्राथमिक मेघ हैं जो निम्न परन्तु धरातल से ऊपर कुहरे के समान पर्तों की आकृति वाला होता है। स्तरीय कपासी मेघ निम्न भूरी पर्तों वाला गोलाकार होता है। यह पक्तियों, झुंड या लहरदार रूप में व्यवस्थित होता है। वे बादल जो ऊर्ध्व रूप में विकसित होते हैं इनको दो भागों में विभाजित कर सकते हैं:– कपासी और कपासी वर्षा मेघ कपासी मेघ सघन, गुम्बदाकार एवं सपाट आधार वाले होते हैं। ये ही बढ़कर कपासी वर्षा वाले मेघ बन जाते हैं। इनका ऊर्ध्व मुखी विकास बादल के नीचे स्थित ऊर्ध्व तरंग की शक्ति एवं बादल बनते समय छोड़ी गई गुप्त उष्मा की मात्रा के ऊपर निर्भर करता है।

कपासी वर्षा मेघ से ठीक नीचे से देखने पर पूरा आकाश बादल से भरा दिखाई देता है तथा वर्षा स्तरीय (Nimbo stratus) मेघ की तरह दिखता है। निम्बस (Nimbus/Nimbo) शब्द का अर्थ उस मेघ से होता है जिससे तेज वर्षा होती है। यह लेटिन की भाषा से लिया गया है।

टिप्पणी

मध्यम मेघ– ये बादल 2000 से 6000 मीटर की ऊँचाई के मध्य बनते हैं। इस वर्ग में उच्च कपासी मेघ (Alto-cumulus) एवं उच्च स्तरी मेघ (Alto-stratus) शामिल हैं।

उच्च मेघ– इन बादलों का निर्माण 6000 मीटर से अधिक ऊँचाई पर होता है। इनमें पक्षाभ (Cirrus), पक्षाभ स्तरी (Cirro-stratus) व पक्षाभ कपासी (Cirro-cumulus) मेघ शामिल हैं। (देखें चित्र 12.2)

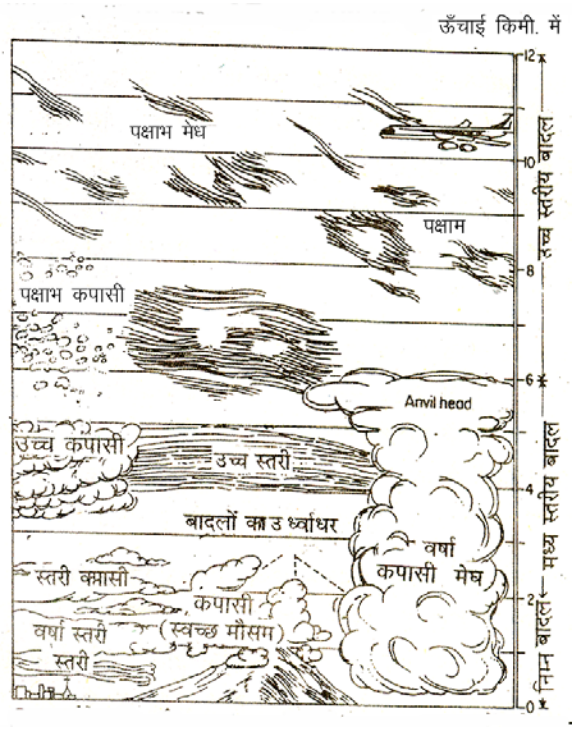

चित्र 12.2 ऊँचाई तथा आकृति के अनुसार बादलों के प्रकार

- ओस, पाला, धुंध, कोहरा, धूम–कोहरा तथा बादल संघनन के रूप हैं।
- पाला तथा कुछ प्रकार के बादल तब बनते हैं जब संघनन हिमांक से नीचे तापमान पर होता है।
- बादलों को उनकी आकृति तथा ऊँचाई के आधार पर तीन वर्गों में बाँटा जाता है।

पाठगत प्रश्न 12.2

1. वाष्पीकरण की दर को प्रभावित करने वाले पाँच कारकों की सूची बनाइये:–

   (क) _____ (ख)_____ (ग)_____ (घ)_____ (ङ)_____

टिप्पणी

2. ठोस पदार्थों पर बनने वाले संघनन के दो रूपों के नाम बताइयेः–

   (क)_____ (ख)_____

3. विश्व के अधिकांश भागों में भूपृष्ठ के पास वाली वायु में बनने वाले संघन के दो रूपों के नाम बताइयेः

   (क)_____ (ख)_____

4. निम्न में से प्रत्येक के लिये भौगोलिक शब्द बताइयेः–

   (क) जल के जलवाष्प में बदलने की प्रक्रिया

   _____

   (ख) जलवाष्प को द्रव या ठोस अवस्था में बदलने की प्रक्रिया

   _____

   (ग) जल बिन्दुओं या हिमकणों का वायु में कुछ ऊँचाई पर झूलता हुआ समूह

   _____

   (घ) संवहन के द्वारा बने तथा ऊन की गांठों जैसी आकृति वाले बादल

   _____

   (ङ) बादल जिनसे अधिकांशतः वर्षा होती है

   _____

12.5 वर्षण

जब जल तरल (जल बिन्दुओं) या ठोस (हिमकणों) रूप में धरातल पर गिरता है तो उसे वर्षण कहते हैं। वायु में संघनन की सतत प्रक्रिया के परिणामस्वरूप जल बिन्दुओं या हिम कणों का भार अधिक व आकार बड़ा हो जाता है तथा वे वायु में तैरते हुये रूक नहीं पाते तो पृथ्वी के धरातल पर गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे गिरने लगते हैं।

वर्षण के रूप

पृथ्वी पर वर्षण कई रूपों में होता है जैसे जल की बूंदों, हिमलव व ठोस बर्फ या ओला तथा कभी–कभी एक साथ जल की बूदों व ओले के रूप में। वर्षण का रूप अधिकाशतः संघनन की विधि व तापमान पर निर्भर करता है। वर्षण के अनेक रूप हैंः–

(i) फुहार तथा वर्षा : जब समान आकार की अत्यन्त छोटी–छोटी बूदें जिनका व्यास 0.5 मि.मि. से कम होता है धरातल पर गिरती हैं तो उसे फुहार कहते हैं। जब जल की छोटी-छोटी बूदें मिलकर बड़ी बूदों के रूप में धरातल पर गिरती हैं तो उसे वर्षा कहते हैं।

टिप्पणी

(ii) हिमपात : जब संघनन हिमांक (-0^0 से.) से नीचे तापमान पर होता है तो वायुमण्डलीय आर्द्रता हिमकणों में बदल जाती है। ये छोटे–छोटे हिमकण मिलकर हिमलव बनाते हैं। जो बड़े और भारी होकर धरातल पर गिरने लगते हैं। वर्षण के इस रूप को हिमपात कहते हैं। पश्चिमी हिमालय, मध्य व उच्च अक्षांशीय प्रदेशों में शीत काल में सामान्यतया हिमपात होता है।

(iii) सहिम वर्षा : सहिम वर्षा जमी हुई वर्षा है। यह तब होती है जब वायु की ठंडी परत से गुजरती हुई पानी की बूदें जमकर ठोस होकर धरातल पर गिरती हैं। सामान्यतया यह पानी की बूंदों तथा छोटे–छोटे ठोस बर्फ के गोलियों का मिश्रित रूप है।

(iv) ओला पात : जब बर्फ का टुकड़ा या छोटा गोला (Hailstones) जिसका व्यास 5 से 50 मि.मी. तक होता है, अलग–अलग या सम्मिलित होकर विभिन्न आकारों के पिण्ड के रूप में धरातल पर गिरता है तो उसे ओला पात कहते हैं। ओला पारदर्शी एवं पारभासी बर्फ के अदल–बदलकर बने सतह का बना होता है।

- वायुमण्डलीय आर्द्रता का संघनित होकर धरातल पर गिरने को वर्षण कहते हैं।
- पानी की छोटी–छोटी तथा बड़ी–बड़ी बूंदों के रूप में होने वाले वर्षण को क्रमशः फुहार तथा वर्षा कहते हैं।
- जब वर्षण बर्फ के बड़े–बड़े गोलाकार टुकड़ों में होता है तो उसे ओला पात कहते हैं।

12.6 वर्षा के प्रकार

हम जानते हैं कि जब आर्द्रता से युक्त वायुराशि आकाश में अधिक ऊँचाइयों की ओर चढ़ती है तो ठंडी होकर उसका तापमान नीचे गिरता है। ऐसा होने पर जब वायु का तापमान ओसांक के नीचे गिर जाता है तो संघनन और वर्षण होता है। प्रकृति में किसी वायु राशि को मुख्यतः तीन प्रकार से ऊपर उठने के लिये बाध्य होना पड़ता है और प्रत्येक परिस्थिति में होने वाले वर्षण या वर्षा की अपनी–अपनी विशेषतायें होती हैं।

(क) संवहनीय वर्षा : उष्णकटिबन्ध में पृथ्वी के अत्याधिक गर्म होने से ऊर्ध्वाधर वायु धाराएँ पैदा होती है। ये वायु धारायें गर्म–आर्द्र वायु को वायुमण्डल के उच्च स्तरों तक उठा देती हैं। जब इस प्रकार की आर्द्र वायु का तापमान ओसांक से नीचे लगातार गिरता है तो बादल बनते हैं। ये बादल बिजली की चमक व गरज के साथ वर्षा करते हैं। इस प्रकार की वर्षा को संवहनीय वर्षा कहते हैं। इस प्रकार की वर्षा विषुवतीय प्रदेशों में प्रायः प्रतिदिन दोपहर के बाद होती है। (देखिए चित्र 12.3)

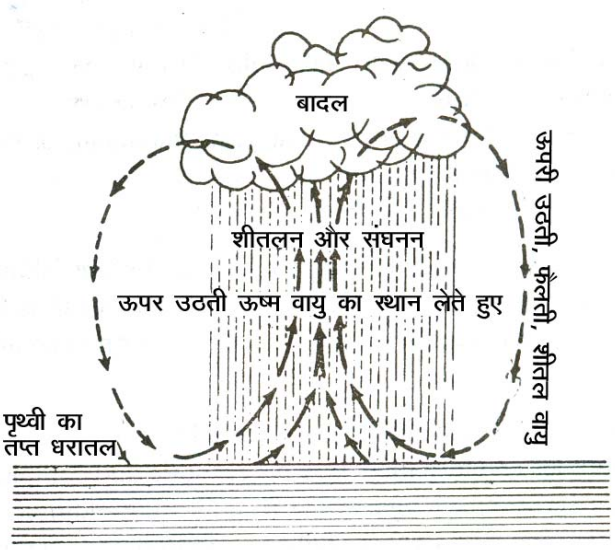

चित्र 12.3 संवहनीय वर्षा

(ख) पर्वतकृत वर्षा : जब गर्म आर्द्र पवनों के मार्ग में कोई पर्वत श्रेणी अवरोध उपस्थित करती है तो उन्हें बाध्य होकर ऊपर उठना पड़ता है। ऊपर उठती हुई ये आर्द्र पवनें ठंडी होने लगती हैं। जब उनका तापमान ओसांक से नीचे गिरता है तो बादल बनते हैं। इन बादलों से पवनाभिमुख ढालों के विस्तृत भागों में वर्षा होती है। इस प्रकार की वर्षा को पर्वतकृत वर्षा कहते हैं। यद्यपि जब ये पवनें पर्वतीय श्रेणी को पार कर दूसरी ओर पवनविमुख ढालों पर उतरती हैं तो गर्म हो जाती हैं और बहुत कम वर्षा करती हैं। पवनविमुख ढालों की ओर के क्षेत्रों को वृष्टि छाया क्षेत्र कहते हैं। (देखिये चित्र 12.4) भारत के मेघालय प्रदेश की खासी पहाड़ी के दक्षिणी सीमांत पर स्थित चेरापूंजी, पर्वतकृत वर्षा का एक प्रसिद्ध उदाहरण है।

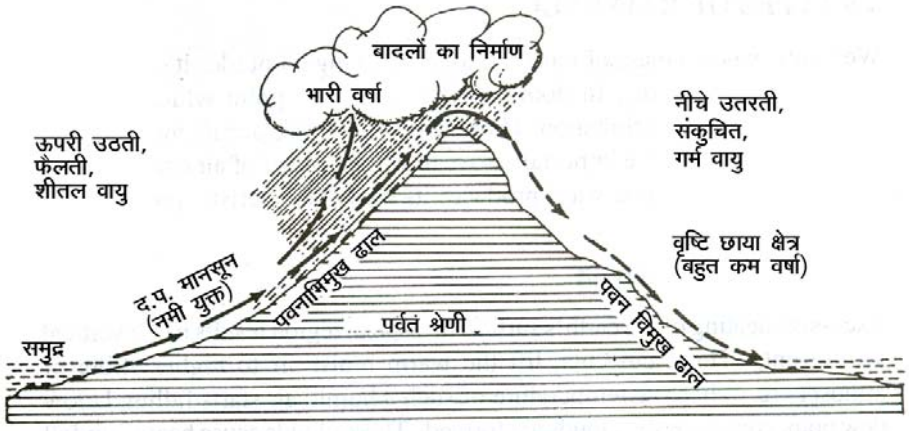

चित्र 12.4 पर्वतकृत वर्षा

(ग) **अभिसरण या चक्रवातीय वर्षा :** अभिसरण वर्षा की उत्पत्ति तब होती है जब वायु तरंग अभिसरित होकर उठती हैं। एक कटिबन्धीय क्षेत्रों में जब विपरीत विशेषताओं वाली वायु राशियाँ मिलती हैं तो उनमें लगभग उर्ध्वाधर उत्थान होता है जिससे संवहन की क्रिया होती है। यह संवहन की क्रिया बार–बार वाताग्रों के सहारे होती है। जहाँ संबंधित वायुराशियों का तापमान काफी मिला होता है। वाताग्र के सहारे भाप के मिलने से प्रायः संघनन की क्रिया होती है। जिसके फलस्वरूप वर्षा होती है। जब भिन्न घनत्व और तापमान की दो बड़ी वायु राशियां मिलती हैं तो गर्म आर्द्र वायुराशि ठंडी वायुराशि के ऊपर चढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में गर्म वायुराशि संघनित होकर बादल बनाती हैं जो विस्तृत रूप में वर्षा करते हैं। यह वर्षा बिजली की चमक और गरज के साथ होती है। इस प्रकार की वर्षा को वाताग्री वर्षा भी कहते हैं। यह वर्षा गर्म और शीत दोनों वाताग्रों से होती है (चित्र 12.5)। वाताग्री वर्षा स्थिर और पूरे दिन या कई दिनों तक होती है।

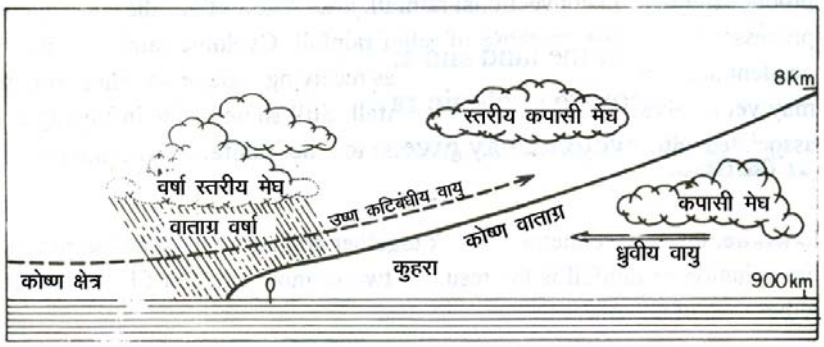

(अ) गर्म वाताग्र से सम्बद्ध वर्षा

(ब) शीत वाताग्र से सम्बद्ध वर्षा

चित्र 12.5 चक्रवातीय वर्षा

वर्षा के इन तीनों प्रकारों में आर्द्र वायुराशि का ठंडा होना बहुत जरूरी है। संवहनीय वर्षा में गर्म–आर्द्र वायु के ऊपर उठने के बाद की क्रियाएं पर्वतकृत वर्षा के समान हैं। प्रकृति में ये तीनों विधियां एक साथ कार्य करती हैं। वास्तव में पृथ्वी का ज्यादातर वर्षण या वर्षा किसी एक कारण की अपेक्षा दो या अधिक कारणों का परिणाम होता है।

टिप्पणी

- उत्पत्ति की तीन विधियों के आधार पर वर्षा को संवहनीय, पर्वतकृत तथा अभिसरण वर्षा प्रकारों में बाँटा जाता है।

पाठगत प्रश्न 12.3

1. वर्षण के विविध रूपों के नाम बताइए।

   _____

2. वर्षा के तीन प्रकारों के नाम बताइए:

   (क) _____ (ख) _____ (ग)_____

3. निम्न में से प्रत्येक के लिये भौगोलिक शब्द दीजिए:

   (क) वायुमंडलीय आर्द्रता का पृथ्वी–तल पर गिरना _____

   (ख) वर्षा की जमी हुई बूँदों और पिघली हुई हिम के जल का साथ–साथ गिरना _____

   (ग) विभिन्न विशेषताओं की दो वायुराशिओं का मिलन तल _____

   (घ) बर्फ की गोलियों के रूप में वर्षण _____

   (ङ) अत्यधिक गर्मी से ऊपर उठी हुई वायु द्वारा होने वाली वर्षा _____

4. नीचे सही तथा गलत कथन दिये गये हैं। सही कथन पर (√) और गलत कथन पर (X) लिखिये:

   (क) वर्षण एक प्रक्रिया है जिसमें जलवाष्प द्रव या ठोस अवस्था में बदलती है।

   (ख) हिमलवों के रूप में होने वाले वर्षण को हिमपात कहते हैं।

   (ग) पर्वतों के पवनविमुख ढालों पर बहुत कम वर्षा होती है।

   (घ) पर्वतकृत वर्षा वायु के अत्यधिक गर्म होकर ऊपर उठने के कारण होती है।

12.7 वर्षण का वितरण

वर्षण का प्रादेशिक वितरण संसार में असमान है। संसार में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 97.5 से.मी. होती है। लेकिन स्थलीय भाग महासागर की अपेक्षा कम वर्षा प्राप्त करते हैं। स्थलीय भागों में वार्षिक वर्षण में काफी अन्तर देखने को मिलता है। पृथ्वी के धरातल के विभिन्न स्थानों पर भिन्न ऋतुओं में विभिन्न मात्रा में वर्षण होता है।

टिप्पणी

वर्षण के वितरण के प्रमुख लक्षणों को भूमण्डलीय दाब व पवन पेटियों, स्थल व जलीय भागों के वितरण तथा स्थलाकृतिक लक्षणों की मदद से स्पष्ट किया जा सकता है। वर्षण के प्रादेशिक व मौसमी अन्तरों के लिए उत्तरदायी कारणों से संबंधित किन्हीं निष्कर्षों पर पहुँचने से पहले, आइए सबसे पहले इसके प्रादेशिक व मौसमी वितरण के रूपों का अवलोकन करें।

(क) प्रादेशिक अन्तर

वर्षण की औसत वार्षिक मात्रा के आधार पर संसार में हम निम्न वर्षण प्रदेशों की पहचान कर सकते हैं। (देखिये चित्र 12.6)

(i) **भारी वर्षण के प्रदेश :** जिन प्रदेशों में 200 से.मी. से अधिक वार्षिक वर्षण होता है, उन्हें इस वर्ग में सम्मिलित किया जाता है। इनमें विषुवतीय, उष्ण कटिबन्ध के तटीय क्षेत्र तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के पश्चिमी तटीय प्रदेश शामिल हैं।

(ii) **मध्यम वर्षण के प्रदेश :** जिन प्रदेशों में 100 से 200 से.मी. वार्षिक वर्षण होता है, वे इस वर्ग में आते हैं। ये प्रदेश अति वर्षण प्रदेशों के साथ लगे हुए प्रदेश हैं। उपोष्ण कटिबन्ध के पूर्वी तटीय प्रदेश तथा गर्म शीतोष्ण कटिबन्ध के तटीय प्रदेश इस वर्ग के प्रदेशों में शामिल हैं।

(iii) **कम वर्षण के प्रदेश :** इस वर्ग में वे प्रदेश आते हैं जहाँ वार्षिक वर्षण 50 से.मी. से 100 से.मी. तक होता है। ये प्रदेश उष्ण कटिबन्धों के आन्तरिक भागों तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के पूर्वी आन्तरिक भागों में स्थित है।

(iv) **अति अल्प वर्षण के प्रदेश :** वृष्टि छाया क्षेत्रों या पर्वत श्रेणियों के पवन विमुख ढ़ालों पर, महाद्वीपों के आन्तरिक भागों, अयन वृत्तों पर स्थित महाद्वीपों के पश्चिमी सीमान्त क्षेत्रों और उच्च आक्षांशों में वार्षिक वर्षण 50 से.मी. से कम होता है। इन प्रदेशों में, उष्ण, शीतोष्ण तथा शीत कटिबन्धीय मरूस्थल भी सम्मिलित हैं।

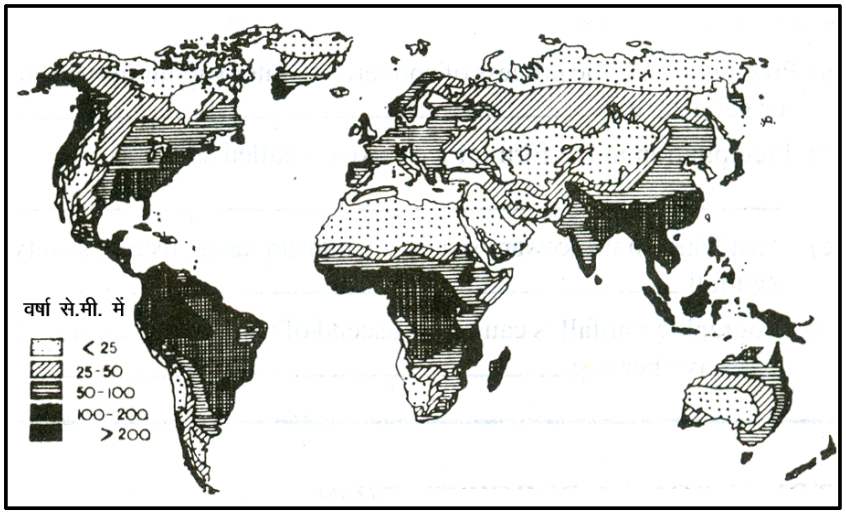

चित्र 12.6 संसार में औसत वर्षण का वितरण

आइये अब संसार के मानचित्र में औसत वर्षण के वितरण का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें (देखिये चित्र 12.6)। आप निम्न निष्कर्षों पर पहुँचेंगे।

(1) विषुवतीय प्रदेशों में सबसे अधिक वर्षण होता है जो ध्रुवों की ओर क्रमशः कम होता जाता है।

(2) समुद्र तटीय प्रदेशों में अधिक वर्षण होता है तथा महाद्वीपों के आन्तरिक भागों की ओर क्रमशः कम होता जाता है।

(3) विषुवतीय प्रदेश, उष्ण कटिबन्धीय पूर्वी तटीय क्षेत्र तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय पश्चिमी तटीय प्रदेशों में अधिक वर्षण होता है।

(4) उच्च भूमियों के पवनाभिमुख ढालों पर भारी वर्षण होता हैः जबकि पवनविमुख ढालों पर बहुत कम।

(5) गर्म धाराओं के समीपवर्ती तटीय भागों की तुलना में ठण्डी धाराओं के समीपवर्ती तटीय भाग अधिक शुष्क होते हैं।

(6) अयनवृत्तों पर स्थित महाद्वीपों के पश्चिमी सीमान्त क्षेत्रों तथा ध्रुवीय प्रदेशों में वर्षण बहुत कम होता हैं। सन्मार्गी पवनों का इन क्षेत्रों में पहुँचते–पहुँचते शुष्क हो जाना तथा ध्रुवीय पवनों का ठण्डा व शुष्क होना इसके प्रमुख कारण हैं।

(ख) ऋतुवत् अन्तर

संसार के भिन्न भागों में वर्षण के वितरण में पाये जाने वाले प्रादेशिक अन्तर औसत वार्षिक वर्षण पर आधारित है। इनसे मुख्यतः उन प्रदेशों के वर्षण के स्वरूप का सही चित्रण नहीं होता जहाँ वर्षण की मात्रा में ऋतुवत अन्तर एक सामान्य लक्षण हैं, उदाहरण के लिए मरूस्थलीय, अर्द्ध मरूस्थलीय या उपार्द्र प्रदेश। अतः संसार में वर्षण के ऋतुवत् अन्तरों का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है। इससे संबंधित तथ्य इस प्रकार हैं–

(i) विषुवतीय प्रदेशों तथा शीतोष्ण भूमियों के पश्चिमी भागों में वर्षण वर्ष भर होता है। विषुवतीय क्षेत्रों में जहाँ संवहनीय वर्षा होती है और शीतोष्ण प्रदेश में पछुआ पवनों द्वारा चक्रवातीय एवं पर्वतकृत वर्षा होती है।

(ii) संसार के लगभग दो प्रतिशत भागों में वर्षण केवल शीतकाल में होता है। इनमें संसार के भूमध्य सागरीय प्रदेश तथा भारत का कोरोमण्डल तट शामिल है। वायुदाब कटिबन्धों तथा भूमण्डलीय पवनों के ऋतु के अनुसार उत्तर–दक्षिण खिसकने से, भूमध्य सागरीय प्रदेशों में उपोष्ण उच्च दाब क्षेत्र तथा सन्मार्गी पवनों की उपस्थिति के कारण गर्मियों में वर्षा नहीं होती, क्योंकि सन्मार्गी पवनें महाद्वीपों के इन पश्चिमी भागों में पहुँचते–पहुँचते शुष्क हो जाती हैं।

(iii) संसार के शेष भागों में वर्षण केवल गर्मियों में होता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि संसार के अधिकांश भागों में वर्षण में ऋतुवत अन्तर स्पष्ट रूप में अनुभव किये जाते हैं। इससे वर्षा जल का कुछ भाग बर्बाद हो जाता है। हमारे देश की भी कुछ ऐसी ही कहानी है।

टिप्पणी

वर्षण का ऋतुवत् वितरण हमें उसकी प्रभावी क्षमता को आंकने में मदद करता है। उदाहरण के लिये उच्च अक्षांशीय सीमित वर्धन काल वाले प्रदेशों में होने वाला हल्का वर्षण, निम्न अक्षांशीय प्रदेशों में भारी वर्षण की तुलना में अधिक प्रभावी होता है। इसी प्रकार, ओस, धुंध व कोहरे के रूप में होने वाला वर्षण भारत में मध्यवर्तीय भागों तथा कालाहारी मरूस्थलों में खड़ी हुई फसलों व प्राकृतिक वनस्पति पर प्रशंसनीय प्रभाव डालता है।

(ग) वर्षा के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक

(i) नमी की आपूर्ति : किसी प्रदेश में वर्षा की मात्रा को निर्धारित करने वाला महत्वपूर्ण कारक वायुमंडल को मिलने वाली नमी की मात्रा है। ऊष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में वाष्पीकरण सर्वाधिक होता है। अतः वायुमंडल को इस क्षेत्र से सबसे ज्यादा नमी की आपूर्ति होती है। तटीय भागों में आन्तरिक भागों की अपेक्षा अधिक नमी मिलती है। ध्रुवीय प्रदेशों में वाष्पीकरण बहुत कम है, अतः वहाँ वर्षा भी कम है।

(ii) पवनों की दिशा : सन्मार्गी एवं पछुआ पवनों की पेटियों में पवन दिशा महत्वपूर्ण है। समुद्र से स्थल की ओर चलने वाली पवनें वर्षा करती हैं। स्थल से चलने वाली पवनें शुष्क होती हैं। उच्च अक्षांशों से निम्न अक्षांशों की ओर चलने वाली पवनें गर्म हो जाती हैं, अतः बहुत कम वर्षा करती हैं; जबकि निम्न अक्षांशों से उच्च अक्षांशों की ओर चलने वाली पवनें ठंडी हो जाती हैं और वर्षा करती हैं। उपोष्ण मरूस्थलों में बहुत कम वर्षा होती हैं; क्योंकि वहाँ से पवनें बाहर की ओर चलती हैं।

(iii) महासागर धारायें : गर्म धाराओं के ऊपर की वायु गर्म और आर्द्र होती है। अतः यह वर्षा करती है। इसके विपरीत ठंडी धाराओं के ऊपर की वायु ठंडी और शुष्क होती है। अतः उससे बहुत कम वर्षा होती है।

(iv) पर्वतों की उपस्थिति : आर्द्र पवनों के मार्ग में पर्वतों के आने से पवनाभिमुख ढालों पर अधिक वर्षा और पवन विमुख ढालों पर कम वर्षा होती है।

(v) वायुदाब पेटियाँ : वायुदाब पेटियों का पवन पेटियों के साथ सीधा संबंध है। निम्न वायुदाब क्षेत्र वर्षा को आकर्षित करते हैं और उच्च वायुदाब क्षेत्र वर्षा विहीन होते हैं।

- संसार के विभिन्न भागों में वर्षण के प्रादेशिक व ऋतुवत् वितरण में स्पष्ट अन्तर पाये जाते हैं।
- वर्षा के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक हैं– नमी की आपूर्ति, पवनों की दिशा, महासागर धारायें, पर्वतों की उपस्थिति और वायुदाब पेटियाँ।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 12.4

1. भारी वर्षा के प्रमुख क्षेत्रों के नाम बताइए।

   _____

2. अति अल्प वर्षा के प्रमुख क्षेत्रों के नाम बताइए।

   _____

3. वर्ष भर वर्षण पाने वाले प्रदेशों के नाम बताइए।

   _____

4. केवल शीत ऋतु में वर्षा पाने वाले प्रदेशों के नाम बताइए।

   _____

5. वर्षा के वितरण को प्रभावित करने वाले पाँच कारकों के नाम बताइये।

   (क)_____ (ख)_____ (ग)_____ (घ)_____ (ङ)_____

आपने क्या सीखा

जलवाष्प वायुमण्डल का अत्यधिक परिवर्तनशील तथा महत्वपूर्ण अवयव है। यह पृथ्वी पर ऊष्मा संतुलन, वायुमण्डलीय घटनाओं तथा पेड़–पौधों व जीव–जन्तुओं के जीवनयापन के लिए उत्तरदायी है। वायुमण्डल में विद्यमान जलवाष्प को आर्द्रता कहते हैं। इसे निरपेक्ष आर्द्रता तथा सापेक्ष आर्द्रता के रूप में व्यक्त किया जाता है। इनमें से सापेक्ष आर्द्रता अधिक विश्वसनीय माप है। जलवाष्प वायुमण्डल में वाष्पीकरण की प्रक्रिया द्वारा पहुँचती है। किसी वायु का तापमान दिये गये आयतन में उसके द्वारा धारण की जाने वाली नमी की मात्रा को नियंत्रित करता है। वायु, जो अपनी पूर्ण क्षमता तक नमी धारण करती है, संतृप्त वायु कहलाती है तथा तापमान जिस पर वह संतृप्त होती है, ओसांक कहलाता है। जलवाष्प के द्रव या ठोस अवस्था में बदलने की प्रक्रिया को संघनन कहते हैं। यह प्रक्रिया तब प्रारम्भ होती है, जब किसी वायु का तापमान ओसांक के नीचे गिरता है। पृथ्वी सतह पर संघनन ओस, धुंध, कोहरा तथा उच्च स्तर पर बादलों के रूप में होता है।

वायुमण्डलीय नमी का संघनित होकर धरातल पर गिरने को वर्षण कहते हैं। वर्षण तब होता है जब संघनन सतत रूप से होता है। फुहार, वर्षा, हिमपात, हिम वर्षा तथा

टिप्पणी

ओलापात वर्षण के अनेक रूप हैं। वर्षा तीन प्रकार–संवहनीय, पर्वतकृत तथा चक्रवातीय होती है।

संसार में वर्षण के वितरण में स्पष्टतः प्रादेशिक व ऋतुवत् अन्तर पाया जाता है। कुछ प्रदेशों में भारी वर्षा होती है; जबकि कुछ में बहुत कम। कुछ प्रदेशों में वर्ष भर वर्षा होती है; जबकि दूसरे प्रदेशों में केवल सर्दियों या गर्मियों में। वर्षा के वितरण को कई कारक प्रभावित करते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. वायुमण्डल में विद्यमान जलवाष्प के महत्व को समझाइए।
2. वाष्पीकरण क्या है? उन कारकों के बारे में बताइए जो वाष्पीकरण की दर को प्रभावित करते हैं। अपने उत्तर की पुष्टि के लिये उदाहरण दीजिये।
3. संघनन की प्रक्रिया और इसके रूपों को समझाइए।
4. वर्षण कैसे होता है? वर्षण के विभिन्न रूपों के बारे में बताइए।
5. अन्तर स्पष्ट कीजिएः–
   (क) वाष्पीकरण तथा संघनन
   (ख) निरपेक्ष आर्द्रता तथा सापेक्ष आर्द्रता
   (ग) संतृप्त वायु तथा असंतृप्त वायु
   (घ) वर्षा तथा वर्षण
   (ङ) सहिम वर्षा तथा ओलापात
   (च) संवहनीय तथा पर्वतकृत वर्षा
6. संसार में वर्षण के प्रादेशिक तथा ऋतुवत् वितरण का विस्तार से वर्णन कीजिए।
7. निम्न में से प्रत्येक के लिए कारण बताइएः–
   (क) विषुवतीय प्रदेशों में वर्ष भर वर्षण होता है।
   (ख) भूमध्य सागरीय प्रदेशों में वर्षा केवल शीतकाल में होती है।
   (ग) समुद्रतटीय क्षेत्रों से महाद्वीपों के पश्चिमी भागों की ओर वर्षा की मात्रा कम होती जाती है।
   (घ) महाद्वीपों के पश्चिमी भागों में उष्णकटिबन्धीय मरूस्थल पाये जाते हैं।
   (ङ) ध्रुवों की ओर वाष्पीकरण कम होता जाता है।
8. संसार के दिये गये रेखामानचित्र में निम्न को उपयुक्त चिन्हों द्वारा दिखाइए?
   (क) 200 से.मी. से अधिक वर्षण वाले दो क्षेत्र;

टिप्पणी

(ख) निम्न अक्षांशों में अति अल्प वर्षण के दो क्षेत्र;

(ग) केवल शीतकाल में वर्षण पाने वाले दो क्षेत्र;

(घ) संसार के शीत मरूस्थल।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

12.1

1. (क) द्रव (ख) ठोस (ग) गैस

2. (क) आर्द्रता (ख) निरपेक्ष आर्द्रता (ग) सापेक्ष आर्द्रता (घ) संतृप्त वायु (ङ) ओसांक

3. (क) गलत (ख) सही (ग) सही (घ) गलत (ङ) सही (च) सही (छ) गलत

12.2

1. (अ) तापमान (ख) वायु की नमी (ग) पवन (घ) मेघाच्छान्दन (ङ) जल को उपलब्धता

2. (अ) ओस (आ) पाला

3. (अ) धुंध (आ) कोहरा

4. (क) वाष्पीकरण (ख) संघनन (ग) बादल (घ) वर्षा कपासी मेघ (ङ) वर्षा स्तरी मेघ

12.3

1. फुहार, वर्षा, हिमपात, सहिम वर्षा, तथा ओला पात

2. (क) संवहनीय (ख) पर्वतकृत (ग) चक्रवातीय

3. (क) वर्षण (ख) सहिम वर्षा (ग) वाताग्र (घ) ओला पात (ङ) संवहनीय वर्षा

4. (क) गलत (ख) सही (ग) सही (घ) गलत

12.4

1. विषुवतीय, पूर्वी उपोष्ण कटिबन्धीय तथा पश्चिमी तटीय शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेश

2. अयन वृत्तों के पश्चिमी सीमान्त तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय आंतरिक भाग तथा ध्रुवीय प्रदेश

टिप्पणी

3. विषुवतीय प्रदेश तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय पश्चिमी तटीय प्रदेश

4. भूमध्य सागरीय प्रदेश

5. (क) नमी की आपूर्ति, (ख) पवनों की दिशाएं, (ग) महासागर धाराएं, (घ) पर्वतों की उपस्थिति और (ङ) वायुदाब पेटियाँ

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. अनुच्छेद 12.1 के अन्तर्गत देखिए।

2. अनुच्छेद 12.3 के अन्तर्गत देखिए।

3. अनुच्छेद 12.4 के अन्तर्गत देखिए।

4. अनुच्छेद 12.5 के अन्तर्गत देखिए।

5. संबंधित शीर्षकों के अन्तर्गत देखिए।

6. अनुच्छेद 12.7 के अन्तर्गत देखिए।

7. (क) विषुवतीय प्रदेशों में वर्ष भर उच्च तापमान रहता है, जिससे वाष्पीकरण और ऊर्ध्वाधर वायु धारायें पैदा होती हैं जो भारी संवहनीय वर्षा करती हैं

   (ख) ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की सीधी किरणें कर्क रेखा पर पड़ती हैं, जिसके प्रभाव से पछुआ पवनें उत्तरी ध्रुव की तरफ खिसक जाती हैं। इस समय भूमध्य सागरीय प्रदेश (उपोष्ण कटिबंध) उच्च वायुदाब व व्यापारिक पवनों के क्षेत्र में आ जाते हैं। व्यापारिक पवनें पश्चिमी तट तक पहुँचते–पहुँचते शुष्क हो जाती हैं। इस कारण ग्रीष्म ऋतु में भूमध्य सागरीय प्रदेशों में वर्षा नहीं होती, लेकिन शीत ऋतु में भूमध्य सागरीय प्रदेश पछुआ पवनों के प्रभाव क्षेत्र में आ जाता है क्योंकि वे दक्षिण की ओर खिसक आती हैं। समुद्र से आने के कारण ये पवनें आर्द्रता से भरी होती हैं। अतः यहाँ वर्षा करती हैं। इसीलिये यह प्रदेश केवल शीत ऋतु में ही वर्षा प्राप्त करता है।

   (ग) वर्षा–पवनें तटीय क्षेत्रों पर ही अधिक वर्षा कर देती हैं, भीतरी भागों तक पहुँचते–पहुँचते शुष्क हो जाती हैं।

   (घ) उष्ण मरूस्थल महाद्वीपों के पश्चिम तटों पर इसलिए पाये जाते हैं, क्योंकि ये क्षेत्र सन्मार्गी पवनों के अन्तर्गत आते हैं। ये पूर्वी भाग पर वर्षा करती है और पश्चिमी भागों तक पहुँचते–पहुँचते सूख जाती है।

   (ङ) तापमान के कम होने के कारण वाष्पीकरण ध्रुवों की ओर जाने पर कम हो जाता है।

8. चित्र संख्या 12.6 एवं अनुच्छेद 12.7 देखिए।

टिप्पणी

13

मौसम और जलवायु

हमने पिछले पाठों में तापमान, वायुमंडलीय दाब, पवनों और वर्षण के बारे में अध्ययन किया है। मौसम के इन तत्वों का हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए मकान जिनमें हम रहते हैं, कपड़े जो हम अपनी पसन्द के पहनते हैं और विविध प्रकार का अपनी–अपनी पसन्द का भोजन ये सब मुख्यतया मौसम एवं जलवायु दशाओं द्वारा प्रभावित होते हैं। मौसम में अचानक तथा अनपेक्षित परिवर्तन हमारे दैनिक कार्यक्रमों को अस्त–व्यस्त कर सकता है। इस पाठ में हम मौसम, ऋतु और जलवायु में अन्तर तथा किसी स्थान की जलवायु को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- मौसम और जलवायु के विभिन्न अवयवों के नाम बता सकेंगे;
- मौसम, ऋतु और जलवायु में अन्तर समझा सकेगें;
- मौसम के पूर्वानुमान की आवश्यकता स्पष्ट कर सकेगें;
- किसी स्थान या प्रदेश की जलवायु को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों की व्याख्या विशिष्ट उदाहरण सहित कर सकेगें;
- कोपेन के जलवायु वर्गीकरण को बता सकेगें।

13.1 मौसम और जलवायु

(i) मौसम

तापमान, वायुदाब, पवन, आर्द्रता तथा वर्षण मौसम और जलवायु के प्रमुख तत्व हैं। ये एक दूसरे के साथ क्रिया एवं प्रतिक्रिया करते हैं। ये तत्व पवन की दिशा

टिप्पणी

एवं गति, सूर्याताप की मात्रा मेघाच्छन्नता तथा वर्षण की मात्रा, आदि वायुमंडलीय दशाओं को प्रभावित करते हैं। इन वायुमंडलीय तत्वों को ही मौसम और जलवायु के अवयव कहा जाता है। इन अवयवों का भिन्न–भिन्न स्थानों और समयों पर अलग–अलग प्रभाव होता है। यह प्रभाव एक सीमित क्षेत्र तथा छोटी अवधि के लिए हो सकता है। हम प्रायः इस प्रभाव को मौसम के रूप में व्यक्त करते हैं, जैसे धूपवाला गर्मी, सर्दी, वर्षा, तूफान, आदि का मौसम। इनमें से मौसम का प्रत्येक रूप किसी न किसी अवयव की ओर संकेत करता है, जो किसी स्थान और समय विशेष में सर्वाधिक प्रभावशाली होता है। अतः किसी स्थान का छोटी अवधि के लिये एक या एक से अधिक जलवायु अवयवों के संदर्भ में वायुमंडल की दशा, उस स्थान का मौसम कहलाता है। एक ही समय में निकट स्थित दो स्थानों पर अलग–अलग मौसम हो सकता है।

(ii) मौसम-पूर्वानुमान

आनेवाले मौसम की किसी विधि द्वारा पहले से जानकारी होना बहुत ही महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिये आप किसी दिन लम्बी पैदल यात्रा पर जाने की योजना बनाते हैं, परन्तु आपको यह मालूम नहीं कि उस दिन वर्षा होगी अथवा नहीं। आपको पहले से ज्ञात हो जाये कि उस दिन वर्षा नहीं होगी तो आप निश्चिन्त होकर अपनी योजना को कार्यरूप दे सकते हैं। इसी प्रकार किसान, नाविक, वायुयान चालक, पर्यटक और अन्य बहुत से लोग अपने–अपने हित के लिए पहले से यह जानने में रूचि लेते हैं कि आनेवाला मौसम कैसा होगा। इसलिए समाचार पत्र, मौसम का विवरण, मौसम का पूर्वानुमान और इस जानकारी को दर्शाने वाला मानचित्र रोजाना छापते हैं। मौसम उपग्रहों की मदद से अब मौसम के पूर्वानुमान की जानकारी अधिक विश्वसनीय मिल रही है। दूरदर्शन पर मौसम की दशाओं की जानकारी रोज दी जा रही है। जब कभी चक्रवात या खतरनाक मौसम के आने की सम्भावना होती है, तो रेडियो, दूरदर्शन और समाचार पत्रों द्वारा चेतावनी दी जाती है, जिससे लोग मौसम के खतरों से अपनी जान और माल की रक्षा कर सकें।

मौसम कार्यालय सारे देश में फैली अपनी अनेक बेधशालाओं द्वारा तापमान, पवन, मेघाच्छादन, वर्षा और अन्य वायुमंडलीय घटनाओं के बारे में आंकड़े एकत्र करता है। इसी प्रकार की जानकारी गहरे समुद्र में चलने वाले जलयानों से भी प्राप्त होती है। इन आंकड़ों के विश्लेषण एवं अध्ययन द्वारा अगले 48 घंटों या एक सप्ताह के मौसम के पूर्वानुमान की जानकारी दी जाती है। यह जानकारी यूनाइटेड किंगडम जैसे देश, जहाँ मौसमी परिवर्तन बहुत जल्दी–जल्दी होते हैं, के लिये अति उपयोगी हैं।

(iii) ऋतु

आप जानते हैं कि वायुमंडलीय दशाओं में विभिन्नताओं के अनुसार वर्ष को कई

टिप्पणी

ऋतुओं में बाँटा जाता है। ऋतु वर्ष की वह विशिष्ट अवधि है, जिसमें मौसम की दशायें लगभग समान रहती हैं। ऋतु के बदलने के साथ मौसम दशायें भी बदल जाती हैं। अतः ऋतु वर्ष की वह लम्बी अवधि है, जिसमें मौसम संबंधी विशिष्ट दशायें होती हैं और जो पृथ्वी के अक्ष के झुकाव और उसके द्वारा सूर्य का परिक्रमण करने के परिणाम स्वरूप बनती हैं। प्रति वर्ष ऋतुओं का एक समान चक्र दोहराया जाता है।

शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में तीन–तीन माह की अवधि की चार ऋतुएँ मानी गई हैं। इनके नाम हैं– बसन्त, ग्रीष्म, पतझड़ और शीत। हमारे देश में तीन प्रमुख ऋतुएँ–शीत, ग्रीष्म और वर्षा हैं। भारतीय मौसमविज्ञान विभाग द्वारा चार प्रमुख ऋतुएँ मानी गई हैं। इनके नाम हैं– (1) शीत ऋतु (दिसम्बर से फरवरी); ञ(2) ग्रीष्म ऋतु (मार्च से मई); (3) आगे बढ़ते मानसून की ऋतु या वर्षा ऋतु (जून से सितम्बर) और (4) पीछे हटते मानसून की ऋतु (अक्टूबर से नवम्बर)। उत्तर भारत में परम्परागत छः ऋतुएँ मानी जाती हैं। इनके नाम हैं (1) बसन्त ऋतु (चैत्र–वैशाख या मार्च–अप्रैल); (2) ग्रीष्म ऋतु (ज्येष्ठ–आषाढ़ या मई–जून); (3) वर्षा ऋतु (श्रावण–भाद्रपद या जुलाई–अगस्त); (4) शरद् ऋतु (अश्विन–कार्तिक या सितम्बर–अक्टूबर); (5) हेमन्त ऋतु (मार्गशीष–पौष या नवम्बर–दिसम्बर) तथा (6) शिशिर ऋतु (माघ–फाल्गुन या जनवरी–फरवरी)।

विषुवत वृत्त के ऊपर सूर्य की किरणें वर्ष भर लगभग लम्बवत् पड़ती हैं। अतः विषुवतीय प्रदेशों में तापमान सारे वर्ष एक समान रहता है। इस कारण विषुवतीय प्रदेशों में कोई ऋतु नहीं होती। तटीय भागों में समुद्र का प्रभाव ऋतुओं की भिन्नता को कम कर देता है। ध्रुवीय प्रदेशों में केवल दो ऋतुएँ होती हैं–लम्बी शीत ऋतु और छोटी ग्रीष्म ऋतु।

(iv) जलवायु

किस विस्तृत क्षेत्र में वर्ष की विभिन्न ऋतुओं की औसत मौसमी दशाओं को उस क्षेत्र की जलवायु कहते हैं। औसत मौसम दशाओं की जानकारी एक बड़े क्षेत्र के अनेक वर्षों (लगभग 35 वर्ष) के एकत्र किये आंकड़ों की गणना के आधार पर की जाती है। उदाहरणार्थ राजस्थान की जलवायु गर्म और शुष्क है, केरल की उष्ण कटिबन्धीय वर्षा वाली जलवायु है, ग्रीनलैंड की शीत मरुस्थली जलवायु हैं, और मध्य एशिया की जलवायु शीतोष्ण महाद्वीपीय हैं। किसी प्रदेश की जलवायु अपेक्षाकृत स्थाई होती है।

- किसी स्थान के तापमान, वायुदाब, पवन, आर्द्रता, वर्षण, धूप, मेघाच्छादन आदि के संदर्भ में थोड़े समय की वायुमंडलीय दशा को उस स्थान का मौसम कहते हैं।
- वर्ष की वह अवधि जिसमें मौसम दशायें लगभग समान होती हैं और जो

पृथ्वी के अक्ष के झुकाव और उसके द्वारा सूर्य का परिक्रमण करने के परिणाम स्वरूप बनती हैं, को ऋतु कहते हैं।

- किसी बड़े क्षेत्र के पिछले अनेक वर्षों के औसत मौसम की दशाए, जो अपेक्षाकृत स्थाई होती हैं, को उस क्षेत्र की जलवायु कहते हैं।

मौसम और जलवायु के अन्तर को निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया गया है।

मौसम	जलवायु
1. मौसम में किसी सीमित क्षेत्र की वायुमण्डलीय दशाओं की लघु अवधि (प्रायः एक दिन या एक सप्ताह) का अध्ययन किया जाता है।	1. जलवायु में, बड़े क्षेत्र की लम्बी अवधि की मौसम संबंधी दशाओं के औसत का अध्ययन किया जाता है।
2. मौसम वायुमंडलीय तत्त्वों, जैसे तापमान अथवा आर्द्रता में से किसी एक से भी प्रभावित हो सकता है।	2. जलवायु वायुमण्डल के विभिन्न तत्त्वों के संयुक्त प्रभाव की देन है।
3. मौसम अक्सर बदलता रहता है।	3. यह लगभग स्थायी है।
4. इसका प्रभाव किसी देश के छोटे से भाग में अनुभव किया जाता है।	4. जलवायु के प्रभाव को किसी महाद्वीप के विशाल क्षेत्र में देखा जा सकता है।
5. किसी स्थान पर वर्ष में विभिन्न प्रकार के मौसमों का अनुभव किया जा सकता है।	5. किसी स्थान पर एक ही प्रकार की जलवायु होती है।

पाठगत प्रश्न 13.1

निम्न में से प्रत्येक के सामने कोष्ठकों में दिए शब्दों में से उचित शब्द चुनकर रिक्त स्थान भरिए:

1. मौसम अपने अवयवों में से _____ तत्त्व/तत्त्वों की प्रधानता पर निर्भर करता है। ((क) एक, (ख) दो, (ग) तीन, (घ) एक या एक से अधिक)

2. विषुवतीय प्रदेशों में ऋतुएँ _____ हैं।
((क) प्रमुख, (ख) चार (ग) नहीं, (घ) हमेशा बदलती रहती)

3. जलवायु में मौसम की _____ अवधि की दशाओं का अध्ययन किया जाता है। ((क) एक वर्ष (ख) लम्बी (ग) अल्पकालिक (घ) अनेक वर्षों की)

4. शुष्क ऋतु में हमारे शरीर में अनावृत्त त्वचा _____ के कारण फटने लगती है। ((क) वर्षा ऋतु, (ख) उच्च आर्द्रता, (ग) ग्रीष्म ऋतु, (घ) निम्न आर्द्रता)

टिप्पणी

5. ऋतुएँ _____ के द्वारा बनती है। ((क) समुद्री धाराएँ तथा परिक्रमण (ख) वायु राशियां तथा परिभ्रमण (ग) समुद्री धाराओं और पृथ्वी का परिभ्रमण (घ) पृथ्वी का अपने पक्ष पर झुकाव तथा उसका परिक्रमण।)

6. चार ऋतुओं (प्रत्येक तीन मास अवधि) की स्पष्ट रचना _____ कटिबन्ध/प्रदेश में दिखाई देती है। ((क) शीतोष्ण कटिबन्ध (ख) उष्ण कटिबन्ध (ग) विषुवतीय प्रदेशों (घ) शीत कटिबन्ध)

13.2 जलवायु को प्रभावित करने वाले कारक

संसार के विभिन्न प्रदेशों में तापमान, आर्द्रता एवं वर्षण में अन्तर पाया जाता है। आप जानते हैं कि ये अन्तर विभिन्न जलवायु दशाओं में रहने वाले लोगों के रहन–सहन के तौर–तरीकों को प्रभावित करते हैं। विभिन्न जलवायु दशाओं को समझने से पूर्व हमारे लिये यह जरूरी है कि हम उन सभी कारकों को जानें जो किसी स्थान या प्रदेश की जलवायु को प्रभावित करते हैं।

(क) अक्षांश अथवा विषुवत वृत्त से दूरी

विषुवत वृत्त के निकटवर्ती स्थान दूरस्थ स्थानों की अपेक्षा अधिक गर्म होते हैं। इसका प्रमुख कारण विषुवत् वृत्त पर सूर्य की किरणें हमेशा लगभग लम्बवत् पड़ती हैं। शीतोष्ण और ध्रुवीय कटिबन्धों में सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं। हम पहले पढ़ चुके हैं कि किसी भी क्षेत्र में लम्बवत् किरणें तिरछी किरणों की अपेक्षा अधिक सकेन्द्रिक होती हैं। इसके अतिरिक्त तिरछी किरणों की अपेक्षा लम्बवत् किरणों को धरातल पर पहुँचने में वायुमण्डल की कम दूरी तय करनी पड़ती है। यही कारण है कि निम्न अक्षांशों में उच्च अक्षांशों की अपेक्षा तापमान ऊँचा रहता है। विषुवत् वृत्त के निकट होने के कारण मलेशिया में इंग्लैंड (विषुवत वृत्त से दूर) की अपेक्षा अधिक गर्मी पड़ती है।

(ख) समुद्र तल से ऊँचाई

हम सब जानते हैं कि पर्वतों पर मैदानों की अपेक्षा अधिक ठण्ड रहती है। शिमला अधिक ऊँचाई पर स्थित होने के कारण ही जालन्धर की अपेक्षा अधिक ठण्डा है यद्यपि दोनों नगर एक ही अक्षांश पर स्थित हैं। तापमान ऊँचाई बढ़ने के साथ घटता जाता है। प्रत्येक 165 मीटर की ऊँचाई पर औसतन 1^0 सेल्सियस तापमान कम हो जाता है। इस प्रकार ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान निरन्तर कम होता रहता है।

(ग) महाद्वीपीयता अथवा समुद्र से दूरी

जल बहुत देर में गर्म होता है और बहुत देर में ठंडा होता है। समुद्र तट के

टिप्पणी

निकटवर्ती स्थानों की जलवायु सम होती हैं। समुद्र के इस समकारी प्रभाव के कारण तट के निकट के स्थानों का ताप परिसर कम और आर्द्रता अधिक होती है। महाद्वीपों के आन्तरिक भाग समुद्र के इस समकारी प्रभाव से वंचित रहते हैं। अतः वहाँ ताप परिसर अधिक और आर्द्रता कम होती है। उदाहरणार्थ मुम्बई और नागपुर दोनों नगर लगभग एक ही अक्षांश पर स्थित हैं, परन्तु समुद्र के प्रभाव के कारण मुम्बई में नागपुर की अपेक्षा नीचे तापमान रहते हैं और अधिक वर्षा होती हैं

(घ) प्रचलित पवनों का स्वरूप

समुद्र की ओर से आने वाली पवनें (अभितट पवनें) नमी से युक्त होती हैं और वे अपने मार्ग में पड़ने वाले क्षेत्रों में वर्षा करती हैं। महाद्वीपों के आन्तरिक भागों से समुद्र की ओर आने वाली पवनें (अपतट पवनें) शुष्क होती हैं और वे वाष्पीकरण में सहायक होती हैं। भारत में ग्रीष्म कालीन मानसून पवनें समुद्र से आती हैं। अतः वे देश के अधिकांश क्षेत्र पर वर्षा करती हैं। इसके विपरीत शीतकालीन मानसून पवनें स्थल भाग से आने के कारण सामान्यतया शुष्क होती हैं।

(ङ) मेघाच्छादन

मेघ विहीन मरुस्थलीय भागों में दिन के समय वायु के अत्यधिक गर्म होने के कारण छाया में भी ऊँचे तापमान पाये जाते हैं। रात के समय यह गर्मी धरातल द्वारा शीघ्र विकिरित हो जाती है। अतः मरुस्थलों में दैनिक ताप परिसर अधिक होता है। इसके विपरीत बादलों से घिरे आकाश और भारी वर्षा के कारण तिरुवनन्तपुरम में ताप परिसर बहुत कम होता है।

(च) समुद्री धाराएं

समुद्री जल में तापमान और घनत्व की समानता बनाये रखने में समुद्र का जल एक स्थान से दूसरे स्थान को गतिमान रहता है। समुद्री धाराएं जल की गतियाँ हैं जो उच्च तापमान से निम्न तापमान तथा निम्न तापमान से उच्च तापमान की ओर एक निश्चित दिशा में बहती हैं। गर्म धाराएं तटवर्ती भागों के तापमान को बढ़ाकर कभी–कभी वर्षा में सहायक होती हैं; जबकि ठण्डी समुद्री धाराएं तटवर्ती भागों का तापमान कम कर, कोहरा उत्पन्न करती हैं। उत्तरी अटलांटिक महासागर में बर्जन नामक बन्दरगाह (नार्वे) गर्म उत्तरी अंध महासागरीय प्रवाह के कारण जाड़े में बर्फ के जमने से बचा रहता है, जबकि कनाडा का क्यूबैक बन्दरगाह जाड़े के महीनों में ठण्डी लैब्राडोर धारा के प्रभाव में आकर बर्फ से जम जाता है। यद्यपि क्यूबैक बन्दरगाह अपेक्षाकृत निम्न अक्षांशों में स्थित है। समुद्र की ओर से आने वाली पवन गर्म धारा के ऊपर से गुजरते समय गर्म हो जाती है और आन्तरिक भागों के तापमान को ऊँचा कर देती है। इसी प्रकार ठण्डी धाराओं के ऊपर से गुजरने वाली पवनें ठण्डी होकर आन्तरिक भागो में तापमान को कम करके, कोहरा और धुंध उत्पन्न करती हैं।

टिप्पणी

(छ) पर्वत मालाओं की स्थिति

पर्वत मालायें हवाओं के रास्ते में प्राकृतिक अवरोध का कार्य करती हैं। समुद्र की ओर से आने वाली पवनें मार्ग में पर्वतों के आने पर ऊपर चढ़ने को बाध्य होती है। ऊपर चढ़ने पर तापमान गिरने लगता है और पवनाभिमुख ढालों पर भारी वर्षा करती हैं। फिर वे पर्वतों के दूसरी दिशा में नीचे उतरती हैं, जिसे पवनाविमुख ढाल कहा जाता है। पवनाविमुख ढाल वर्षा रहित होता है तथा वृष्टि छाया प्रदेश कहा जाता है। महान हिमालय वाष्प युक्त मानसूनी पवनों को तिब्बत जाने में रूकावट पैदा करते हैं और उत्तर की ओर से आने वाली ठण्डी हवाओं को भारत में आने से रोकते हैं। इसी कारण से भारत के उत्तरी मैदानों में भारी वर्षा होती हैं जबकि तिब्बत, एक स्थायी वृष्टि छाया प्रदेश बना हुआ है।

(ज) भूमि का ढाल एवं अभिमुखता

भूमि के मन्द ढाल पर सूर्य की किरणों का संकेन्द्रण होने के कारण ऊपर की वायु का तापमान बढ़ जाता है। तीव्र ढाल पर किरणों के फैलने के कारण तापमान कम होता है। इसके साथ ही सूर्य के सम्मुख पड़ने वाले पर्वतीय ढाल विमुख ढाल वाले क्षेत्रों से अपेक्षाकृत गर्म होते हैं। हिमालय पर्वतमाला के दक्षिणी ढाल उत्तरी ढालों की अपेक्षा अधिक गर्म हैं।

(झ) मिट्टी की प्रकृति और वनस्पति आवरण

मिट्टी का गठन, संरचना एवं संघटन उसकी प्रकृति को बताते हैं। ये गुण अलग–अलग मिट्टियों में बदलते रहते हैं। पथरीली या रेतीली मिट्टी गर्मी की सुचालक होती हैं; जबकि काली चिकनी मिट्टी गर्मी को जल्दी सोख लेती है। वनस्पति विहीन मिट्टियों से विकिरण तेजी से होता है। अतः मरुस्थल दिन में गर्म और रात में ठंडे होते हैं। वन विहीन क्षेत्रों की तुलना में वनों से ढके क्षेत्रों में ताप परिसर कम होता है।

इन प्रमुख कारकों के सम्मिलित प्रभाव के कारण उच्च अक्षांशों की पश्चिमी तटीय भूमियाँ पूर्वी तटीय भूमियों की अपेक्षा शीत ऋतु में गर्म रहती हैं। उपोष्ण कटिबन्धों के निकट निम्न अक्षांशों की पूर्वी तटीय भूमियाँ पश्चिमी तटीय भूमियों की अपेक्षा ग्रीष्म ऋतु में गर्म रहती हैं। महाद्वीपों के सीमान्तों पर सामान्यतया अनुसमुद्री जलवायु पाई जाती है। महाद्वीपों के आन्तरिक भागों में महाद्वीपीय जलवायु पाई जाती है।

- किसी स्थान या क्षेत्र की जलवायु को प्रभावित करने वाले कारक हैं – अक्षांश या विषुवत वृत्त से दूरी, समुद्र तल से ऊँचाई, महाद्वीपीयता या समुद्र से दूरी, प्रचलित पवनों का स्वरूप, मेघाच्छादन, समुद्री धाराएँ, पर्वतमालाओं की स्थिति, भूमि का ढाल एवं अभिमुखता, मिट्टी की प्रकृति और वनस्पति आवरण।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 13.2

निम्नलिखित कथनों में से कुछ कथन गलत हैं और कुछ सही। सही कथनों पर चिन्ह (√) लगाइये:

1. अक्षांश जितना उच्च होगा तापमान उतना कम होगा।
2. ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ तापमान गिरता है।
3. समुद्र तट के निकट ताप परिसर कम रहता है।
4. महाद्वीपों के आन्तरिक भागों में ताप परिसर कम रहता है।
5. ठण्डी जल धाराएँ तटीय भागों के तापमान को कम करती हैं।

13.3 जलवायु का वर्गीकरण

मौसम के प्रमुख तत्वों के विभिन्न प्रभाव तथा पृथ्वी के धरातल के विभिन्न स्वरूपों के कारण संसार के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार की जलवायु पाई जाती है। अतः जलवायु के प्रकारों की संख्या बहुत ही अधिक है। संसार के इन विविध जलवायु प्रकारों को आसानी से समझने के लिये उन्हें कुछ प्रमुख जलवायु समूहों में वर्गीकृत किया गया है और प्रत्येक जलवायु समूह में कुछ प्रमुख सामान्य विशेषतायें पाई जाती हैं।

यद्यपि वैज्ञानिकों द्वारा संसार के प्रमुख जलवायु प्रकारों के उचित अध्ययन के लिये उनके वर्गीकरण के कई प्रयास किये गये हैं। चूँकि जलवायु मौसम की विभिन्न दशाओं का सम्मिलित और सामान्य रूप होता है, अतः कोई भी वर्गीकरण आदर्श नहीं माना जाता। फिर भी, यूनानियों ने तापमान और सूर्यातप के वितरण के आधार पर संसार की जलवायु को वर्गीकृत करने का प्रथम प्रयास किया। उन्होंने संसार को पाँच अक्षांशीय ताप कटिबन्धों में बाँटा। इन ताप कटिबंधों की सीमाओं का निर्धारण पृथ्वी पर सूर्य की किरणों से बनने वाले कोण के आधार पर किया गया है। पाँच ताप कटिबंध निम्नलिखित हैं (चित्र 13.1)।

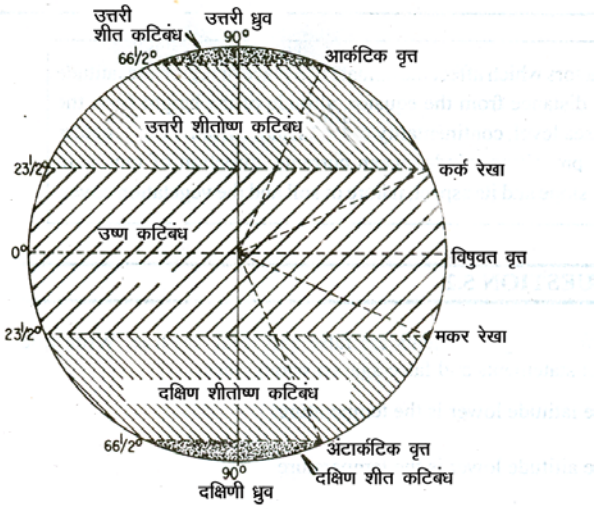

चित्र 13.1 ताप कटिबंध

टिप्पणी

(क) ताप कटिबन्ध

(i) उष्ण कटिबंध : ताप कटिबंधों में उष्ण कटिबंध सबसे अधिक विस्तृत है। यह पृथ्वी की सतह के लगभग आधे भाग को घेरे हुए है। उष्ण कटिबंध कर्क वृत्त ($23\frac{1}{2}^0$ उ.) और मकर वृत ($23\frac{1}{2}^0$ द.) के मध्य में स्थित है। इस ताप कटिबंध में वर्ष भर सूर्य की किरणें लगभग लम्बवत् पड़ती हैं (चित्र संख्या 13.1 देखें)।

उष्ण कटिबंध के विषुव कालों में अर्थात 21 मार्च और 23 सितम्बर की तिथियों को मध्यान्ह कालीन सूर्य विषुवत वृत्त पर ठीक सिर के ऊपर होता है। सूर्य 21 जून को कर्क वृत्त पर और 22 दिसम्बर को मकर वृत्त पर भी लम्बवत् होता है। विषुवत वृत्त पर दिन और रात की अवधि हमेशा बराबर रहती है, अर्थात 12 घंटे की रात और 12 घंटे का दिन। दिन या रात की अवधि विषुवत वृत्त से दूर जाने पर बढ़ती जाती है और यह कर्क या मकर वृत्तों पर बढ़कर अधिकतम 13 घंटे 47 मिनट तक की हो जाती है। विषुवत वृत्त पर ताप परिसर सबसे कम होता है और अयन वृत्तों (कर्क और मकर वृत्त) की ओर बढ़ता जाता है।

(ii) शीतोष्ण कटिबंध : शीतोष्ण कटिबंध उष्ण कटिबंध के दोनों ओर स्थित हैं। उत्तरी शीतोष्ण कटिबंध कर्क वृत्त ($23\frac{1}{2}^0$ उ.) से आर्कटिक वृत्त या उत्तर ध्रुवीय वृत्त ($66\frac{1}{2}^0$ उ.) के बीच स्थित है। दक्षिणी शीतोष्ण कटिबंध की स्थिति मकर वृत्त ($23\frac{1}{2}^0$ द.) और अन्टार्कटिक वृत्त या दक्षिण ध्रुवीय वृत्त ($66\frac{1}{2}^0$ द.) के बीच हैं (चित्र संख्या 13.1 देखें)। इस कटिबंध में सूर्य की स्थिति ठीक सिर के ऊपर कभी नहीं होती। यहाँ शीत ऋतु में रात की अवधि दिन की अवधि से लम्बी होती है और ग्रीष्म ऋतु में इसके विपरीत होती हैं ध्रुवीय वृत्तों की ओर जाने पर दिन और रात की अवधि का अन्तर बढ़ता जाता है। ध्रुवीय वृत्तों पर ग्रीष्म ऋतु में दिन की अवधि (सूर्य के प्रकाश की अवधि) 24 घंटे होती है। जब उत्तरी गोलार्ध में ग्रीष्म ऋतु होती है तो दक्षिणी गोलार्ध में शीत ऋतु होती है।

(iii) शीत कटिबंध : शीतोष्ण कटिबंध के समान ही शीत कटिबन्ध भी दोनों गोलार्धों में हैं। उत्तरी शीत कटिबंध उत्तर ध्रुवीय वृत्त ($66\frac{1}{2}^0$ उ.) और उत्तर ध्रुव (90^0 उ.) के बीच स्थित है। दक्षिणी शीत कटिबन्ध दक्षिण ध्रुवीय वृत्त ($66\frac{1}{2}^0$ द.) से दक्षिण ध्रुव (90^0 द.) तक है। शीत कटिबन्ध में सूर्य की किरणें हमेशा तिरछी पड़ती हैं और उनका आपतन कोण बहुत छोटा होता है। ध्रुवों पर ग्रीष्म ऋतु में 6 माह का दिन (सूर्य के प्रकाश की अवधि) होता है और शीत ऋतु में यहाँ 6 माह की रात होती है। यह कटिबन्ध संसार का सबसे ठंडा प्रदेश है। यहाँ धरातल पर सदैव हिम की मोटी तह जमी रहती है।

- सूर्यातप एवं तापमान के वितरण के आधार पर पृथ्वी की पाँच तप कटिबन्धों में बाँटा गया है।
- पाँच ताप कटिबंधों के नाम हैं – उष्ण कटिबंध, उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्ध, दक्षिणी शीतोष्ण कटिबन्ध, उत्तरी शीत कटिबन्ध तथा दक्षिणी शीत कटिबन्ध।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 13.3

रिक्त स्थानों की पूर्ति उचित शब्दों द्वारा कीजिए–

(i) ताप कटिबंधों का विचार सर्वप्रथम _____ द्वारा किया गया।

(ii) _____ उष्ण कटिबंध के मध्य से गुजरता है।

(iii) _____ पर दिन–रात हमेशा बराबर होते हैं।

(iv) 21 मार्च और 23 सितम्बर को सूर्य _____ के ऊपर लम्बवत् चमकता है।

(v) _____ कटिबंध में सूर्य वर्ष भर सिर के ऊपर चमकता है।

(vi) _____ कटिबंध $23\frac{1}{2}^0$ द. और $66\frac{1}{2}^0$ द. के मध्य स्थित है।

(vii) उत्तरी शीत कटिबंध $66\frac{1}{2}^0$ उ. और _____ के मध्य स्थित है।

(viii) _____ कटिबंध में सदैव बर्फ जमी रहती है।

(ख) जलवायु के प्रकार

ताप कटिबंधों की संकल्पना सैद्धान्तिक है। यह पृथ्वी तल पर सूर्यातप के वितरण मात्र का ही वर्णन करती है। यह आप पहले ही जान चुके हैं कि सूर्य की किरणों के आपतन कोण के अतिरिक्त और भी कई कारक किसी स्थान की जलवायु को प्रभावित करते हैं। तापमान और वर्षा के संयुक्त प्रभाव और इनके वितरण को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों को ध्यान में रखते हुये आधुनिक वैज्ञानिकों ने जलवायु प्रकारों के कई वर्गीकरण किये हैं। डब्ल्यू. कोपेन (1846–1940) का जलवायु वर्गीकरण अपने विविध रूपान्तरित प्रकारों के रूप में सबसे ज्यादा प्रयुक्त एवं लोकप्रिय है।

कोपेन का वर्गीकरण तापमान, वर्षण तथा उनकी ऋतुवत् विशेषताओं पर आधारित है। इसमें उन्होंने जलवायु और प्राकृतिक वनस्पति के बीच दृश्य संबंधों को भी जोड़ा है। कोपेन ने अपने वर्गीकरण में संसार को पाँच वृहद जलवायु वर्गों और उनको भी तेरह उपवर्गों में विभाजित किया है। ये जलवायु वर्ग व जलवायु उपवर्ग इस प्रकार हैं :

जलवायु वर्ग		जलवायु प्रकार
(A) उष्ण कटिबंधीय जलवायु (सभी ऋतु गर्म)	Af	(1) उष्ण कटिबंधी वर्षा वन
	Aw	(2) सवाना जलवायु
	Am	(3) मानसूनी जलवायु
(B) शुष्क जलवायु	Bw	(4) मरुस्थलीय जलवायु
	Bs	(5) स्टेपी जलवायु
(C) नम शीतोष्ण जलवायु या मध्य अक्षांशीय नम जलवायु (शीत	Cs	(6) भूमध्यसागरीय जलवायु
	Cw	(7) चीन तुल्य जलवायु

टिप्पणी

	ऋतु कम ठंडी)	Cf	(8) पश्चिम यूरोपीय जलवायु
(D)	आर्द्र मध्य अक्षांशीय जलवायु (शीत ऋतु बहुत ठंडी)	Dw	(9) टैगा जलवायु
		Df	(10) शीतल पूर्वी तट की जलवायु
			(11) महाद्वीपीय जलवायु
(D)	ध्रुवीय जलवायु	Et	(12) टुन्ड्रा जलवायु
		Ef	(13) हिमाच्छादित प्रदेश की जलवायु

आप इनमें से कुछ जलवायु प्रकारों की प्रमुख विशेषतायें आगे के पाठों, जो निम्न अक्षांशों, मध्य अक्षांशों और उच्च अक्षांशों में रहने वाले लागों के जीवन से संबंधित हैं, में अध्ययन करेंगे।

- डब्लू. कोपेन का जलवायु वर्गीकरण तापमान, वर्षण तथा उनकी ऋतुवत विशेषताओं पर आधारित है।
- इस वर्गीकरण के अनुसार संसार को पाँच वृहद जलवायु वर्गों और तेरह जलवायु प्रकारों में उपविभाजित किया गया है।

पाठगत प्रश्न 13.4

नीचे स्तम्भ 'क' की प्रत्येक मद का स्तम्भ 'ख' की प्रत्येक मद के साथ सही जोड़ा बनाइयेः

'क' जलवायु वर्ग		**'ख' जलवायु प्रकार**
(i)	उष्ण कटिबन्धीय जलवायु	(1) टुंड्रा जलवायु
(ii)	शुष्क जलवायु	(2) टैगा जलवायु
(iii)	नम शीतोष्ण जलवायु	(3) सवाना जलवायु
(iv)	आर्द्र मध्य अक्षांशीय जलवायु (शीत ऋतु बहुत ठंडी)	(4) स्टेप्स की जलवायु
(v)	ध्रुवीय जलवायु	(5) भूमध्य सागरीय जलवायु

आपने क्या सीखा

मौसम, ऋतु और जलवायु में प्रमुख अन्तर अवधि, प्रभाव क्षेत्र का विस्तार और स्थायित्व के संदर्भ में है। किसी स्थान पर मौसम उसके किसी एक या एक से अधिक अवयवों के संदर्भ में किसी समय विशेष में वायुमंडलीय दशा का बोध कराता है। यह स्थाई नहीं है। ऋतु वर्ष की वह लम्बी अवधि हैं जिसमें मौसम संबंधी विशिष्ट दशायें होती हैं। यह मुख्यतया पृथ्वी के अक्ष के झुकाव और पृथ्वी की सूर्य परिक्रमा के कारण बनती है। जलवायु एक विस्तृत क्षेत्र के गत अनेक वर्षों के मौसम का औसत होती है। किसी स्थान या प्रदेश की जलवायु को प्रभावित करने वाले कारक हैं–

टिप्पणी

विषुवत वृत्त से दूरी, समुद्रतल से ऊँचाई, समुद्र से दूरी, प्रचलित पवनें, मेघाच्छादन, समुद्री धाराएँ, पर्वतों की स्थिति, भूमि का ढाल एवं अभिमुखता, मिट्टी की प्रकृति एवं वनस्पति आवरण। यूनानियों ने तापमान और सूर्यातप के वितरण के आधार पर सर्वप्रथम पृथ्वी को उष्ण, शीतोष्ण एवं शीत कटिबन्धों में बाँटा। उष्ण कटिबन्ध सबसे गर्म, शीत कटिबंध सबसे ठंडा और शीतोष्ण कटिबन्ध इन दोनों के बीच में न ज्यादा गर्म और न ज्यादा ठंडा है। सूर्य के प्रकाश की अवधि विषुवत वृत्त से ध्रुवों की ओर बढ़ती जाती है। विषुवत वृत्त पर दिन और रात की अवधि बराबर होती है। ग्रीष्म ऋतु में दिन बड़े और रातें छोटी होती हैं तथा शीत ऋतु में रातें बड़ी तथा दिन छोटे होते हैं। जलवायु प्रकार प्रदेशों के अनुसार बने जलवायु वर्गों के आधार पर है। डब्लू. कोपेन ने संसार को पाँच जलवायु वर्गों में विभाजित किया है। ये वर्ग हैं (A) उष्ण कटिबन्धीय जलवायु (शीत ऋतु नहीं) (B) शुष्क जलवायु (C) नर्म मध्य–अक्षांशीय जलवायु (शीत ऋतु कम ठंडी) (D) आर्द्र मध्य–अक्षांशीय जलवायु (शीत ऋतु बहुत ठंडी) और (E) ध्रुवीय जलवायु। उनका यह वर्गीकरण तापमान, वर्षण और उनकी ऋतुवत् भिन्नताओं पर आधारित है। उन्होंने इन पाँच जलवायु वर्गों को 13 जलवायु प्रकारों में उपविभाजित किया है।

पाठांत प्रश्न

1. किसी स्थान की जलवायु को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
2. ताप कटिबन्धों को दर्शाने वाला एक चित्र बनाइये और प्रत्येक ताप कटिबन्ध की प्रमुख विशेषताएं लिखिये।
3. मौसम और जलवायु के बीच पाँच अन्तर स्पष्ट करिये।
4. कोपेन द्वारा जलवायु के वर्गीकरण करने के तीन प्रमुख आधारों के नाम बताइये और साथ ही पाँच जलवायु वर्ग और जलवायु प्रकारों में उनके उपविभागों के नाम बताइये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

13.1

1. (घ); 2. (ग); 3. (घ); 4. (घ); 5. (घ); 6. (क)

13.2

1. सही; 2. सही; 3. सही; 4. गलत; 5. सही

13.3

(i) यूनानियों; (ii) विषुवत वृत्त; (iii) विषुवत वृत्त;
(iv) विषुवत वृत; (v) उष्ण (vi) दक्षिणी शीतोष्ण; (vii) उत्तर ध्रुव/90^0 उ.; (viii) शीत

13.4

(i) (3); (ii) (4); (iii) (5); (iv) (2); (v) (1)

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. कृपया अनुच्छेद 13.2 देखिए।
2. कृपया अनुच्छेद 13.3 देखिए।
3. कृपया अनुच्छेद 13.1 देखिए।
4. कृपया अनुच्छेद 13.3 देखिए।

टिप्पणी

14

जैवमंडल

हम जानते हैं कि हमारी पृथ्वी ही अकेला ग्रह हैं जिसपर जीवन पाया जाता है। इसीलिए यह जीवंत ग्रह कहलाता है। इस ग्रह पर ही वायुमंडल, स्थलमंडल तथा जलमंडल है। ये सभी मंण्डल मिलकर इस ग्रह पर जीवन को संभव बनाते हैं। लेकिन क्या तुम जानते हो कि पृथ्वी के बहुत छोटे से भाग पर ही जीवन का अस्तित्व है। पृथ्वी के इस संकीर्ण क्षेत्र के पार किसी प्रकार का जीवन नहीं पाया जाता। पृथ्वी के इस संकीर्ण क्षेत्र में ऐसी क्या विशेषता है जिसने यहाँ पर जीवन को संभव बनाया है। यह इसलिए संभव हुआ है; क्योंकि यहाँ पर बहुत सी चीजों जैसे ऊर्जा, जीवित प्राणी तथा अजैव चीजों का उचित मिश्रण तथा उनके मध्य अन्योन्य क्रिया पाई जाती है। लाखों वर्षों से प्रकृति ने कुछ ऐसे नियंत्रण और संतुलन बनाए रखें हैं जिससे बिना किसी समस्या के जीवन के विभिन्न रूप विद्यमान हैं। लेकिन आज स्थिति बदल गई है। आज यह जीवन से परिपूर्ण ग्रह खतरे में हैं। यह मुख्य रूप से मानवीय हस्तक्षेप के कारण है। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने ठीक ही कहा था।'' पृथ्वी के पास मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए सब कुछ है; परन्तु उसके लालच के लिए नहीं।'' अगर हम इस अनोखे जीवनयुक्त ग्रह को बचाना चाहते हैं तो हमें अपने लालच पर नियंत्रण रखना ही होगा तथा हमें अपनी जीवन शैली और व्यवहार के प्रतिरूप को बदलना होगा। इस पाठ में हम जैवमंडल से संबंधित इनमें से कुछ विषयों पर चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप :–

- जैवमंडल के तत्व तथा उसके स्थलमंडल, वायुमंडल और जलमंडल के सहसंबंध को बता सकेंगें;
- जैवमंडल की सीमा का अनुमान लगा सकेंगे;
- जैवमंडल की अनोखी प्रकृति के कारण बता सकंगे;

टिप्पणी

- मुख्य संकल्पनाओं जैसे पारिस्थितिकी, पारितंत्र, विश्वव्यापी तापन, ओजोन परत का घटना, क्षारीय वर्षा तथा सतत पोषणीय विकास की परिभाषा बता सकेंगे;
- पारितंत्र में पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को बता सकेंगे;
- जलवायिक परिवर्तन के अवयवों का सामना करने के लिए विश्व एवं स्थानीय स्तर पर किए गए प्रयत्नों की विशेषता बता सकेंगे;
- सतत पोषणीय विकास की आवश्यकता तथा महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।

14.1 जैवमंडल तथा इसकी सीमा

सीधे–सादे शब्दों में जैवमंडल पृथ्वी की वह संकरी पट्टी है जिसमें सभी प्रकार का जीवन विद्यमान है। क्या तुम जानते हो कि इस पट्टी में जीवन क्यों संभव हुआ ? यह इसलिए क्योंकि यही वह क्षेत्र है जहाँ जीवन के लिए आवश्यक तीनों वस्तुएं उचित मात्रा में मिलती है। ये तीन हैं – भूमि (स्थलमंडल), वायु (वायुमंडल) तथा जल (जलमंडल); दूसरे शब्दों में यह संकरी पट्टी वह क्षेत्र है जहाँ, स्थलमंडल, वायुमंडल तथा जलमंडल मिलते हैं (देखिए चित्र 14.1)। हमें इस संकरी पट्टी का महत्व समझना चाहिए। यह वायुमंडल में ऊर्ध्वाकार रूप से लगभग 10 कि.मी. तक विस्तृत है। यह समुद्र में, जहाँ लगभग 10.4 कि.मी. की गहराई तक और पृथ्वी की सतह से लगभग 8.2 कि.मी. की गहराई तक सर्वाधिक जीवित जीव पाए जाते हैं, विस्तृत है। जीवन के कुछ रूप विषम परिस्थितियों में भी पाए जाते हैं। शैवाल (अलगाई) और थर्मोफिलिक इस प्रकार के जीवन के दो उदाहरण हैं। शैवाल जिसे जीवन के पहले रूप में से एक माना जाता है, बर्फीले अंटार्कटिका जैसे प्रतिकूल पर्यावरण में भी जीवित रह सकता है। दूसरे छोर पर थर्मोफिलिक (ऊष्मा पसंद करने वाला) जीवाणु सामान्यतः गहरे समुद्र में ज्वालामुखी रंध्रों में रहता है, जहाँ तापमान 300 डिग्री सेल्सियस से अधिक रहता है। वास्तव में ये जीवाणु क्वथनांक (0^0से.) से कम तापमान पर जीवित नहीं रह सकते।

जब जीवन शुरू हुआ तब स्थिति ऐसी नहीं थी। लगभग 7 अरब वर्ष पहले यह समझा जाता था कि पृथ्वी केवल एक संकरी विच्छिन्न भूमि है, जो महासागरों के उथले भागों को घेरे हुए है। जीवन के रूपों की उपलब्धता के संदर्भ में क्षेत्र के विस्तार की प्रवृत्ति के अनुसार यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि कुछ हजार वर्षों बाद जैवमंडल का विस्तार ऊपरी क्षोभमंडल से आगे बढ़ सकता है। इससे पता चलता है कि जैवमंडल का समय के साथ विकास हो रहा है। अब तक हमने जैवमंडल के ऊर्ध्वाधर विस्तार की चर्चा की है। लेकिन क्षैतिज रूप से जैवमंडल पूरे ग्लोब को घेरे हुए है, हालांकि सर्वाधिक गर्म और सर्वाधिक ठंडे क्षेत्रों में जीवन संभव नहीं हो सकता है। अधिकतर जीवन एक संकरी पट्टी तक सीमित है, जो प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया द्वारा सौर ऊर्जा को ग्रहण करती है, जो कई प्रकार के जैव–जीवन के लिए आवश्यक है। यह संकरा क्षेत्र समुद्र तल से लगभग 180–200 फीट नीचे उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय पर्वत श्रृंखलाओं

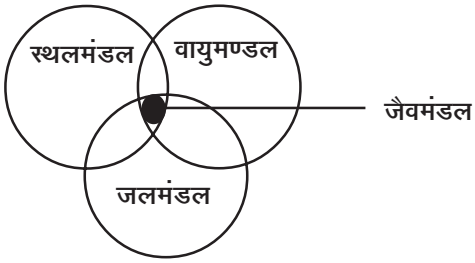

चित्र 14.1 जैवमंडल

(समुद्र तल से 6550 मीटर ऊपर) में हिम रेखा के सबसे ऊपरी भाग तक विस्तृत है। जब यह हिम रेखा के पार विस्तृत होता है तो जीवन के रूप बहुत कम हो जाते हैं।

14.2 जैवमंडल के घटक

जैवमंडल के तीन मूल घटक हैं– (अ) अजैविक घटक (ब) जैविक घटक तथा (स) ऊर्जा घटक। आइए इन तीनों घटकों की विस्तार से चर्चा करें।

(अ) अजैविक घटक

मोटे तौर पर इन घटकों में वे सभी अजैविक तत्व सम्मिलित होते हैं जो सभी जीवित जीवाणुओं के लिए आवश्यक होते हैं। ये हैं – (i) स्थलमंडल (भूपपर्टी का ठोस भाग), (ii) वायुमंडल और (iii) जलमंडल। खनिज पोषक तत्व, कुछ गैसें तथा जल जैविक जीवन के लिए तीन मूलभूत आवश्यकताएँ हैं। मृदा तथा अवसाद खनिज पोषक तत्वों के मुख्य भंडार हैं। वायुमंडल जैविक जीवन के लिए आवश्यक गैसों का भंडार है तथा महासागर तरल जल का प्रमुख भंडार है। जहाँ ये तीनों भंडार आपस में मिलते हैं, वह क्षेत्र जैविक जीवन के लिए सबसे अधिक उपजाऊ क्षेत्र होता है। मृदा की उपरी परत और महासागरों के उथले भाग जैविक जीवन को जीवित रखने के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

> मृदा की ऊपरी परत गैसों को आसानी से अंदर जाने और नमी को अंदर रिसने देती है; जबकि महासागरों के उथले भाग सूर्य की रोशनी को अंदर जाने देते हैं और धरातल व महासागरों की तली से विघटित गैसों और पोषक तत्वों को आपस में मिलने देते हैं।

(ब) जैविक घटक

पौधे, जीव–जंतु और सूक्ष्म जीवाणुओं सहित मानव पर्यावरण के तीन जैविक घटक हैं। एक तरीके से इन्हें तीन उप–तंत्र भी कहा जाता है।

(i) **पौधे** – जैविक घटकों में पौधे सबसे महत्वपूर्ण हैं। केवल ये ही प्राथमिक उत्पादक हैं, क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाते हैं। इसीलिए इन्हें स्वपोषी कहा जाता है। पौधे न केवल सभी प्रकार के जैविक पदार्थों का उत्पादन करते हैं बल्कि जैविक पदार्थों एवं पोषक तत्वों के चक्रण एवं पुनर्चक्रण

में भी मदद करते हैं। अतः पौधे सभी जीवों के लिए भोजन और ऊर्जा के प्रमुख स्रोत हैं।

(ii) पशु–पौधे अगर प्राथमिक उत्पादक हैं तो पशु मुख्य उपभोक्ता। इसलिए पशुओं को विषम–तंत्र कहा जाता है। पशुओं के तीन प्रमुख कार्य हैं – (i) पौधों द्वारा भोजन के रूप में उपलब्ध कराये गये जैविक पदार्थ का उपयोग, (ii) भोजन को ऊर्जा में बदलना, और (iii) ऊर्जा का वृद्धि और विकास में प्रयोग करना।

(iii) सूक्ष्म जीव – इसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवाणु, फफूंदी इत्यादि आते हैं। इनकी संख्या असीमित है तथा इन्हें सामान्यतः अपघटक के रूप में जाना जाता है। जैसा कि इनके नाम से ही स्पष्ट है ये जीवाणु मृत पौधों और पशुओं तथा अन्य जैविक पदार्थों को अपघटित कर देते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा वे अपना भोजन प्राप्त करते हैं। अपघटन की इस प्रक्रिया द्वारा वे जटिल जैविक पदार्थों को विच्छेदित तथा पृथक कर देते हैं ताकि प्राथमिक उत्पादक अर्थात पौधे उनका दोबारा प्रयोग कर सकें।

(स) ऊर्जा – यह जैवमंडल का तीसरा तथा अति महत्वपूर्ण घटक है, जिसके बगैर इस ग्रह पर जीवन संभव नहीं हो पाता। यह इस ग्रह पर प्रत्येक प्रकार के जैविक जीवन के उत्पादन तथा पुनर्उत्पादन के लिए आवश्यक है। इस जैवमंडल में सभी जीव मशीन की भांति कार्य करने के लिए ऊर्जा का प्रयोग करते हैं तथा ऊर्जा के एक प्रकार को दूसरे में बदलते हैं। लेकिन क्या तुम्हें ऐसी ऊर्जा का स्रोत पता है जिसकी आवश्यकता जैवमंडल को चलाने के लिए होती है। सूर्य ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है जिसके बगैर हम जैवमंडल के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते।

पाठगत प्रश्न 14.1

1. निम्नलिखित में से प्रत्येक के लिए एक शब्द दीजिए –

   (अ) संकरी पट्टी जिसमें जीवन है_____

   (ब) जैवमंडल का वह घटक जिसमें जीवन नहीं है _____

   (स) जैवमंडल का वह घटक जिसमें जीवन है _____

   (द) वे जीव जो पौधों, पशुओं तथा अन्य जैविक पदार्थों को अपघटित कर देते हैं _____

(2) रिक्त स्थान भरिए –

   (अ) _____ जैवमंडल के लिए ऊर्जा का प्राथमिक स्रोत है।

   (ब) वह जैविक घटक जो अपना भोजन मुंह से लेते हैं _____।

(स) जैवमंडल के जैविक घटकों में मुख्य रूप से _____, _____ और _____ आते हैं।

(द) जैवमंडल एक संकरी पट्टी है जहाँ _____, _____ और _____ मिलते हैं जिससे जीवन संभव हुआ है।

14.3 पारिस्थितिकी तथा पारितंत्र

पारिस्थितिकी जीवों और उनके पर्यावरण के बीच होने वाली पारस्परिक क्रियाओं का अध्ययन है। अब पारिस्थितिक विज्ञानी यह अनुभव करते हैं कि प्रकृति के दो घटक – जीव और पर्यावरण आपस में संबंधित ही नहीं हैं बल्कि ये घटक एक निश्चित तंत्र के रूप में बड़े व्यवस्थित ढंग से कार्य करते हैं। वास्तव में दोनों घटक जीव और पर्यावरण पृथक नहीं हैं। किसी एक विशेष जीव के लिए अन्य जीव उसके पर्यावरण का एक हिस्सा बन सकते है। इसी प्रकार से पर्यावरण को जीवों द्वारा बदला और प्रभावित किया

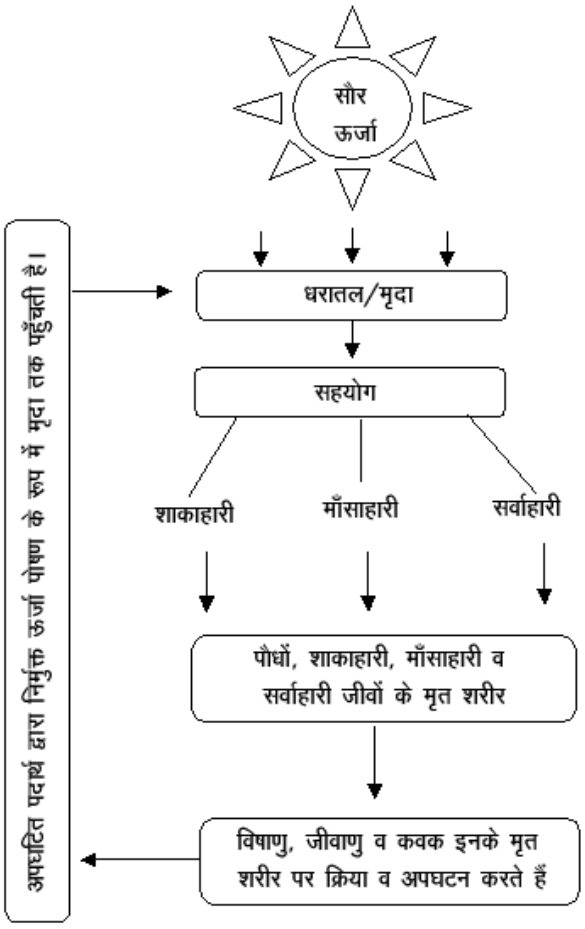

चित्र 14.2 एक पारितंत्र में ऊर्जा का प्रवाह

जा सकता है। अतः जीव और पर्यावरण एक तंत्र के परस्पर क्रिया करने वाले भाग हैं। इसीलिए इस प्रकार के तंत्र का वर्णन करने के लिए आजकल पारितंत्र शब्द का प्रयोग किया जाता है। पारिस्थितिक तंत्र का ही संक्षिप्त रूप पारितंत्र है। इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 1935 में ए.जी. टॉसले द्वारा किया गया था।

एक पारितंत्र को एक ऐसे तंत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें एक दूसरे पर निर्भर रहने वाले घटक नियमित रूप से परस्पर क्रिया करते हुए एक एकीकृत सम्पूर्ण का निर्माण करते हैं। दूसरे शब्दों में भूदृश्य का कोई भाग जिसमें जैविक और अजैविक घटक सम्मिलित हों, एक पारितंत्र के रूप में तभी जाना जाता है जब उसके सभी घटक एक दूसरे के साथ संघटित हों। उदाहरण के लिए एक झील या तालाब तब एक पारितंत्र है जब इसे केवल एक जल स्थान न समझकर इसे इसकी समग्रता के रूप में माना जाता है। उस विचार से तालाब सूक्ष्म पारितंत्र का प्रतिनिधित्व करता है और जैवमंडल को एक बड़े पारितंत्र के रूप में जाना जाता है। मूलरूप से यह अवधारणा दो पहलुओं के चारों ओर घूमती है।

(i) प्रथम, यह विभिन्न घटकों और उपघटकों के मध्य अंतर्संबंधों का अध्ययन करती है।

(ii) दूसरे, पारितंत्र के विभिन्न घटकों के मध्य ऊर्जा का प्रवाह जो इस बात के लिए आवश्यक निर्धारक है कि एक जैविक समुदाय कैसे कार्य करता है ?

इसलिए अगर हम एक पारितंत्र के कार्य पक्ष का अध्ययन करें तो हम इसका अध्ययन निम्नलिखित के अनुसार कर सकते हैं –

- ऊर्जा प्रवाह
- खाद्य श्रृंखला
- पोषक अथवा जैव–भूरासायनिक चक्र
- परिवर्धन एवं विकास
- नियंत्रण रचनातंत्र अथवा संतांत्रिकी (साइबर्नेटिक्स)
- समय और स्थान में विविधता प्रतिरूप

आइए प्रत्येक घटक का संक्षेप में अध्ययन करें –

(अ) पारितंत्र में ऊर्जा प्रवाह

जैसा कि हम पहले भी चर्चा कर चुके हैं, एक पारितंत्र में अन्योन्य क्रियाएँ लगातार होती रहती हैं। घटकों और उपघटकों के मध्य अन्योन्य क्रियाओं में ऊर्जा प्रवाह और खनिज पोषकों का चक्रण सम्मिलित होता है। ऊर्जा और खनिजों की गति को प्रदर्शित करने वाला एक सामान्य रेखाचित्र नीचे दिया गया है। (देखें चित्र 14.3)

टिप्पणी

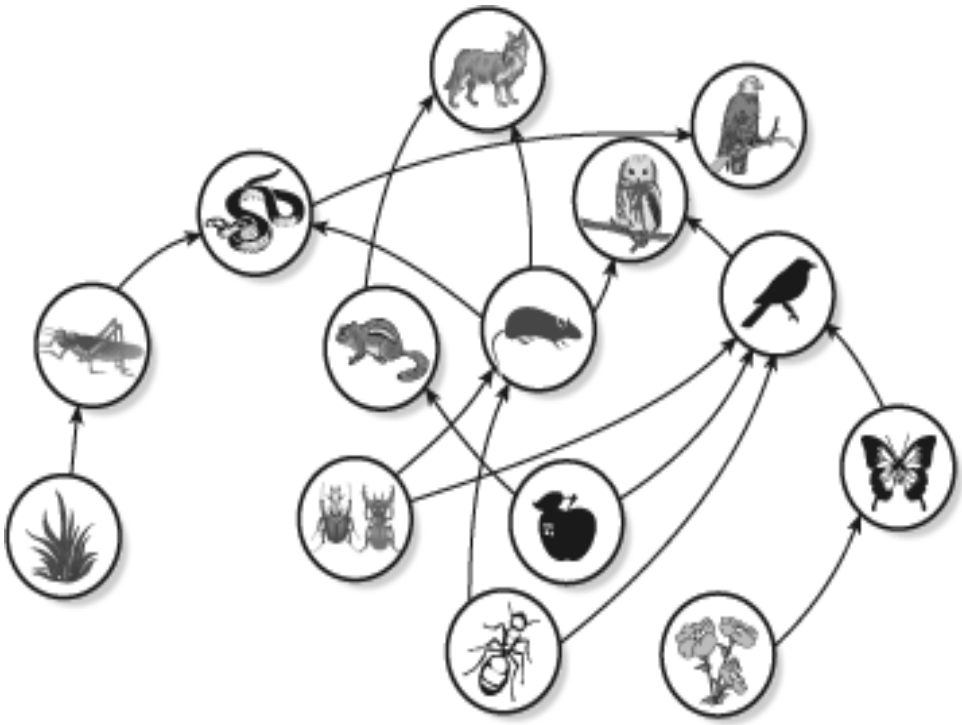

चित्र 14.3 खाद्य जाल

इस प्रक्रिया में ऊर्जा का हस्तातंरण एक स्तर से दूसरे स्तर को होता है। इसे पोषण स्तर कहते हैं। अतः पोषण स्तर वह स्तर या अवस्था होती है जिस पर खाद्य ऊर्जा एक समूह से दूसरे समूह को हस्तांतरित होती है। इसे और अच्छी तरह से समझने के लिए हमें खाद्य श्रृंखला तथा इससे संबंधित कार्यकलापों की चर्चा करनी होगी। जैवमंडल में मोटे तौर पर दो प्रकार के जीवित जीवों के समूह हैं– स्वपोषी और परपोषी। इन परपोषियों की खाने की आदत के आधार पर आगे तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। ये हैं – शाकाहारी, मांसाहारी तथा सर्वाहारी। पौधों को खाने वाले प्राणी शाकाहारी हैं तथा मांसभक्षी प्राणियों को मांसाहारी कहते हैं तथा सर्वाहारी जीव वो होते हैं जो पौधे और पशुओं दोनों को खाते हैं।

(ब) खाद्य श्रृंखला/चक्र

आइए अब यह समझें कि खाद्य श्रृंखला क्या है ? खाद्य श्रृंखला को एक पोषक स्तर के जीवों द्वारा दूसरे पोषक स्तर के जीवों को ऊर्जा के हस्तांतरण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। सूर्य ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है।

यह मृदा एवं जल में पौधों के उगने में सहायता करता है। पौधे अधिकतर शाकाहारी जीवों के भोजन के आधार हैं। इन शाकाहारी जीवों को मांसाहारी जीव अपने खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयोग करते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ सर्वाहारी जीव है जो पौधों और पशुओं दोनों को खाते हैं। मृदा द्वारा अवशोषित सौर ऊर्जा पौधों और पशुओं के रूप में परिलक्षित होती है। इन जीवों का जीवन चक्र छोटा है और कुछ समय बाद मर जाते

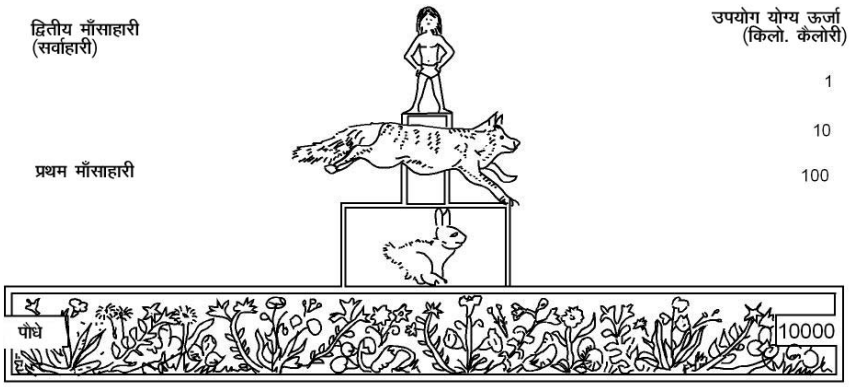

चित्र 14.4 खाद्य पिरामिड

हैं। जैसे ही ये जीव मरते हैं, दूसरे जीवों का समूह अपना कार्य शुरू कर देता है। क्योंकि ये मृत पदार्थों को खाते हैं। ये मृत पौधों और पशुओं के अपघटन में सहायता करते हैं तथा इनसे मुक्त हुई ऊर्जा मृदा द्वारा ग्रहण कर ली जाती है जो पौधों के उगने में सहायक होती है।

ऊपर वर्णित खाद्य श्रृंखला एक अत्यंत सरल खाद्य श्रृंखला है। लेकिन खाद्य श्रृंखलाएं हमेशा इतनी सरल एवं एकाकी क्रम वाली नहीं होतीं। सैंकड़ों अंतःसंबंधित एवं परस्परव्यापी खाद्य श्रृंखलाएं एक जटिल प्रतिरूप बनाती हैं। ऐसे प्रतिरूपों को खाद्य जाल कहते हैं।

आइए अब हम यह देखते हैं कि विभिन्न पोषण स्तर क्या है ? जैसे कि हमने पहले भी चर्चा की थी कि सूर्य अथवा सौर ऊर्जा सभी पौधों के लिए अपना भोजन तैयार करने का प्रमुख स्त्रोत है। पौधों द्वारा संग्रहित ऊर्जा पोषण स्तर के रूप में जानी जाती है। यह शाकाहारी जीवों के लिए ऊर्जा का स्त्रोत बन जाता है। जब शाकाहारी पशु इन पौधों को खाते हैं तो ऊर्जा का हस्तांतरण पोषण स्तर–I से पोषण स्तर–II को हो जाता है। फिर शाकाहारी जीवों द्वारा उपयोग की गई रासायनिक ऊर्जा (भोजन द्वारा) पोषण स्तर–II पर संग्रहित हो जाती है। मांसाहारी अपने भोजन के लिए अन्य पशुओं पर निर्भर रहते हैं। इन पशुओं को अपने ऊतकों को बनाने के लिए बहुत सारी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ये अपनी ऊर्जा को पोषण स्तर–II से प्राप्त भोजन के उपभोग द्वारा प्राप्त करते हैं। खाद्य श्रृंखला के पोषण स्तर–III से रासायनिक ऊर्जा का कुछ भाग पोषण स्तर–IV के सर्वाहारिओं को हस्तांतरित हो जाता है। इसलिए खाद्य श्रृंखला में शीर्ष पर सर्वाहारी हैं जो अपनी ऊर्जा सभी तीन स्तरों से प्राप्त करते हैं। इस प्रकार से खाद्य श्रृंखला में प्रत्येक उच्च स्तर पर क्रमिक रूप से जीवों की संख्या कम होती जाती है। जब क्रमिक स्तरों के जीवों की संख्या को कागज पर अंकित किया जाता है तो यह एक पिरामिड का आकार ग्रहण कर लेता है। इसलिए इसे खाद्य पिरामिड अथवा संख्याओं का पिरामिड कहा जाता है। (देखिए चित्र 14.4)

टिप्पणी

किसी भी पोषण स्तर पर जीवों की संख्या उसके निचले स्तर पर भोजन की उपलब्धता पर निर्भर करती है। निचले स्तर पर भोजन की उपलब्धताओं में वृद्धि के परिणामस्वरूप उससे ऊंचे पोषण स्तर पर जीवों की संख्या और विविधता में वृद्धि होती है। अतः प्रकृति के महत्वपूर्ण संतुलन को बनाए रखने के लिए भोजन की उपलब्धता मुख्य कारक हैं। यह संतुलन कुछ सीमाओं के अंदर गतिशील और घटता–बढ़ता रहता है। इसलिए इस संतुलन को नियंत्रित करने के लिए प्रत्येक पारितंत्र का अपना एक रचनातंत्र होता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि एक पारितंत्र में कुछ अंतर्निहित प्रक्रम होते है, जिनसे पोषक अथवा पदार्थ हस्तांतरित होते हैं। कभी किसी एक दिशा में तो कभी एक चक्र में।

आइए इनमें से कुछ चक्रों की चर्चा करें–

(स) प्राकृतिक/जैव-भूरसायन चक्र

जैव भूरासायनिक चक्र (जैविक, भूगर्भीय तथा रासायनिक अंतः क्रियाएँ) और कुछ नहीं वरन् केवल घुलनशील अजैविक पदार्थों (पोषकों) का संचलन और परिचालन है। ये घुलनशील अजैविक पदार्थ या पोषक मृदा और विविध जैविक घटकों की जैविक प्रावस्था द्वारा अजैविक तत्वों की वायुमंडलीय प्रावस्था से व्युत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार से अजैविक तत्वों जैसे मृदा और वायुमंडल के पक्ष में जैविक पदार्थों के परिचालन और संचलन की वापिसी होती है। अतः ये दोनों प्रणालियां एक दूसरे की पूरक हैं और चक्र को पूरा करती हैं। जैव–भूरासायनिक चक्रों का अध्ययन दो आधारों पर किया जा सकता है, उदाहरण के लिए (i) सभी तत्वों का सामूहिक चक्रण अथवा (ii) व्यक्तिगत तत्वों का चक्रण जैसे जल चक्र, कार्बन चक्र, नाइट्रोजन चक्र, फॉस्फोरस चक्र, आक्सीजन चक्र, सल्फर चक्र आदि। इन चक्रों के अतिरिक्त अवसाद चक्र और खनिज चक्र को भी विस्तृत जैव भूरसायन चक्र में सम्मिलित किया जाता है। ये प्राकृतिक अथवा जैव भूरासायनिक चक्र बड़े संतुलित ढंग से कार्य करता है जिससे जैवमंडल में स्थिरता आती है और पृथ्वी पर जीवन प्रक्रिया बनी रहती है। अगर हम इसमें बाधा पहुंचाते हैं तो इसके बहुत से नकारात्मक परिणाम होंगे जो अंततः जैवमंडल को प्रभावित करेंगे। आइए इनमें से कुछ चक्रों की संक्षेप में चर्चा करें। (इन चक्रों की इस पुस्तक के नवें अध्याय में पहले ही चर्चा की जा चुकी है। परन्तु यहाँ हमारी चर्चा जैवमंडल अथवा पर्यावरण से संबंधित है।)

1. जल चक्र

जल का यह चक्र वायु, स्थल, समुद्र, जीवित पौधों और प्राणियों के मध्य आदान–प्रदान में मदद करता है। जल चक्र सौर ऊर्जा से चलता है। महासागरों से भारी मात्रा में जल का वाष्पीकरण, बादलों का निर्माण और वर्षा हमें स्वच्छ जल की आपूर्ति एवं भंडार प्रदान करती है।

शून्य से कम तापमान पर वर्षा की बूंदें हिम रूप में बदल जाती है और तेज वायु चलने पर ये ओले का रूप धारण कर लेती हैं। जल का वर्षा, हिम तथा ओलों

के रूप में स्थल और जल खंडों पर वर्षण होता है। धरातल पर वर्षा जल मृदा में रिस जाता है और वहां धरातलीय जल के रूप में भरा रहता है। प्राकृतिक जल स्तर अथवा जल स्तर धरातल के नीचे स्थित होता है। जल स्तर मूलाधार मृत्तिका और शैल स्तर द्वारा समर्थित होता है। धरातलीय जल स्थिर नहीं रहता है, बल्कि विभिन्न दिशाओं में गतिशील रहता है। कोशिका कार्य द्वारा यह ऊपर आता है और धरातलीय मृदा में पहुँचता है जहाँ इसे पौधों की जड़ों द्वारा प्राप्त कर लिया जाता है।

2. नाइट्रोजन चक्र

नाइट्रोजन और इसके यौगिक जैवमंडल में जीवन की प्रक्रिया के लिए आवश्यक है। नाइट्रोजन का लगातार आदान–प्रदान होता रहता है। अपनी चयापचयी प्रक्रिया में पौधों और पशुओं द्वारा उत्पन्न प्रोटीन नाइट्रोजन के जैविक यौगिक है। मृदा में नाइट्रोजनी जैविक अवशेष का अधिकांश भार मृत एवं अपक्षयित पौधों और पशुओं के मलमूत्र से उत्पन्न होता है। मृदा से इन जैविक अवशेषों को सूक्ष्म जीवों द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। ये जीव **डीनाइट्रीकरण** प्रक्रिया द्वारा मृदा की नाइट्रेट को नाइट्रोजन में तोड़ देते हैं; जबकि अन्य जीव नाइट्रोजन को घुलनशील नाइट्रोजन यौगिकों में बदल देते हैं।

3. कार्बन चक्र

कार्बन चक्र एक अत्यंत महत्वपूर्ण रासायनिक चक्र है। वायुमंडल में कार्बन का एक छोटा सा भंडार है। जलमंडल इसका प्रमुख भंडार है जहाँ वायुमंडल से लगभग पचास गुणा अधिक मात्रा में कार्बन है। इसका समुद्र की तली पर बाइकार्बोनेट खनिज के रूप में भंडार है। यह वायुमंडल कार्बन डाइआक्साइड के स्तर को नियंत्रित करता है। यह चक्र कार्बन डाइआक्साइड के रूप में वायुमंडल जैवमंडल और महासागरों के मध्य क्रियाशील रहता है।

14.4 पारितंत्रों के प्रकार

विभिन्न आधारों पर पारितंत्र को विविध प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला और आसान वर्गीकरण का आधार आवास है। इस वर्गीकरण का मत यह है कि प्रत्येक आवास एक विशेष भौतिक पर्यावरणीय दशा को दर्शाता है। ये परिस्थितियाँ या दशाएं जैविक समूहों की प्रकृति और विशेषताओं को निर्धारित करती हैं और इसीलिए जैविक समूहों में स्थानीय विविधता पाई जाती है। इस आधार पर पारितंत्र को मोटे तौर पर दो भागों में बांटा जा सकता है – (i) स्थलीय पारितंत्र और (ii) जलीय पारितंत्र। इन पारितंत्रों को आगे बहुत से उपविभागों में विभक्त किया जाता है। हम इन दो पारितंत्रों और उनके उपविभागों की संक्षेप में चर्चा करेंगे।

टिप्पणी

(i) स्थलीय पारितंत्र

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है यह सम्पूर्ण पृथ्वी के 29 प्रतिशत भाग को घेरे हुए है। स्थलीय पारितंत्र मानव के लिए भोजन और कच्चे माल का प्रमुख स्रोत हैं। यहाँ पर पौधों और पशुओं के समूहों में जलीय पारितंत्र से अधिक विविधता है। स्थलीय जीवों में जलीय पारितंत्र की अपेक्षा सहिष्णुता की सीमा अधिक होती है लेकिन कुछ मामलों में जल स्थलीय पारितंत्र को सीमित करने का कारक बन जाता है। जहाँ तक उत्पादकता का प्रश्न है स्थानीय पारितंत्र जलीय पारितंत्र से अधिक उत्पादक है।

ऊपर दी गई चर्चा स्थलीय और जलीय पारितंत्रों के बीच तुलना है। लेकिन स्थलीय पारितंत्रों की भौतिक अवस्थाओं और जैविक समूहों पर उसकी प्रतिक्रिया में और भी विभिन्नता है। इसलिए स्थलीय पारितंत्रों को विभिन्न उपविभागों में बांटा जा सकता है। इसके प्रमुख उपविभाग हैं – (i) उच्चभूमि अथवा पर्वतीय पारितंत्र (ii) निम्नभूमि पारितंत्र (iii) मरूस्थलीय पारितंत्र। विशिष्ट प्रयोजन और उद्देश्य के आधार पर इन्हें फिर और उपविभागों में बांटा जा सकता है। जीवन के अधिकतम रूप निम्न भूमियों में पाए जाते हैं और ये ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ घटते जाते हैं, क्योंकि वहाँ आक्सीजन और वायुमंडलीय दाब घट जाता है।

(ii) जलीय पारितंत्र

यह पारितंत्र पृथ्वी के धरातल पर विभिन्न रूपों में उपस्थित 71 प्रतिशत जल का उल्लेख करता है। स्थलीय पारितंत्र की तरह जलीय पारितंत्र को भी विभिन्न उपविभागों में बांटा जा सकता है। परन्तु इस पारितंत्र के प्रमुख उप विभाग हैं – जलीय, ज्वारनदमुखीय और समुद्री पारितंत्र। इन पारितंत्रों को आगे और भी छोटे–छोटे उप विभागों में बांटा जा सकता है। अगर हम इन्हें विस्तार की दृष्टि से अथवा मापक की दृष्टि से देखें तो ये विस्तृत खुले समुद्र से लेकर छोटे तालाब तक में फैले हैं। जलीय पारितंत्र के विभिन्न प्रकारों के अंदर विभिन्नता मुख्य रूप से अजैविक कारकों से संबंधित है। लेकिन इन पारितंत्रों में रहने वाले जैविक समूहों में भी विभिन्नता मिलती है।

जैसे कि पहले भी चर्चा की जा चुकी है जलीय पारितंत्र की सीमा रेखा बनाने वाला कारक जल की वह गहराई है जहां तक प्रकाश प्रवेश कर सकता है। पोषकों की उपलब्धता और विघटित आक्सीजन का संकेंद्रण अन्य कारक हैं। अगर हम इन सब कारकों को ध्यान में रखें तो यह पता चलता है कि ज्वारनदमुखीय पारितंत्र जलीय पारितंत्र में सबसे अधिक उत्पादक हैं। समुद्री पारितंत्र में उथले महाद्वीपीय मग्न तट खुले समुद्र की अपेक्षा अधिक उत्पादक हैं। हालांकि खुले समुद्र क्षेत्रफल के अनुसार सबसे अधिक विस्तृत हैं। ये स्थलीय पारितंत्र में मरूस्थलों की भांति सबसे कम उत्पादक हैं।

एक अन्य पहलू जो जलीय पारितंत्र में जीवन की विविधता का निर्धारण करता है, वह है जीवों की अनुकूलनशीलता। कुछ जीव अनन्य रूप से जल में रहते हैं जैसे मछली, जबकि कुछ जीवों की प्रकृति जलथलीय है। कुछ महत्वपूर्ण जलथलीय जीव हैं मेंढक, मगरमच्छ, दरियाई घोड़ा और जलीय पक्षियों की विभिन्न प्रजातियाँ। आगे, जल में भी

कुछ जीव या तो केवल मीठे जल में रहते हैं या खारे जल में और कुछ जीव मीठे और खारे जल दोनों में रहते हैं। हिल्सा मछली अंतिम प्रकार का उदाहरण हैं। एचीनोडमर्स और कोलेन्ट्रेट्स केवल खारे पानी में रहते हैं। जबकि बहुत से प्रकार की मछलियाँ जैसे रेहू, कतला आदि केवल मीठे जल में पाई जाती है।

पाठगत प्रश्न 14.2

1. रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरिए –

   (अ) _____ वे हैं जो अपने भोजन का स्वयं निर्माण करते हैं।

   (ब) पौधे खाने वाले जीवों को _____ के रूप में जाना जाता है।

   (स) भोजन की आदत के आधार पर मनुष्य _____ श्रेणी में आते हैं।

   (द) सैंकड़ों अंतःसंबंधित और परस्परव्यापी खाद्य श्रृंखलाएं एक अत्यंत जटिल प्रतिरूप बनाती हैं जिन्हें _____कहते हैं।

   (य) _____ को सबसे बड़ा पारितंत्र माना जाता है।

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर अत्यंत संक्षेप में कीजिए –

   (अ) पारिस्थितिकी को परिभाषित कीजिए।

   _____

   (ब) खाद्य श्रृंखला क्या है ?

   _____

   (स) खाद्य पिरामिड क्या है ?

   _____

   (द) जैव भूरसायन चक्र क्या है ?

   _____

14.5 भूमंडलीय जलवायविक परितर्वन

हमने जैव-भूरासायनिक चक्र के अंतर्गत पढ़ा है कि पृथ्वी का वायुमंडल और जलमंडल पिछले एक अरब वर्षों और उससे भी अधिक समय से लगभग वैसे ही संतुलित रासायनिक घटकों से बना रहा है, जैसे में हम आज रहते हैं। पृथ्वी के पास वैश्विक जलवायु को स्थिर और नियंत्रित करने के लिए एक विशेष रचनातंत्र है। ये रचनातंत्र निम्न प्रकार हैं :–

टिप्पणी

(i) पौधे और पशु वायुमंडल में कार्बन डाइ–ऑक्साइड के स्तर को संतुलित रखते हैं जो वैश्विक ताप स्थायित्व का कार्य करता है। इसका अर्थ यह हुआ कि ये तत्व तापमान के संतुलन को अनुकूलतम सीमाओं में नियंत्रित किए रहते हैं।

(ii) वैश्विक जलवायु को नियंत्रित करने में जलखंड महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हाल के वर्षों में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के उपभोग के लिए पृथ्वी के संसाधनों का तेजी से दोहन, हमारी अपव्ययी जीवन शैली आदि ने वायुमंडल में कार्बन स्तर को अत्याधिक बढ़ा दिया है। इसने जलवायविक परिवर्तन की प्रक्रिया को गति प्रदान कर दी है।

आइए जलवायविक परिवर्तन को प्रभावित करने वाली कुछ प्रक्रियाओं की चर्चा करें :–

(अ) हरित गृह प्रभाव और भूमंडलीय तापन

भूमंडलीय तापन का अर्थ है वायुमंडलीय तापमान का धीरे–धीरे बढ़ना जिसके परिणामस्वरूप मुख्य रूप से मानवीय कार्यकलापों द्वारा विकिरण संतुलन में परिवर्तन होना। इससे विभिन्न स्तरों जैसे स्थानीय, क्षेत्रीय तथा वैश्विक पर जलवायु में परिवर्तन आ जाता है। हाल ही में लगाए गए अनुमानों के अनुसार यह पाया गया है कि पिछले 100 वर्षों में धरातलीय वायु का तापमान लगभग 0.5^0 सें. से 0.7^0 सें. बढ़ गया है। क्या आप जानते हैं कि ऐसा क्यों हो रहा है ? यह हरित गृह प्रभाव के कारण हो रहा है। भूमंडलीय तापन को अच्छी तरह से समझने के लिए, हमें हरित गृह की कार्य पद्धति को समझ लेना चाहिए।

हरित गृह का कार्य

ठंडे देशों में हरित गृह पौधों को उगाने के लिए बनाया जाता है। यहाँ पर कुल ऊष्मा, विशेषकर सर्दियों में, पौधों को उगाने के लिए पर्याप्त नहीं होती। हरित गृह की पारदर्शी दीवारें और छत ऐसी होती है कि ये सूर्य की रोशनी को अंदर तो आने देती हैं, परन्तु दीर्घ तरंगी विकिरण को बाहर जाने से रोकती है। अतः सूर्य की रोशनी हरित गृह की मृदा और इमारत द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। इसे फिर उस ऊष्मा के रूप में उत्सर्जित कर दिया जाता है जो शीशे में से होकर पार नहीं जा सकती। हरित गृह में ऊर्जा की मात्रा तब तक बढ़ती जाती है जब तक इसका तापमान इतना अधिक नहीं हो जाता कि शीशे से होकर इतनी ऊष्मा बाहर चली जाए जितनी ऊर्जा यह सूर्य की रोशनी के रूप में प्राप्त करता है। तदनंतर दीवारें और छत अवशोषित विकिरण को कक्ष में उत्सर्जित करती हैं। अतः दिन के दौरान अवरक्त विकिरण हरित गृह में प्रवेश करता है और वायुमंडल तथा उस स्थान को गर्म कर देता है जिस पर हरित गृह खड़ा हैं। शीशे पर विकिरण को रोकने के लिए एक पारदर्शन फिल्म चढ़ाई जाती है जिससे विकिरण का गर्म करने का प्रभाव अधिकतम हो जाता है।

इसलिए हमारी पृथ्वी एक हरित गृह बन गई है। कुछ गैसे ऐसी होती हैं जो हरित कक्ष के शीशों के फलकों का कार्य करती हैं। जिनसे सूर्य की किरणें आ तो सकती हैं परन्तु

टिप्पणी

उनके बाह्य अंतरिक्ष में बाहर निकलने को रोकती हैं और इससे वायुमंडल गर्म होता है। यह वनों के विनाश और औद्योगीकरण के कारण हो रहा है। ये गैंसे हैं – कार्बन–डाइ–आक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4) नाइट्रस ऑक्साइड (NO_X) और क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC)। इन्हीं को हरित गृह गैसों के रूप में जाना जाता है। इन चार गैसों में से कार्बन डाइ आक्साइड लगभग 55%, क्लोरो फ्लोरो कार्बन लगभग 24%, मीथेन लगभग 15% और नाइट्रस आक्साइड लगभग 6% का योगदान वायुमंडल को गर्म करने में देती है।

क्या आप इन गैसों के स्रोत जानते हैं ? जीवाश्म ईंधन और काष्ठ ईंधन के जलाने से, मोटर गाड़ियों की लंबी कतारें तथा बहुत से कारखानों से कार्बन–डाइ–ऑक्साइड उत्सर्जित होती है। धान उगाना, पशुधन, कचरे का ढेर और कोयला खदान मीथेन गैस के प्रमुख स्रोत हैं। रेफ्रीजिरेटर और वातानुकूलन मशीनों में शीतलक के रूप में वायुविलय का प्रयोग क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैस को वायुमडल में छोड़ता है। नाइट्रस ऑक्साइड मुख्य रूप से रासायनिक कारखानों, वननाशन और कुछ कृषि पद्धतियों से उत्सर्जित होती है।

यहाँ से शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में हरित गृहों के बनाने से पौधों को सुरक्षा मिलती है और पारिस्थितिक सन्तुलन बना रहता है। जबकि वायुमण्डल में हरित गृह गैसों के संकेन्द्रण से पृथ्वी का जैविक तंत्र अस्त–व्यस्त हो जाता है। श्श्श

हरित गृह प्रभाव के परिणाम

1. यह अनुमान लगाया गया है कि अगर कार्बन डाइ–ऑक्साइड के स्तर के बढ़ने की वर्तमान दर यही रही तो वायुमंडलीय तापमान 21वीं शताब्दी के अंत तक 2^0 से 3^0 से. तक बढ़ जाएगा। इसके परिणामस्वरूप बहुत सी हिमानियाँ पीछे खिसक जाएगी, ध्रुवीय क्षेत्रों में बर्फीली चोटियाँ पिघल जाएँगी और बहुत बड़े पैमाने पर विश्व के अन्य भागों में बर्फ के भंडार गायब हो जाएंगे। एक अनुमान के अनुसार अगर पृथ्वी की सारी बर्फ पिघल जाए तो सभी महासागरों की सतह पर और निचले तटीय क्षेत्रों में लगभग 60 मीटर पानी बढ़ जाएगा। भूमंडलीय तापन द्वारा समुद्री जल स्तर में केवल 50 से 100 सेंटीमीटर की वृद्धि विश्व के निचले क्षेत्रों जैसे बांग्लादेश, पश्चिम बंगाल और सघन बसे हुए तटीय शहरों जैसे शंघाई और सान फ्रांसिस्को को जलमग्न कर देगी।
2. कार्बन डाइ–आक्साइड के बढ़े हुए संकेंद्रण और उष्णकटिबंधीय महासागरों के अधिक गर्म होने के कारण अधिक संख्या में चक्रवात और हरीकेन आएंगे। पर्वतों पर बर्फ के जल्दी पिघलने से मानसून के समय अधिक बाढ़ें आएंगी। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के अनुसार बढ़ता हुआ समुद्री जल स्तर लगभग तीन दशकों में तटीय शहरों जैसे मुंबई, बोस्टन, चिट्टगांव और मनीला को जलमग्न कर देगा।
3. भूमंडलीय तापमान में जरा सी भी वृद्धि खाद्यान्न उत्पादन पर प्रतिकूल असर डालेगी। अतः उत्तरी गोलार्द्ध में गेहूँ उत्पादन क्षेत्र शीतोष्ण कटिबंध के उत्तर में खिसक जाएंगे।

टिप्पणी

4. समुद्र के ऊपरी जलस्तर के गर्म होने से महासागरों की जैविक उत्पादकता भी कम हो जाएगी। उर्ध्वाधर चक्रण द्वारा समुद्र के निचले भागों से समुद्र की सतह की ओर पोषकों का परिवहन भी कम हो जाएगा।

हरित गृह प्रभाव नियंत्रण एवं उपचारी उपाय

हरित गृह प्रभाव के लगातार बढ़ते जाने को निम्नलिखित उपायों द्वारा कम किया जा सकता है –

1. कार्बन–डाइ–आक्साइड के संकेंद्रण को अत्यंत विकसित और औद्योगिक देशों जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान तथा विकासशील देशों जैसे चीन और भारत द्वारा जीवाश्म ईंधनों के उपयोग में जोरदार कटौती करके कम किया जा सकता है।
2. वैकल्पिक सफल ईंधनों का विकास करने के लिए वैज्ञानिक उपाय किए जाने चाहिए। मीथेन, पेट्रोलियम का विकल्प हो सकती है। जलविद्युत ऊर्जा का विकास एक अच्छा विकल्प है।
3. कारखानों और मोटरगाड़ियों से खतरनाक CO_2, CFC और NO_2 के उत्सर्जन पर रोक लगनी चाहिए।
4. महानगरों में मोटर गाड़ियों को चलाने के दिनों को सीमित करना भी एक अन्य विकल्प हो सकता है। सिंगापुर और मैक्सिको शहर इस प्रथा को अपना रहे हैं।
5. उष्ण कटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय देशों में जीवाश्म ईंधनों के विकल्प के रूप में सौर ऊर्जा का विकास किया जा सकता है।
6. बायोगैस संयंत्र लगाने चाहिए जो कि घरेलू उपयोग के लिए एक पारंपरिक ऊर्जा का साधन है।
7. वनरोपण में वृद्धि करके CO_2 स्तर को निश्चित रूप से कम किया जा सकता हैं, जिससे अंततः हरित गृह प्रभाव कम होगा।

(ब) ओजोन परत अवक्षय

ओजोन परत अवक्षय की समस्या पर चर्चा करने से पहले हमको ओजोन और ओजोन परत के विषय में जान लेना चाहिए। ओजोन ऑक्सीजन का एक प्रकार है, जिसमें अधिकाधिक प्रचलित दो अणुओं (O_2) की अपेक्षा तीन अणु (O_3) हैं। यह आक्सीजन अणुओं पर सौर ऊर्जा के प्रभाव द्वारा वायुमंडल के ऊपरी भाग में बनती है। जहाँ तक इसकी स्थिति का संबंध है, यह एक पतली परत के रूप में 15 से 48 कि.मी. के बीच समतापमंडल में पाई जाती है। कुल वायुमंडलीय ओजोन का लगभग 90% भाग इसी परत में पाया जाता है। वायुमंडल के कुल आयतन के 0.002 प्रतिशत से भी कम भाग पर ओजोन पाई जाती है। परन्तु जहाँ तक पृथ्वी पर जीवन का प्रश्न है, इसका कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह सूर्य के पराबैंगनी विकिरण को अवशोषित करती है। पराबैंगनी विकिरण कई तरह से जीवों का विनाशक है। यह त्वचा कैंसर तथा मोतियाबिंद पैदा कर

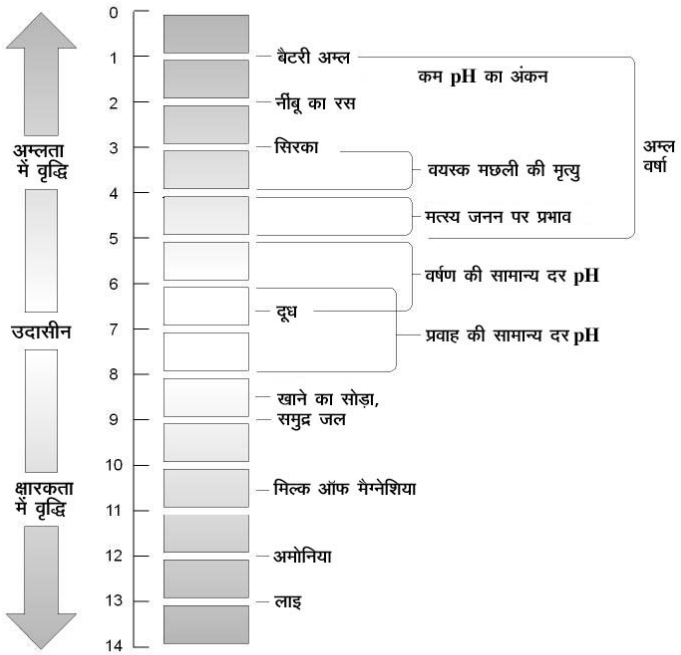

चित्र 14.5 pH का मापक

देती है। महासागरीय सतह पर सूक्ष्म जीवों को मारकर यह जलीय खाद्य श्रृंखला को बाधित कर देता है। इसके बहुत से अन्य नकारात्मक प्रभाव होते हैं जो अभी तक अज्ञात हैं।

ओजोन अवक्षय हाल ही में किए गए कुछ मानवीय क्रियाकलापों के कारण हो रहा है। कुछ रसायन समतापमंडल में पहुंचकर ओजोन के संकेन्द्रण को कम कर रहे हैं। अवक्षय मुख्य रूप से क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC), हेलन्स, मिथाइल क्लोरोफोर्म और कार्बन टेट्रा क्लोराइड्स के कारण हो रहा है। ये रासायनिक पदार्थ मुख्य रूप से या तो क्लोरीन हैं या ब्रोमाइन, जो समतापमंडल तक पहुँच सकते हैं ओर ओजोन को उत्प्रेरणीय तरह से विखंडित करके आक्सीजन में बदल देते हैं। क्लोरो फ्लोरो कार्बन गंधरहित, अज्वलनशील और विषरहित है। शुरू में वैज्ञानिकों ने सोचा कि संभवतः सी. एफ.सी. का पर्यावरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। इसी कारणवश इसका प्रयोग प्रशीतन, वातानुकूलन, फोम और प्लास्टिक के निर्माण करने में बड़े पैमाने पर किया जाने लगा।

ओजोन परत केवल पतली ही नहीं हो रही है; बल्कि कुछ स्थानों पर यह अस्थाई रूप से गायब हो गई है। 1979 से इस परत में अंटार्कटिका के ऊपर एक छिद्र विकसित हो गया है और प्रत्येक वर्ष यह अधिक से अधिक समय तक बना रहता है। सन् 1988 में पहली बार आर्कटिक के ऊपर की ओजोन परत में एक छिद्र पाया गया तथा यह भी तब से प्रत्येक वर्ष अधिक से अधिक समय तक बना रहता है।

टिप्पणी

क्या हम इस घोर विपत्ति को रोक सकते हैं? इसके लिए व्यक्तिगत और सरकारी स्तर पर हमें कुछ कार्य करने होंगे। पिछले दो दशकों से वैश्विक स्तर पर कुछ कार्यों की शुरूआत की गई है। इनमें 1987 का मोन्ट्रीयल प्रोटोकाल और 1992 की लंदन कांफ्रेंस महत्वपूर्ण है। इन दोनों ही गोष्ठियों में यह निर्णय लिया गया कि सन् 2000 तक विकसित देश सी.एफ.सी. का उत्पादन बिल्कुल बंद कर देंगे और विकासशील देश इसका उत्पादन सन् 2010 तक बंद कर देंगे। अगर इस निर्णय के मोन्ट्रियल प्रोटोकाल पर हस्ताक्षर करने वाले भारत सहित सभी 150 देशों द्वारा ईमानदारी से पालन किया जाए और इसे कठोरता से लागू किया जाए, तब भी क्लोरो फ्लोरो कार्बन और क्लोरीन का प्रभाव अगले 100 वर्षों तक बना रहेगा। इसलिए पूरे विश्व में रेफ्रीजिरेटर और वातानुकूलन के लिए प्रशीतक के रूप में प्रयोग किए जाने वाली सी.एफ.सी के विकल्प ढूंढने में वैज्ञानिक शोध कार्यों में लगे हुए हैं।

(स) अम्लीय वर्षा

'अम्लीय वर्षा' शब्द का अर्थ है वायुमंडल से तर या सूखे अम्लीय पदार्थों का पृथ्वी के धरातल पर निक्षेप। हालांकि यह साफतौर पर वर्षा से संबंधित है, परन्तु प्रदूषण–कण पृथ्वी के धरातल पर या तो हिम, सहिम वृष्टि और ओलों के रूप में गिर सकते हैं अथवा कोहरा या गैसों के सूखे रूप में पृथ्वी के धरातल पर पहुंचते हैं। अम्लीय वर्षा के लिए उत्तरदायी मुख्य कारक सलफ्यूरिक अम्ल और नाइट्रिक अम्ल को माना जाता है। परन्तु इसके लिए मुख्य रूप से मनुष्य दोषी हैं। कारखानों द्वारा उत्सर्जित धुआं सल्फर डाइ–आक्साइड का मुख्य स्रोत है, जबकि मोटर गाड़ियों से निकला धुआ नाइट्रोजन आक्साइड का मुख्य स्रोत है। ये उत्सर्जित गैसें वायुमंडलीय आद्रर्ता के साथ मिलकर सलफ्यूरिक अम्ल और नाइट्रिक अम्ल बनाती हैं, जो देर सवेर विभिन्न रूपों में पृथ्वी के धरातल पर गिर जाता है।

अम्लता को एक pH मापक पर मापा जाता है जो हाइड्रोजन आयनों के सापेक्षिक संकेन्द्रण पर आधारित है। यह मापक 0 से 14 क्रम में बंटा होता है। इसका निचला भाग अत्याधिक अम्लीयता को दर्शाता है और ऊपर का भाग अत्याधिक क्षारीयता को दर्शाता है। (देखिए चित्र 14.5) जैसाकि पहले से बताया गया है अम्लीय वर्षा वर्षण के बहुत से प्रकारों से संबंधित होती है। अगर हम स्वच्छ और धूल रहित वायु में वर्षा को देखें तो इसका मान 5.6 से 6.0 के बीच होगा जो थोड़ा सा अम्लीय होगा। जब कभी भी और जहाँ कहीं भी pH मान 5.6 से नीचे होगा तो इससे होने वाले नुकसान देखने लायक होगा।

अम्लीय वर्षण के मानवीय स्वास्थ्य और कृषि उत्पादन पर पड़ने वाले दूरगामी प्रभावों का अभी अच्छी तरह से आकलन नहीं किया गया है। परन्तु इससे सबसे अधिक सुस्पष्ट नुकसान जलीय पारितंत्र को हो रहा है। एक नदी या झील का पारितंत्र इससे सबसे अधिक प्रभावित होता है जब इसका pH मान 5 से नीचे चला जाए। ऐसे तंत्रों में कुल जीवसमूह दो से दस गुणा कम हो जाता है, क्योंकि बहुत कम जीव अम्ल को सहन कर सकते हैं। जैव विविधता भी कम हो जाती है। अम्लीयता का सबसे अधिक असर मछलियों पर होता है। अम्लीय परिस्थितियां मछलियों की प्रजनन क्षमता को कम करती

है जिसके परिणामस्वरूप मछलियों की संख्या धीरे–धीरे कम हो जाती है। यह यूरोप और उत्तरी अमेरिका के बहुत से हिस्सों में प्रमाणित हो चुका हैं। नार्वे के 33,000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में हजारों झीलों और सरिताओं में मछलियां समाप्त हो गई हैं। पिछली चौथाई शताब्दी में पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा की सैकड़ों झीलें जैविक मरूस्थल बन गई हैं। अम्लीय वर्षा का वनों पर सही–सही प्रभाव अभी तक अच्छी तरह नहीं समझा जा सका है। परंतु कुछ प्रमाण यह दर्शाते हैं कि ये वनों के मुरझाने का प्रमुख कारण हैं, यह प्रत्येक महाद्वीप में हो रहा है। वनों का मुरझाना (हाइबैक) एक जर्मन शब्द है जिसका अर्थ है वनों का मृत हो जाना या कम हो जाना। यहाँ तक कि भवन और स्मारक भी नष्ट हो रहे हैं; क्योंकि अम्ल का इन पर जमाव अपरदन क्रिया को बढ़ा देता है।

अम्लीय वर्षा एक खतरनाक वैश्विक समस्या है और इसका असर प्रदूषण पैदा होने के स्थान से बहुत दूर तक फैल सकता है। इसीलिए स्केंण्डीनेविया के देशों ने यूरोप में ब्रिटिश प्रदूषण के खिलाफ आपत्ति की है और कनाडा ने उत्तर अमेरिका में संयुक्त राज्य अमेरिका को दोषी माना है।

पाठगत प्रश्न 14.3

1. निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दीजिए–

   (अ) कोई दो कारक बताइए जो जैवमंडल की अपूरणीय क्षति के लिए उत्तरदायी हैं–

   (i) _____ (ii) _____

   (ब) किन्हीं दो प्रमुख हरित कक्ष गैसों के नाम लिखिए–

   (i) _____ (ii) _____

   (स) कार्बन डाइ–आक्साइड गैस का उत्पादन करने वाले विश्व में दो अग्रणी देश कौन से हैं?

   (i) _____ (ii) _____

   (द) वायुमंडल में साधारणतया ओजोन परत कहाँ पाई जाती है?

   (i) _____ (ii) _____

   (य) ओजोन परत को समाप्त करने के लिए उत्तरदायी किन्हीं दो प्रमुख रासायनिक पदार्थों का नाम लिखिए।

   (i) _____ (ii) _____

   (द) अम्लीय वर्षा के लिए उत्तरदायी दो मुख्य कारक कौन से हैं?

   (i) _____ (ii) _____

टिप्पणी

(ल) अम्लीय वर्षा के कोई दो मुख्य प्रभाव लिखिए।

(i) _____(ii)_____

14.6 सतत् पोषणीय विकास

आज विश्व ने बहुत उन्नति की है। मानव ने तकनीकी उन्नति और ऊर्जा संसाधनों के उपयोग की सहायता से बहुत से आविष्कार और खोज की है, जिससे उसका जीवन अधिकाधिक आरामदायक हो गया है। आज हम तकनीक, खनिज पदार्थों और ऊर्जा संसाधनों के बगैर जीवन के विषय में सोच भी नहीं सकते। यह बड़े पैमाने पर लगभग हर क्षेत्र में प्रवेश कर गया है चाहे वह कृषि, उद्योग, यातायात, संचार और घरेलू हो। क्या आज हमने कभी यह सोचा है कि यह पृथ्वी पर जीवन को कैसे प्रभावित करता है? आज की स्थिति में हमारी पारिस्थितिकी भी खतरे में है। अगर हम इसी तरह से करते रहे तो अगले 100 वर्षों में अधिकतर खनिज और संसाधन समाप्त हो जाएँगे। साथ ही इसने पारिस्थितिक मंडल के चारों घटकों को भी खतरे में डाल दिया है। ये हैं जलवायविक तंत्र, जल चक्र, पोषक चक्र और जैव विविधता। दिल्ली में यमुना जल का उदाहरण लीजिए। हमने इसके जल को इस सीमा तक प्रदूषित कर दिया है कि इस जल में दिल्ली में बहुत कम जलीय जीवन पाये जाते हैं। इस जल को साफ करने बाद भी इसका उपयोग नहीं किया जा सकता।

इसने पौधों और उनके उत्पादों को भी प्रभावित किया है। तब यह प्रश्न उठता है कि ऐसे जल का क्या फायदा जिसे उपयोग नहीं किया जा सके। हालांकि यह नवीनीकरण योग्य है। यही हाल वायु, मृदा आदि का है। मानवीय लापरवाही और स्वार्थ के कारण ये प्राकृतिक संसाधन इस सीमा तक विकृत हो गए हैं कि इनका नवीनीकरण बहुत कठिन है।

यह विकास पर ही प्रश्नचिन्ह लगा देता है। क्या इसका यह अर्थ है कि विश्व समुदाय को आगे विकास पर बिल्कुल पूर्ण विराम लगा देना चाहिए। यह बिल्कुल संभव नहीं है। यह पहेली पूरे विश्व को परेशान किए हुए है। इस महत्वपूर्ण समस्या को हल करने के लिए विवेकपूर्ण प्रयत्न किए गए। संयुक्त राष्ट्र ने नार्वे के तत्कालीन प्रधानमंत्री ग्रो हरलेम ब्रुटलेंड की अध्यक्षता में एक समिति गठित की। इस कमीशन को संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास आयोग (UNCED) के रूप में जाना जाता है। इसे ब्रुटलेंड कमीशन के नाम से भी जाना जाता है।

आयोग द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट का शीर्षक था ''हमारा साझा भविष्य''। प्रारंभ में विश्व दो समूहो में विभाजित था–विकसित और विकासशील देश और इन्होंने आपस में एक दूसरे पर दोषारोपण करना शुरू कर दिया। विकसित देशों ने विकासशील देशों पर तीव्र

जनसंख्या वृद्धि, गरीबी और प्रदूषण फैलाने वाली आदिम तकनीक के लिए दोष दिया। विकासशील देशों का तर्क था कि विकसित देशों की खर्चीली जीवन शैली ने उपलब्ध संसाधनों पर अत्यधिक दवाब डाल दिया है। लेकिन काफी जोरदार चर्चाओं और तर्कों के बाद यह अनुभव किया गया कि कुछ ऐसे समान आधार होने चाहिए जिनकी भविष्य में रक्षा करने पर विश्व एकमत हो। यह अनुभव किया गया कि पारिस्थितिकी, अर्थशास्त्र और तकनीक में संतुलन होना चाहिए। इसलिए ब्रुटलेंड आयोग ने सत्त्त पोषणीय विकास को इस प्रकार परिभाषित किया– ''भविष्य की पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता से बिना समझौता किए वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति।''

सतत् पोषणीय विकास के लिए अपनाई जाने वाली कार्यनीति

सतत् पोषणीय विकास को प्राप्त करने के लिए कुछ कार्य नीतियाँ नीचे दी गई हैं–

1. **आर्थिक विकास का पुनरुत्थान** – सतत् पोषणीय विकास द्वारा गरीबी को दूर करना चाहिए। गरीबी से पर्यावरण पर दवाब बढ़ता है, क्योंकि लोगों की जीवन शैली पर्यावरण का अवक्रमण कर देती है। उदाहरण के लिए ईंधन के लिए वनों का काटना अथवा अत्यधिक चराई द्वारा मरुस्थलों का बढ़ना। वे लोग असहाय हैं, क्योंकि उनके पास आजीविका के वैकल्पिक साधन नहीं है। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अधिकतर लोग अफ्रीका और एशिया में रहते हैं। इन लोगों को कुछ विकल्प जैसे कार्यकुशलता, प्रशिक्षण, शिक्षा आदि देने के लिए प्रयत्न किए जाने चाहिए ताकि ये अपनी आजीविका कमा सकें और गरीबी से बाहर आ सकें। अन्यथा सतत् पोषणीयता अथवा सतत् पोषणीय विकास का उद्देश्य ही समाप्त हो जाएगा। क्योंकि जब तक गरीबी रहेगी, गरीब लोग अपने जीवनयापन के लिए प्रकृति पर निर्भर बने रहेंगे।

2. **जनसंख्या का सतत् पोषणीय स्तर सुनिश्चित करना** – आज हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती जनसंख्या वृद्धि की अधिकतम दर को हल करना है, विशेषकर अफ्रीका, दक्षिण एशिया और मध्य पूर्व में। जनसंख्या विस्फोट का जीवन की गुणवत्ता, शिक्षा की उपलब्धता, स्वास्थ्य, घर, स्वच्छ पेयजल, स्वच्छता और जीवनयापन के साधनों से सीधा सम्बंध है। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या को अतिरिक्त सुविधाएँ देने में सरकार पर बहुत बोझ पड़ता है।

3. **मनुष्य की आवश्यक आवश्यकताओं को पूरा करना** – आर्थिक विकास की वृद्धि के पुनरुत्थान के लिए यह पहली शर्त है। यह सर्वविदित है कि जब तक मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी नहीं होंगी, वह विकास प्रक्रिया में हिस्सा नहीं लेगा। मनुष्य की आवश्यक आवश्यकताओं में पर्याप्त भोजन, उचित आवास, स्वच्छ जलापूर्ति और स्वास्थ्य सेवाएँ सम्मिलित हैं। पर्याप्त और गुणवत्तायुक्त भोजन दिया

टिप्पणी

जाना चाहिए ताकि उन्हें कुपोषण से बचाया जा सके और उनके शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को विकसित किया जाए ताकि बीमारियों से उनका बचाव हो सके।

4. **वृद्धि की गुणवत्ता को बदलना** – विकास के दिग्विन्यास को बदलने की आवश्यकता है। जब हम वृद्धि या विकास कहते हैं तो हमारा अभिप्राय हमेशा आर्थिक विकास अथवा भौतिक विकास से होता है, परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि विकास भौतिकवादी न हो, कम ऊर्जा की खपत हो और समान रूप से वितरित करने योग्य हो। आर्थिक और सामाजिक विकास एक दूसरे को आपस में सुदृढ़ करने योग्य हो। दूसरे शब्दों में, आर्थिक विकास को अच्छे सामाजिक विकास की ओर ध्यान देना चाहिए जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता आदि। साथ ही साथ सामाजिक विकास किसी क्षेत्र, प्रदेश और देश की अर्थव्यवस्था को बढ़ा सकता है।

5. **संसाधनों के आधार को सुरक्षित रखना और बढ़ाना** – इसके लिए नैतिक और आर्थिक तर्क हैं। नैतिक तर्क यह है कि हमें अगली पीढ़ी के लिए पोषण के लिए संसाधनों का संरक्षण करना चाहिए। इसके साथ ही हमें आर्थिक तर्क को भी समझना चाहिए। आर्थिक तर्क यह है कि हम गरीब व्यक्तियों से पर्यावरण को बचाने के लिए गरीब रहने को नहीं कह सकते। दूसरी ओर विकसित देशों में उपभोक्तावाद को चुनौती देने की आवश्यकता है। कहीं न कहीं उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रिया को आम आदमी की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में आई असमानता को दूर करना होगा। सतत् पोषणीयता में चुनौती यह है कि हम विकास को कम किए बगैर और जीविकोपार्जन के लिए संसाधनों की उपलब्धता बनाए रखते हुए कैसे संसाधनों को संरक्षित रख सकते हैं।

6. **तकनीक का पुनः अनुकूलन और जोखिम प्रबन्धन** – ऊपर वर्णित पाँच कार्यनीतियों का आशय तकनीक के दो मुख्य तरह से पुनः अनुकूलन से है। प्रथम, नवप्रवर्तन की क्षमता को विकासशील देशों में अत्यधिक बढ़ाना। द्वितीय, विकसित देशों को तकनीक के हस्तांतरण के प्रयत्न करने चाहिए। इसलिए सभी प्रकार के तकनीकी विकास में पर्यावरणीय कारकों को ध्यान में रखना चाहिए। यह जोखिम प्रबन्धन के प्रश्न से गहराई से जुड़ा हुआ है जिसमें पर्यावरणीय प्रभाव को असरदार तरीके से कम से कम करना है।

7. **निर्णय लेने में पर्यावरण और अर्थव्यवस्था को मिलाना** – अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी को एक दूसरे का विरोधी नहीं मानना चाहिए बल्कि एक दूसरे से संबंधित मानना चाहिए। सतत् पोषणीय विकास के लिए अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में अर्थशास्त्र और पारिस्थितिकी का गठबंधन आवश्यक है।

पाठगत प्रश्न 14.4

1. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए–

   (अ) संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास आयोग (UNCED) का गठन किसकी अध्यक्षता में किया गया?

   _____

   (ब) UNCED द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट का शीर्षक क्या था?

   _____

   (स) सतत् पोषणीय विकास की परिभाषा लिखिए।

   _____

   (द) सतत् पोषणीय विकास के लिए अपनाई गई किन्हीं तीन कार्यनीतियों को लिखिए।

   1. _____

   2. _____

   3. _____

आपने क्या सीखा

शायद हमारी पृथ्वी अकेला ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन पाया जाता है। जैवमंडल पृथ्वी का वह संकरा भाग है जहाँ पर जीवन सभी रूपों में मिलता है। इस भाग में जीवन इसलिए पाया जाता है; क्योंकि यहाँ पर भूमि, वायु तथा जल का सही मिश्रण उपलब्ध है। जैवमंडल के तीन प्रमुख घटक हैं। ये हैं– अजैविक, जैविक तथा ऊर्जा घटक। अजैविक घटक के उदाहरण हैं– मृदा, वायु, जल आदि जबकि पौधे, पशु और सूक्ष्म जीवाणु जैवमंडल के प्रमुख घटक हैं। तीसरा घटक ऊर्जा है जिसका प्रमुख स्रोत सूर्य है, जिसके बगैर जैवमंडल पर जीवन संभव नहीं है।

पारिस्थितिकी एक तरफ जीवों और उनके भौतिक वातावरण के बीच अंतः सम्बन्ध का अध्ययन करता है तथा दूसरी ओर जीवों के मध्य अंतःसंबंधों का अध्ययन करता है। पारितंत्र को एक ऐसे तंत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें एक दूसरे

टिप्पणी

पर निर्भर घटक आपस में अंतःसंबंध रखे हुए एक एकीकृत पूर्णता का निर्माण करते हैं। अगर हम पारितंत्र के कार्यकलापों का अध्ययन करें तो पारितंत्र का अध्ययन ऊर्जा प्रवाह, खाद्य श्रृंखला, समय और स्थान के संदर्भ में विविधता प्रारूप, जैव–भूरसायन चक्र, विकास और प्रादुर्भाव, नियंत्रण यांत्रिकी अथवा संत्रातिकी। एक पारितंत्र में घटकों तथा उपघटकों के मध्य अंतःक्रिया होती रहती है जिसमें ऊर्जा का प्रवाह निहित होता है। खाद्य श्रृंखला ऐसा ही एक उदाहरण है जिसमें एक पोषक स्तर से दूसरे पोषक स्तर में ऊर्जा का हस्तान्तरण, क्रमिक तरह से होता है। एक खाद्य श्रृंखला में ऊपर के स्तरों पर क्रमबद्ध तरह से सदस्यों या जीवों की संख्या घटती जाती है। जब विभिन्न स्तरों की संख्या को आलेखित किया जाता है तो यह एक पिरामिड का रूप धारण कर लेता है। इसीलिए इसे खाद्य पिरामिड कहते हैं। प्रत्येक पारितंत्र में एक निश्चित निहित रचनातंत्र होता है जो संतुलन बनाए रखता है। प्राकृतिक/जैव भूरसायन चक्र ऐसा ही चक्र है। भूरसायन चक्र कुछ नहीं है केवल अवसादी और अजैविक तत्वों के विभिन्न वायुमंडलीय रूप हैं। ये इसे विभिन्न जैविक घटकों के कार्बनिक रूपों से प्राप्त होते हैं और अंततः अजैविक स्थिति में पहुँच जाते हैं। जैव भूरसायनचक्र के कुछ उदाहरण हैं– जल चक्र, कार्बन चक्र, नाइट्रोजन चक्र और फास्फोरस चक्र।

पारितंत्र को विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। सबसे अधिक प्रचलित एवं आसान वर्गीकरण का आधार आवास है। इस आधार पर पारितंत्र को स्थलीय एवं जलीय पारितंत्रों में बाँटा जा सकता है। इन पारितंत्रों को फिर बहुत से उपविभागों में विभाजित किया जाता है। जैवमंडल सबसे बड़ा पारितंत्र है जो करोड़ों वर्षों से शांत रहा है। परन्तु हाल के वर्षों में मनुष्य के हानिकारक या प्रतिकूल कार्यों द्वारा इसको बहुत नुकसान पहुँचा है, इनमें से कुछ हानि अपरिवर्तनीय है। इनमें से कुछ घटनाएँ है – भूमंडलीय तापन, घटती हुई ओजोन परत, अम्लीय वर्षा, समुद्री जलस्तर में परिवर्तन आदि। आज वैश्विक स्तर पर इन समस्याओं के समाधान के लिए प्रयत्न शुरू हो चुके हैं। सार्थक परिणामों में से एक है पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र के आयोग का गठन। आयोग ने अपनी जो रिपोर्ट पेश की उसका शीर्षक था 'हमारा साझा भविष्य'। इस रिपोर्ट में संतत् पोषणीय विकास की अवधारणा को प्रतिपादित किया गया। सतत् पोषणीय विकास की परिभाषा इस प्रकार की गई ''भविष्य की पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की योग्यता से बगैर समझौता किए हुए वर्तमान पीढ़ियों की आवश्यकताओं को पूरा करना।'' सतत् पोषणीय विकास को प्राप्त करने के लिए कुछ कार्यनीतियों में सम्मलित हैं– आर्थिक वृद्धि में संशोधन, आवश्यक मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करना, जनसंख्या के पोषणीय स्तर को

टिप्पणी

सुनिश्चित करना, वृद्धि की गुणवत्ता में सुधार करना, संसाधन आधार का संरक्षण और उसकी वृद्धि, तकनीकों का पुनः अनुकूलन और जोखिम प्रबन्धन और निर्णय लेने की प्रक्रिया में पर्यावरण और अर्थशास्त्र का समागम।

पाठान्त प्रश्न

1. जैवमंडल क्या है? जैवमंडल के विभिन्न घटकों का वर्णन उपयुक्त उदाहरणों के साथ कीजिए।
2. पारितंत्र को परिभाषित कीजिए। पारितंत्र में ऊर्जा प्रवाह की व्याख्या चित्र और उदाहरण सहित कीजिए।
3. जैव भूरसायन चक्र क्या है? जलचक्र की व्याख्या उपयुक्त चित्र द्वारा कीजिए।
4. भूमंडलीय तापन के विविध कारकों एवं परिणामों का वर्णन कीजिए।
5. सतत् पोषणीय विकास की परिभाषा लिखिए। सतत् पोषणीय विकास को प्राप्त करने के लिए उपाय सुझाइए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

14.1

1. (अ) जैवमंडल (ब) जैविक (स) अपघटक
2. (अ) सूर्य (ब) जैविक (स) पौधे, पशु और सूक्ष्म जीवाणु (द) स्थलमंडल, वायुमंडल और जलमंडल

14.2

1. (अ) स्वयंपोषी (ब) शाकाहारी (स) सर्वाहारी (द) खाद्य जाल (य) जैवमंडल
2. (अ) पारिस्थितिकी जीवाणु और उनके भौतिक वातावरण के बीच अंतःसम्बन्ध है।

   (ब) खाद्य श्रृंखला जीवाणुओं द्वारा ऊर्जा का एक पोषणीय स्तर से दूसरे पोषणीय स्तर को क्रमिक हस्तांतरण है।

   (स) जब क्रमिक स्तरों पर संख्याओं को आलेखित किया जाता है तो यह एक पिरामिड का रूप धारण कर लेता है। अतः इसे खाद्य पिरामिड कहते हैं।

टिप्पणी

(द) जैव भूरसायन चक्र घुलनशील अकार्बनिक पदार्थों की गति और चक्रण के अतिरिक्त कुछ नहीं है। ये विभिन्न जैविक घटकों को कार्बनिक क्रिया द्वारा अकार्बनिक पदार्थों के चक्र से अवसादी और वायुमंडलीय क्रिया द्वारा प्राप्त होते हैं।

14.3

1. (अ) जनसंख्या की तीव्र वृद्धि, उपभोग की चिन्ताजनक दर, अपव्यय युक्त जीवन शैली (कोई दो)

(ब) कार्बन–डाइ–ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, और क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) (कोई दो)

(स) संयुक्त राज्य अमेरिका और रूस

(द) समतापमंडल

(य) एफसी, हेलोन, मिथायल क्लोरोफोर्म, कार्बन टेट्राक्लोराइड

(र) सलफ्यूरिक एसिड और नाइट्रिक एसिड

(ल) अम्लीय वर्षा के प्रभाव–

(i) बायोमास और झीलों एवं सरिताओं में जलीय जीवन को प्रभावित करता है।

(ii) वनों का नष्ट होना या ह्रास होना (iii) भवनों एवं स्मारकों का नष्ट होना

14.4

1. (अ) ग्रो हार्लेम ब्रुटलेंड

(ब) हमारा साझा भविष्य

(स) भविष्य की पीढ़ियों द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की योग्यता से बिना समझौता किए वर्तमान पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति।

(द) (i) आर्थिक वृद्धि को बढ़ाना (ii) मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति (iii) जनसंख्या के पोषणीय स्तर को सुनिश्चित करना (iv) वृद्धि की गुणवत्ता में परिवर्तन (v) संसाधन आधार का संरक्षण और उसमें वृद्धि (vi) तकनीक का पुनः अनुकूलन और जोखिम प्रबन्धन (vii) निर्णय लेने में सरकार और अर्थशास्त्र का समागम

टिप्पणी

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. कृपया अनुच्छेद 14.1 और 14.2 देखिए।
2. कृपया अनुच्छेद 14.3 पारिस्थितिकी और पारितंत्र और इसका भाग (अ) पारितंत्र में ऊर्जा प्रवाह देखिए।
3. कृपया अनुच्छेद 14.3 (स) प्राकृतिक/जैव भूरासायनिक चक्र देखिए।
4. कृपया अनुच्छेद 14.5 (अ) हरित कक्ष प्रभाव और भूमंडलीय तापन देखिए।
5. कृपया अनुच्छेद 14.6 देखिए।

15

जीवोम

पिछले पाठ में आप जैवमंडल के विभिन्न रूपों में विषय में पढ़ चुके हैं। हमने इस बात की भी चर्चा की थी कि जैवमंडल के विभिन्न घटक कैसे परस्पर क्रिया करते हैं और कैसे एक–दूसरे के पूरक बनते हैं। पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के जीवन के लिए सूर्य एक मात्र ऊर्जा का स्रोत है। परन्तु पृथ्वी के धरातल पर सौर ऊर्जा का वितरण विभिन्न कारणों से बदल जाता है। इन कारणों के विषय में आप पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं। यही कारण है कि गर्म आर्द्र से आर्द्र ठंडे शुष्क क्षेत्रों के जैविक जीवन में बहुत अन्तर मिलता है। अतः विभिन्न भौगोलिक पर्यावरणों में पौधों और पशु जीवन का संकलन हो जाता है। इस संदर्भ में हम विविध जैविक जीवनों और उनकी पारस्परिक क्रियाओं के विषय में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- परिस्थितिकी, पारितंत्र, ऊर्जा प्रवाह आदि शब्दों के अर्थ याद कर सकेंगे;
- जीवोम की परिभाषा बता सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार के जीवोमों को पहचान सकेंगे;
- विश्व मानचित्र पर विभिन्न प्रकार के जीवोमों को प्रदर्शित कर सकेंगे;
- इन जीवोमों की पर्यावरणीय स्थितियों का वर्णन कर सकेंगे;
- पौधों और जानवरों के समुदायों के बीच संबंध स्थापित कर सकेंगे;
- उस क्षेत्र के जैविक जीवन के साथ मानवीय अनुक्रियाओं की विवेचना कर सकेंगें।

15.1 जीवोम का अर्थ

जीवोम शब्द जैविक घर का संक्षिप्त रूप है। जहाँ तक जीवोम की परिभाषा एवं वर्गीकरण का संबंध है, वैज्ञानिक इस संदर्भ में एक मत नहीं हैं। जीवोम को एक वृहत

टिप्पणी

प्राकृतिक पारितंत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें हम पौधों और जानवरों के समुदायों के कुल संकलन का अध्ययन करते हैं। यहाँ पर सभी जीव-जन्तुओं में न्यूनतम समान विशेषताएँ होती हैं और जीवोमों के सभी क्षेत्रों में प्रायः समान पर्यावरणीय परिस्थितियाँ पाई जाती हैं। हालांकि जीवोम में पौधे और जीव प्राणी समुदाय दोनों सम्मलित होते हैं, परंतु साधारणतया एक जीवोम को वहाँ की प्रमुख वनस्पति के आधार पर जाना जाता है और उसी के आधार पर उसका नामकरण होता है। ये वनस्पतियाँ वहाँ के भूदृश्य को स्पष्टरूप से परिलक्षित करने वाली घटक हैं। बायोमास से हमारा अभिप्राय जीवोम में पाए जाने वाले सभी जीवित-जीवाणुओं – पौधे और प्राणियों के कुल भार से हैं।

जीवोम को प्रभावित करने वाले कारक

बहुत से कारक हैं जो जीवोम के आकार, स्थिति और उसकी विशेषताओं को प्रभावित करते हैं। महत्वपूर्ण कारक निम्न प्रकार हैं–

(i) दिन के प्रकाश और अंधेरे की अवधि। यह मुख्य रूप से प्रकाश संश्लेषण की अवधि के लिए उत्तरदायी हैं।

(ii) औसत तापमान तथा ताप परिसर – चरम दशाओं को जानने के लिए (दैनिक तथा वार्षिक दोनों)।

(iii) वर्धनकाल की अवधि।

(iv) वर्षण जिसके अंतर्गत वर्षण की कुल मात्रा एवं समय और तीव्रता के अनुसार इसमें परिवर्तन सम्मलित हैं।

(v) पवन प्रवाहः गति, दिशा, अवधि और अंतराल सम्मलित हैं।

(vi) मृदा प्रकार।

(vii) ढाल।

(viii) अपवाह।

(ix) अन्य पौधे और पशु जातियाँ।

15.2 जीवोम का वर्गीकरण

जीवोम के वर्गीकरण के दो प्रमुख आधार हैं। इस भाग में हम दो वर्गीकरणों की चर्चा करेंगे जो आसान और सब जगह प्रयोग किए जाते हैं। इन दो वर्गीकरणों के आधार और इनके विभिन्न प्रकारों की चर्चा नीचे की गई है।

(अ) जलवायु के आधार पर जिसमें आर्द्रता की उपलब्धता पर विशेष बल दिया गया है

इस आधार के अनुसार जीवोम का निर्धारण आर्द्रता की उपलब्ध मात्रा के अनुसार किया

टिप्पणी

जाता है। जहाँ आर्द्रता प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती हैं वहाँ वन जीवोम की प्रधानता रहती है और जहाँ आर्द्रता कम होती है वहाँ मरुस्थलीय जीवोम की। परंतु प्रत्येक जीवोम में तापमान की दशाएँ भिन्न उच्चावचों और भिन्न अक्षाशों के मध्य भिन्न भिन्न होती हैं। परिणामस्वरूप प्रत्येक जीवोम को उप विभागों में बांटने की आवश्यकता पड़ती है। इस वर्गीकरण के अनुसार जीवोम के चार प्रमुख प्रकार हैं–

(i) वन जीवोम

(ii) सवाना जीवोम

(iii) घासभूमि जीवोम

(iv) मरुस्थल जीवोम

(ब) जलवायु एवं वनस्पति के आधार पर

इस वर्गीकरण का तर्क है कि पौधों और प्राणी जातियों के विश्व वितरण प्रतिरूप का विश्व के जलवायु प्रकारों से घनिष्ट संबंध है। अतः इस संबंध के आधार पर विश्व को विभिन्न जीवोमों में विभाजित किया गया है। जीवोमों का सबसे प्रमुख घटक वनस्पति है; क्योंकि वनस्पति और जलवायु का घनिष्ट संबंध है। इसीलिए विश्व को जलवायु के अनुसार विभिन्न जीवोमों में बांटा जाता है। पुनः इन जलवायु आधारित जीवोमों को वनस्पति के आधार पर विभिन्न उप विभागों में बाँटा गया है। नीचे दी गई सारणी संख्या 15.1 देखिए।

सारणी संख्या 15.1
जलवायु और वनस्पति के आधार पर जीवोमों का वर्गीकरण

प्रथम क्रम के जीवोम (जलवायु पर आधारित)	द्वितीय क्रम के जीवोम (वनस्पति पर आधारित)	तृतीय क्रम के जीवोम (जलवायु और वनस्पति पर आधारित)
1. उष्णकटिबन्धीय जीवोम	(i) उष्ण कटिबन्धीय वन जीवोम	(अ) सदाहरित वर्षा वन जीवोम
		(ब) अर्द्ध सदाहरित वन जीवोम
		(स) पर्णपाती वन जीवोम
		(द) अर्द्ध पर्णपाती वन जीवोम
		(य) मोननि वन जीवोम
		(र) दलदली वन जीवोम
	(ii) सवाना जीवोम	(अ) सवाना वन जीवोम
		(ब) सवाना घासभूमि जीवोम
	(iii) मरुस्थलीय जीवोम	(अ) शुष्क मरुस्थलीय जीवोम
		(ब) अर्द्ध शुष्क जीवोम
2. शीतोष्ण कटिबन्धीय	(i) बोरियल वन जीवोम (टैगा वन जीवोम)	(अ) उत्तरी अमेरिकन जीवोम
		(ब) एशियाटिक जीवोम

टिप्पणी

		(स) पर्वतीय वन जीवोम
	(iii) शीतोष्ण कटिबन्धीय पर्णपाती वन जीवोम	(अ) उत्तरी अमेरिकन जीवोम (ब) यूरोपियन जीवोम
	(iii) शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम	(अ) सोवियत स्टैपी जीवोम (ब) उत्तरी अमेरिकन प्रेयरी जीवोम (स) पम्पा जीवोम
	(iv) भूमध्यसागरीय जीवोम	(अ) आस्ट्रेलियन घासभूमि जीवोम (ब) दक्षिणी गोलार्द्ध जीवोम
	(v) उष्ण शीतोष्ण जीवोम	
3. टुण्ड्रा जीवोम	(i) आर्कटिक टुण्ड्रा जीवोम	
	(ii) अल्पाइन टुण्ड्रा जीवोम	

सारणी 15.1 से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि विश्व के विभिन्न भागों में बहुत से जीवोम पाए जाते हैं। विस्तृत अध्ययन के लिए तीन जीवोम अर्थात् प्रत्येक जलवायविक कटिबन्ध से एक जीवोम को चुना गया है। वे तीन जीवोम हैं–

(i) सदाहरित वर्षा वन जीवोम

(ii) शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम

(iii) आर्कटिक टुण्ड्रा जीवोम

15.3 सदाहरित वर्षावन जीवोम

(i) भौगोलिक पृष्ठभूमि

यह जीवोम विषुवत वृत्त के दोनों ओर 10^0 अक्षांश तक विस्तृत है। इसके अंतर्गत दक्षिण अमेरिका की अमेजन बेसिन की निम्न भूमि, विषुवतीय अफ्रीका का कांगो बेसिन और दक्षिण पूर्वी एशिया के द्वीपों (सुमात्रा से न्यूगिनी तक) के क्षेत्र सम्मिलित हैं। ये क्षेत्र चित्र 15.2 में दिखाए गए हैं।

इस क्षेत्र में वर्ष भर तापमान ऊँचा रहता है तथा वार्षिक ताप परिसर 2^0 सेल्सियस तक होता है। यहाँ दैनिक ताप परिसर वार्षिक ताप परिसर की अपेक्षा अधिक होता है। इस क्षेत्र में भारी वर्षा 150 सें.मी. से 250 सें.मी. के बीच होती है। वर्षा वर्ष भर होती है। वर्षा प्रायः प्रतिदिन दोपहर के बाद होती है। अधिक तापमान के कारण अधिक मात्रा में जलवाष्प वायुमंडल में पहुँच जाता है, इसलिए यहाँ अधिक वर्षा होती है। यह क्षेत्र सम जलवायु वाला क्षेत्र समझा जाता है, क्योंकि तापमान और वर्षा दोनों ही पूरे वर्ष अधिक रहते हैं।

टिप्पणी

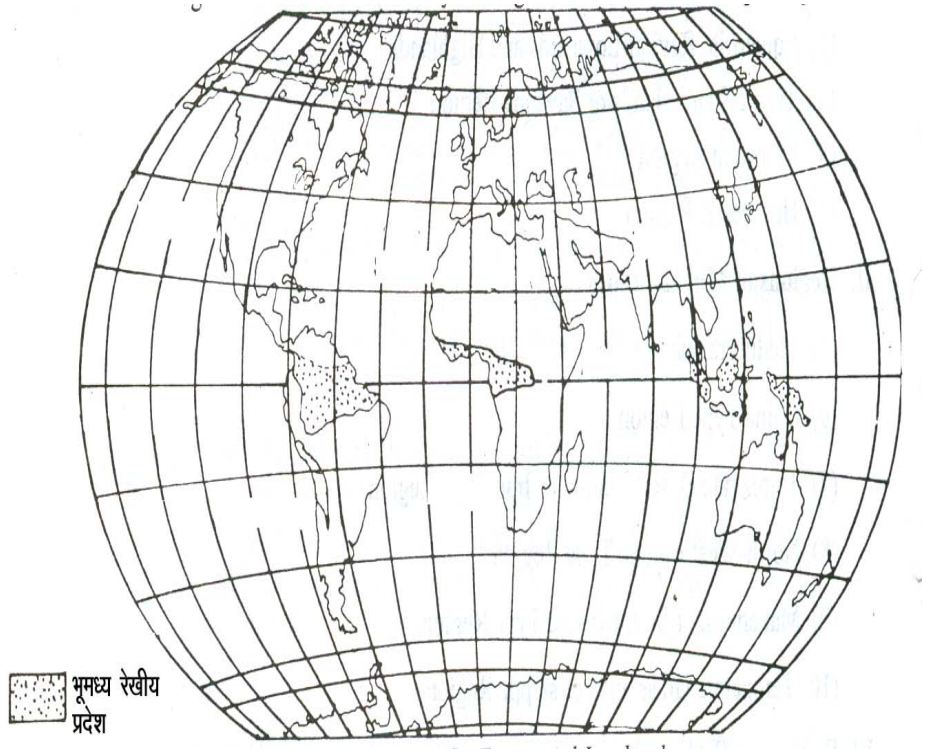

चित्र 15.1 सदाहरित वर्षावन जीवोम

(ii) प्राकृतिक वनस्पति एवं प्राणि जीवन

गर्मी और आर्द्रता के संयोजन ने इस जीवोम को अनेक प्रकार के पौधों और पशु प्रजातियों के लिए एक आदर्श पर्यावरण प्रदान किया है। पौधों की प्रजातियों की विभिन्नता इस तथ्य से पता चलती है कि एक वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में पौधों की लगभग एक हजार प्रजातियाँ मिलती हैं। अधिकतर वृक्षों के तने चिकने, उथली जड़ें एवं चौड़ी सदाबहार पत्तियाँ होती हैं। सदाहरित वर्षावनों को तीन स्तरों में बाँटा जाता है। (अ) छतरी अथवा ऊपरी स्तर जहाँ पर वृक्ष लगभग 20 से 50 मीटर तक ही ऊँचे होते हैं। इनमें अधिकतर वृक्ष कठोर लकड़ी वाले होते हैं जैसे एबोनी, महोगनी, रोज़वुड, संदलवुड, सिनकोना आदि। (ब) मध्यवर्ती भाग का द्वितीय स्तर जहाँ पर वृक्ष लगभग 10 मीटर से 20 मीटर तक ऊँचे होते हैं। इस समूह का सबसे महत्वपूर्ण वृक्ष ताड़ का वृक्ष है। ताड़ के वृक्षों के अतिरिक्त इस परत में अधिपादप और परजीवी पौधे भी पाए जाते हैं। (स) तीसरा अथवा निम्न स्तर पर वृक्षों की ऊँचाई धरातल से लगभग 10 मीटर होती है। इस वर्ग के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के पौधे पाए जाते हैं जैसे आर्किड, पर्णांग, जड़ी–बूटी, केले तथा अनन्नास आदि के पौधे। ऊँचे तथा चौड़ी पत्ती वाले घने वृक्षों के कारण सूर्य की रोशनी निम्न स्तर अर्थात धरातल तक नहीं पहुँच पाती है। इस स्तर पर प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया कम होने के कारण पौधों की प्रजातियाँ की संख्या बहुत कम है।

वनस्पति की तरह सदाहरित वर्षा वनों में असंख्य पक्षी, स्तनधारी जीव, कीट–पतंगे आदि

टिप्पणी

रहते हैं। इस जीवोम के कुछ महत्वपूर्ण प्राणी हैं – जगुआर, लैमूर, ओरांग उटान, हाथी आदि। मकाऊ तोता, शाखालंबी और टूकन इस क्षेत्र के कुछ महत्वपूर्ण पक्षी हैं। अधिकतर पक्षी चटकीले रंग के हैं। विषुवतीय क्षेत्रों के जलीय भाग प्राणि जीवन में धनी हैं। यहाँ पर कछुए, घड़ियाल, मछलियाँ, मेंढक, दरियाई घोड़ा आदि पाए जाते हैं। निचले भाग में घनी वनस्पति और अप्रवेश्य होने के कारण अधिकतर कीट पतंगे, और प्राणी वृक्षों की शाखाओं पर रहते हैं। सामान्यता ये धरातल पर नीचे नहीं आते हैं।

उष्ण कटिबन्धीय वर्षा वनों में उत्पादकता विश्व के सभी प्रकार के जीवोमों से अधिक हैं। वर्षावन जीवोम विश्व के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के केवल 13 प्रतिशत भाग पर पाए जाते हैं; परंतु ये जीवोम विश्व की कुल उत्पादकता के 40 प्रतिशत के लिए जिम्मेदार हैं।

(iii) मानवीय अनुक्रियाएँ

मानव ने विभिन्न विकासात्मक अनुक्रियाओं द्वारा जैविक रूप से धनी इस पारितंत्र को भी क्षति पहुँचानी प्रारंभ कर दी है। इन अनुक्रियाओं में विशाल बाँधों, जलाशयों, सड़कों और राजमार्गों का बनना, इमारती लकड़ी के लिए जंगलों का काटना, घास मैदानों और फसलों के लिए वनों को साफ करना तथा भूमिहीन किसानों द्वारा वनों की सफाई करके जबरदस्ती भूमि कब्जाना आदि सम्मलित हैं।

पारिस्थितिकी विज्ञानी कहते हैं कि अगर वनों का सफाया इसी दर से होता रहा तो विश्व के वर्षा वनों के सन् 2020 तक गायब हो जाने अथवा नष्ट हो जाने की संभावना है। इससे जैविक संपत्ति की अपूर्णनीय क्षति होगी। वर्षा वनों में पौधों और पशुओं की सम्पूर्ण ज्ञात प्रजातियों का 40 प्रतिशत भाग है। वर्षा वनों के सफाये से मूल्यवान प्राकृतिक संसाधनों जैसे कठोर लकड़ी के वृक्ष और वृक्ष उत्पाद जैसे कुनैन, रबड़, वनस्पतिक गोंद आदि नहीं मिल सकेंगे।

यह क्षति केवल पारिस्थिक ही नहीं बल्कि इससे बड़े पर्यावर्णीय दुष्परिणाम होंगे। सदाहरित वन भूमंडलीय मौसम प्रतिरूपों को नियंत्रित करके विविध पर्यावरणीय सेवाएँ प्रदान करते हैं। ये उष्ण कठिबन्धीय प्रदेशों में मृदा अपरदन तथा नदियों में आई बाढ़ को रोककर भी ये सेवाएँ प्रदान करते हैं। प्रमाण सिद्ध करते हैं कि उष्ण कटिबन्धीय वननाशन ने एक महत्वपूर्ण कार्बन सिंक को हटाकर हरित गृह प्रभाव और भूमंडलीय तापन को पैदा किया है।

पाठगत प्रश्न 15.1

1. एक वाक्य में उत्तर दीजिए–

   (i) उत्तरी एवं दक्षिणी गोलार्द्धों में उष्णकटिबन्धीय सदाहरित वनों का अक्षांशीय विस्तार क्या है?

टिप्पणी

(ii) उष्णकटिबन्धीय सदाहरित वनों में दिन के किस भाग के दौरान अधिकांश वर्षा होती है।

_____

(iii) उष्ण कटिबन्धीय सदाहरित वन जीवोम में पौधों की प्रजातियों को किन तीन स्तरों में क्रमबद्ध किया है?

(अ)_____ (ब)_____ (स)_____

(iv) उष्णकटिबन्धीय सदाहरित वनों में वननाशन के लिए उत्तरदायी किन्हीं तीन कारकों को बताइए।

(अ)_____ (ब)_____ (स)_____

(iv) उष्णकटिबन्धीय सदाहरति वनों में वननाशन के दो मुख्य पर्यावर्णीय दुष्परिणाम कौन से हैं?

(अ)_____ (ब)_____ (स)_____

15.4 शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम

(i) भौगोलिक पृष्ठभूमि

शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमियाँ दो विशिष्ट स्थानों पर स्थित हैं– उत्तरी गोलार्द्ध में महाद्वीपों के आंतरिक भागों में और दक्षिणी गोलार्द्ध में महाद्वीपों के सीमांत प्रदेशों में। इसलिए दक्षिणी गोलार्द्ध की शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमियों की जलवायु उत्तरी गोलार्द्ध की घासभूमियों की अपेक्षा संतुलित है, क्योंकि इनके तट के समीप होने के कारण इन पर समुद्री प्रभाव अधिक है। उत्तरी गोलार्द्ध की घासभूमियों की विशेषता उनकी महाद्वीपीय जलवायु है, जहाँ पर गर्मियों में अधिक तापमान और शीत ऋतु में तापमान हिमांक बिन्दु से नीचे चला जाता है। हालांकि दक्षिणी गोलार्द्ध की घासभूमियाँ तट के साथ स्थित हैं, परन्तु ये ऊँचे तटवर्ती पर्वतों के वृष्टि छाया क्षेत्रों में स्थित हैं। इसलिए यहाँ पर वर्षा बहुत कम होती है।

ये घासभूमियाँ सभी महाद्वीपों में पाई जाती हैं, जो भिन्न–भिन्न नामों से जानी जाती हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में ये घासभूमियाँ काफी विस्तृत हैं। यूरेशिया महाद्वीप में इन्हें स्टेपी कहते हैं। ये काला सागर के तट से पूर्व की ओर चीन में मंचूरिया के मैदान तक विस्तृत हैं। उत्तरी अमेरिका में ये घासभूमियाँ काफी बड़े क्षेत्र पर फैली हुई हैं तथा इन्हें यहाँ प्रेयरी कहते हैं। ये क्षेत्र राकी पर्वत और महान झीलों के बीच विस्तृत हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में ये घासभूमियाँ उतनी विस्तृत नहीं हैं। अर्जेन्टीना और उरूग्वे में इन घासभूमियों को पम्पास कहते हैं। दक्षिण अफ्रीका में ये घासभूमियाँ ड्रेकन्सबर्ग पर्वत और कालाहारी मरुस्थल के बीच स्थित हैं तथा इन्हें यहाँ वेल्ड कहते हैं। आस्ट्रेलिया में इन घासभूमियों को डाउन्स कहते हैं तथा ये दक्षिण आस्ट्रेलिया में मरे–डार्लिंग नदियों की द्रोणी में स्थित हैं। ये सभी घासभूमियाँ शीतोष्ण कटिबन्ध में स्थित हैं, इसलिए इन्हें शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमियाँ भी कहते हैं।

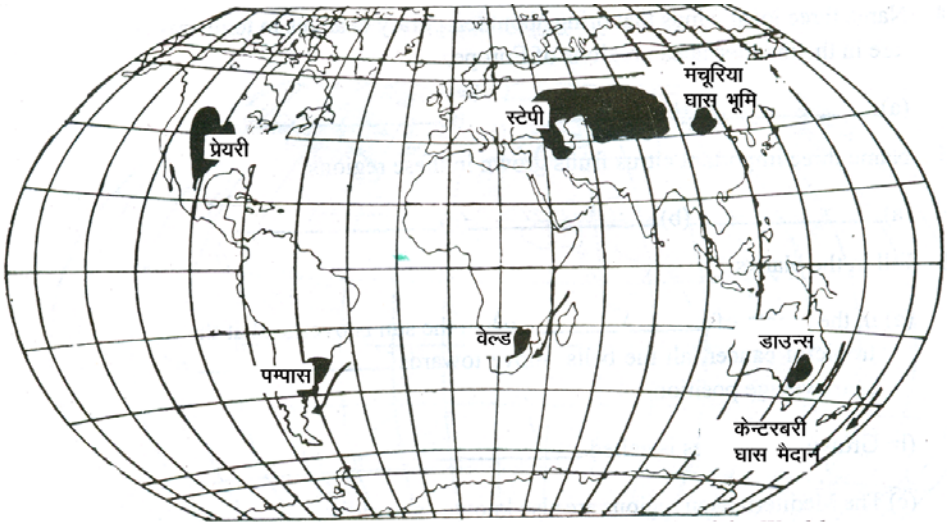

चित्र 15.2 शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम

(ii) प्राकृतिक वनस्पति एवं प्राणि जीवन

यहाँ पर वर्षा की मात्रा इतनी कम है कि पेड़ नहीं उग सकते, परंतु वर्षा की मात्रा घास उगने के लिए पर्याप्त है। इसलिए इन प्रदेशों की प्राकृतिक वनस्पति वृक्ष रहित घासभूमियाँ हैं। वृक्ष केवल पहाड़ी ढलानों पर दिखाई देते हैं, जहाँ पर वर्षा की मात्रा अधिक है। वर्षा की मात्रा और मृदा के उपजाऊपन के अनुसार घास की ऊँचाई स्थान–स्थान पर भिन्न–भिन्न है। स्टेपी घासभूमियों की छोटी एवं पौष्टिक घास विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन प्रदेशों में घास के उगने का समय ऋतुओं के अनुसार भिन्न–भिन्न होता है। वसन्त ऋतु प्रारंभ होते ही छोटी घास हरी भरी, ताजी तथा छोटे–छोटे विभिन्न रंगों के फूलों से सुन्दर दिखायी देने लगती है। ग्रीष्म ऋतु में अधिक तापमान और अधिक वाष्पीकरण होने के कारण हरी घास बिल्कुल मुरझाकर समाप्त हो जाती है, लेकिन इस घास की जड़ें धरातल में जिन्दा रहती हैं और पूरी शीत ऋतु में निष्क्रिय पड़ी रहती हैं। जैसे ही बसन्त ऋतु प्रारंभ होती है, ये फिर हरी भरी हो जाती हैं।

ये घासभूमियाँ विभिन्न प्रकार के जीवों के प्राकृतिक आवास हैं। इनमें से प्रमुख हैं हिरण, जंगली गधे, घोड़े, भेड़िया, कंगारू, ऐमू तथा डिंमू अथवा जंगली कुत्ता।

(iii) मानवीय अनुक्रियाएँ

कोई अन्य जीवोम इतने परिवर्तनों से नहीं गुजरा जितना कि शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम। यह सब कुछ मानवीय अनुक्रियाओं के कारण हुआ है। (i) अधिकतर घासभूमियों को कृषि भूमियों में बदल दिया गया है, जो अब विश्व के प्रसिद्ध अनाज भंडार बन गए हैं। (ii) दूसरा निर्णायक कारक जो इस अछूती भूमि को बदलने के लिए

टिप्पणी

उत्तरदायी है वह है– पशुचारण अथवा पशुपालन। आज इस तरह की अछूती घासभूमि मुश्किल से देखने को मिलती हैं। (iii) बड़े पैमाने पर जानवरों के शिकार करने के कारण कुछ जानवरों की संख्या बहुत कम हो गई है और कुछ जीव विलुप्त हो गए हैं। उदाहरण के लिए बहुत से जानवरों की प्रजातियाँ जैसे हिरण, जेबरा, शेर, तेंदुआ आदि यूरोपियन अप्रवासियों द्वारा बड़े पैमाने पर शिकार करने के कारण अफ्रीकन वेल्ड से गायब हो गए हैं। (iv) यहाँ पर प्राणी और पौधों की नई प्रजातियों के प्रारंभ करने से देसी वनस्पति का संघटन बिल्कुल परिवर्तित हो गया है। उदाहरण के लिए आस्ट्रेलिया में यूरोपियन लोगों द्वारा भेड़ पालन शुरू करने के कारण वनस्पति संघटन बदल गया है। पहले की वनस्पति यहाँ के देसी धानी प्राणियों के लिए उपयुक्त थी। इसी तरह आस्ट्रेलिया की शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमियों में फलीदार वृक्षों की खेती प्रारंभ करने के कारण देसी सदाबहारी घासों की सैकड़ों प्रजातियाँ दबकर रह गई हैं।

पाठगत प्रश्न 15.2

1. कोष्ठक में दिये गए शब्दों में से उपयुक्त शब्द चुनकर रिक्त स्थान भरिए–

   (खाद्य भंडार, आंतरिक, निम्न, अधिक, कम)

   (अ) उत्तरी गोलार्द्ध की मध्य अक्षांशीय घासभूमियाँ महाद्वीपों के _____ भाग में स्थित हैं।

   (ब) मध्य अक्षांशी घासभूमियाँ में वार्षिक वर्षण बहुत _____ है।

   (स) उत्तरी गोलार्द्ध में घासभूमियाँ बहुत विस्तृत हैं; जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध में घासभूमियाँ _____ विस्तृत हैं।

   (द) मध्य अक्षांशीय घासभूमियाँ संसार के _____ के रूप में जानी जाती हैं।

2. निम्नलिखित को मिलाइए–

महाद्वीप		**घास भूमियों के नाम**	
(अ)	दक्षिण अफ्रीका	(i)	प्रेयरी
(ब)	यूरेशिया	(ii)	पम्पास
(स)	उत्तरी अमेरिका	(iii)	वेल्ड
(द)	आस्ट्रेलिया	(iv)	स्टेपी
(य)	दक्षिण अमेरिका	(v)	डाउन्स

15.5 आर्कटिक टुण्ड्रा जीवोम

(i) भौगौलिक पृष्ठभूमि

यह वास्तव में एक ठंडा मरुस्थल है जिसमें वायुमंडलीय नमी नगण्य होती है और ग्रीष्म

टिप्पणी

ऋतु इतनी छोटी और ठंडी होती है कि वृक्ष अपने आपको बनाए रखने में असमर्थ होते हैं। यह जीवोम उत्तरी गोलार्द्ध के उत्तरी भागों में फैला हुआ है। इसके अंतर्गत अलास्का के कुछ भाग, कनाडा के उत्तरी भाग, ग्रीनलैंड के तटवर्ती भाग और रूस के आर्कटिक समुद्रतटीय क्षेत्र तथा उत्तरी साइबेरिया सम्मलित हैं। (देखिए चित्र 15.3)।

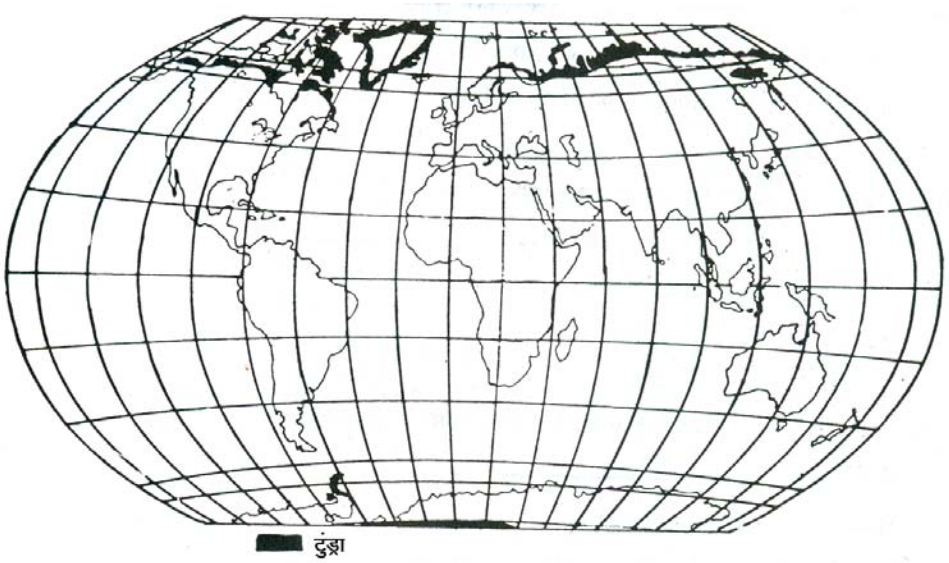

चित्र 15.3 आर्कटिक टुण्ड्रा जीवोम

(ii) प्राकृतिक वनस्पति तथा प्राणि जीवन

यहाँ के पौधों के आवरण में इनकी बहुत सी प्रजातियों का मिश्रण सम्मिलित है। इनमें से बहुत सी प्रजातियाँ बौने आकार की हैं जैसे घास, मॉस, लिचिन, फूलदार औषधीय वनस्पति और जहाँ–तहाँ फैली हुई छोटी झाड़ियाँ। ये सभी पौधे सघन रूप से धरातल को ढके रहते हैं। छोटी सी ग्रीष्म ऋतु में ये पौधे अपने वार्षिक चक्र को जल्दी से पूरा कर लेते हैं। इस छोटी सी ग्रीष्म ऋतु में धरातल अक्सर नमीयुक्त तथा जलाक्रांत होता है, क्योंकि धरातलीय अपवाह ठीक नहीं है।

इस जीवोम में पशुओं को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है– (i) आवासी (ii) अप्रवासी। आवासी जैसे टारमिगन बदलती हुई जलवायविक दशाओं के अनुरूप अपने आपको ढाल सकते हैं। इसके विपरीत अप्रवासी जीव शीत ऋतु प्रारंभ होते ही गर्म स्थानों की ओर चले जाते हैं, उदाहरण के लिए पक्षी जैसे मुदगाबी, बत्तख, हंस, गीज आदि को शरद ऋतु के प्रारंभ में ही अपने मूल स्थान को छोड़कर चले जाते हैं तथा अगले बसन्त अथवा ग्रीष्म ऋतु के प्रारंभ में लौटते हैं। मच्छर, मक्खियाँ तथा अन्य कीट पतंगे छोटी सी गर्म ऋतु में बहुत अधिक संख्या में उत्पन्न हो जाते हैं तथा अंडे देते हैं जो कठोर शीत ऋतु में भी जीवित रह सकते हैं। अन्य प्रकार के जीवों की यहाँ कमी है। स्तनधारी जीवों की कुछ प्रजातियाँ और मीठे जल की मछलियों के पाए जाने के अतिरिक्त यहाँ पर रेंगने वाले जीव अथवा उभयचर बिल्कुल नहीं पाए जाते। इनके

टिप्पणी

अतिरिक्त रेंडियर, भेड़िया, लोमड़ियाँ, कस्तूरी बैल, आर्कटिक खरगोश, सील तथा लेमिंग्स आदि जानवर भी यहाँ रहते हैं। टुण्ड्रा जीवोम में उत्पादकता बहुत कम है।

- स्वयंपोशी प्राथमिक उत्पादकों द्वारा प्रति यूनिट क्षेत्र और प्रति यूनिट समय में जमा की गई कुल ऊर्जा की मात्रा को उत्पादकता कहते हैं।

निम्न उत्पादकता के कारण हैं– (i) न्यूनतम सूर्य प्रकाश और सूर्यातप (ii) भूमि में पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन और फास्फोरस की कमी अथवा बिल्कुल न होना (iii) कम विकसित मृदा (iv) मृदा में नमी की कमी (v) धरातल का स्थाई रूप से बर्फ से ढके रहना (vi) बहुत छोटा वर्धन काल।

ग्रीष्म ऋतु में बर्फ के पिघलते ही टुण्ड्रा में जीवन फिर लौट आता है, इस समय फूलों वाले पौधे मच्छरों और मक्खियों की बहुत बड़ी संख्या को आश्रय देते हैं और बदले में ये बहुत बड़ी संख्या में अप्रवासी मुर्गाबियों को भोजन प्रदान करते हैं।

(iii) मानवीय अनुक्रियाएँ

यहाँ के कठोर वातावरण में बहुत कम लोग रह पाते हैं। यूरेशियन टुण्ड्रा में सेमोयड्स, लैप्स, फिन्स तथा याकूत जनजातियाँ तथा कनाड़ा और अलास्का के एस्कीमो लोग यहाँ के मूल निवासी हैं और सदियों से चलवासी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ये जातियाँ अब स्थाई अथवा अर्द्धचलवासी जीवन व्यतीत कर रही हैं। इन्होंने नई तकनीकों को अपना लिया है। उदाहरण के लिए घातक राइफलों ने परम्परागत और पुराने हारपून का स्थान ले लिया है। अतः नवीनतम तकनीक से लैस आधुनिक एस्किमो आज टुण्ड्रा पारितंत्र को नष्ट करने के लिए उसी स्थिति में हैं जिसमें तकनीकी रूप से विकसित मानव ने अन्य जीवोमो में किया है। यूरेशियन टुण्ड्रा के सेमोयड्स तथा अन्य जातियों ने नई जीवन शैली को अपना लिया है। इनमें से कुछ स्थाई रूप से एक स्थान पर रह रहे हैं। ये रेंडियर और फरवाले अन्य जानवरों को पालते हैं और साइबेरियन टुण्ड्रा में खाद्य फसलों में मुख्यतः गेहूँ की खेती करते हैं। हाल के वर्षों में खनिजों की खोज जैसे अलास्का में सोना और खनिज तेल, लेब्राडोर में लौह अयस्क, साइबेरिया में निकिल ने खनन बस्तियों की स्थापना और यातायात के साधनों के विकास को प्रोत्साहित किया है। परन्तु खनन क्रियाओं ने यहाँ प्रदूषण तथा इस कमजोर पारितंत्र के लिए अन्य पर्यावरणीय समस्याएँ पैदा की हैं।

पाठगत प्रश्न 15.3

1. निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दीजिए–

   (अ) टुण्ड्रा प्रदेश में पाए जाने वाले किन्हीं तीन जानवरों के नाम बताइए।

   (i)_____ (ii)_____ (iii)_____

टिप्पणी

(ब) टुण्ड्रा प्रदेशों में पाए जाने वाले तीन प्रमुख खनिज पदार्थ कौन–कौन से हैं?

(i)_____ (ii)_____ (iii)_____

(स) टुण्ड्रा प्रदेश में उत्पादकता कम क्यों है? कोई दो कारण दीजिए।

(i)_____ (ii)_____ (iii)_____

(द) टुण्ड्रा प्रदेश में पाई जाने वाली किन्हीं दो जनजातियों के नाम बताइए।

(i)_____ (ii)_____

आपने क्या सीखा

जीवोम शब्द जैविक घर का संक्षिप्त रूप है। जीवोम एक वृहत प्राकृतिक पारितंत्र है जिसमें हम पौधों और प्राणियों के समूहों के कुल समुच्चय का अध्ययन करते हैं। यहाँ सभी प्रकार के जीवों में न्यूनतम साझा विशेषताएँ होती हैं और सभी जीवोमों में कमोवेश एक सी पर्यावरणीय दशाएँ होती हैं। जीवोम के आकार, स्थिति और उसकी विशेषताओं को प्रभावित करने वाले विविध कारक हैं। ये कारक हैं दिन के प्रकाश और अंधेरे की अवधि, औसत तापमान, वर्धन काल का समय, वर्षण, पवन प्रवाह, मृदा प्रकार, ढाल, अपवाह आदि। जीवोम के वर्गीकरण के दो प्रमुख आधार हैं– जलवायु का आधार जिसमें नमी या आर्द्रता की उपलब्धता पर विशेष बल दिया जाता है और जलवायु तथा वनस्पति का आधार।

प्रत्येक जलवायविक कटिबन्ध से एक–एक जीवोम को गहन अध्ययन के लिए चुना गया है। ये हैं– (i) सदाहरित वर्षावन जीवोम (ii) शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम (iii) आर्कटिक टुण्ड्रा जीवोम। सदाहरित वर्षावन जीवोम विषुवत वृत्त के दोनों ओर 10^0 अक्षांश तक विस्तृत हैं। इस क्षेत्र में उच्च तापमान और अधिक वर्षा पूरे वर्ष होती है। तापमान और वर्षा के संयोजन ने इस जीवोम को अनेकानेक पौधों और जीवों की प्रजातियों के लिए आदर्श पर्यावरण प्रदान किया है। इस क्षेत्र में पाए जाने वाले प्रमुख वृक्ष हैं – एबोनी, महोगनी, रोजवुड, संदलवुड आदि। ये अधिकतर कठोर लकड़ी के वृक्ष हैं। पौधों के साथ बहुत प्रकार के आर्किड, फर्न, मॉस, औषधीय पौधे धरातलीय स्तर पर पाए जाते हैं। वनस्पति की तरह ही सदाहरित वर्षा वनों में अनेकानेक पक्षियों, स्तनधारी जीवों और कीट पतंगों का वास हैं। उष्ण कटिबन्धीय वर्षा वन जीवोम में उत्पादकता अन्य सभी जीवोमों से अधिक है। आज मानव ने विविध विकासात्मक कार्यकलापों द्वारा जैविक रूप से धनी इस पारितंत्र को भी नष्ट करना प्रारंभ कर दिया है। इसके परिणामस्वरूप बहुत सी पारिस्थितिक तथा पर्यावरणीय समस्याएँ पैदा हो गई हैं जैसे हरित गृह प्रभाव और भूमंडलीय तापन। शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमियों की दो अनोखी अवस्थितियॉ हैं – उत्तरी गोलार्द्ध में महाद्वीपों के आन्तरिक भाग और दक्षिणी गोलार्द्ध में महाद्वीपो के सीमान्त प्रदेश । दोनो ही अवस्थितियों में वर्षा बहुत कम होती

टिप्पणी

है। इन घासभूमियों को विश्व के भिन्न–भिन्न भागों में भिन्न–भिन्न नामों से जाना जाता है– यूरेशिया में स्टेपी, उत्तरी अमेरिका में प्रेयरी, आस्ट्रेलिया में डाउन्स और दक्षिणी अफ्रीका में वेल्ड। इन प्रदेशों की प्राकृतिक वनस्पति वृक्ष रहित घासभूमियाँ हैं। वृक्ष केवल पर्वतीय ढलानों पर दिखाई देते हैं जहाँ वर्षा की मात्रा अधिक है। इन घासभूमियों में हिरण, जंगली गधा, घोड़े, भेड़िया, कंगारू, ऐमू और डिंगो अथवा जंगली कुत्ते पाए जाते हैं। किसी भी जीवोम में इतने परिवर्तन नहीं हुए जितने कि शीतोष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम में। ये मानव के विभिन्न कार्यकलापों के कारण हुआ है। आर्कटिक टुण्ड्रा आवश्यक रूप से एक ठंडा मरुस्थल है, जिसमें वायुमंडलीय नमी न के बराबर है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु छोटी और ठंडी होती है। यह जीवोम उत्तरी गोलार्द्ध के उत्तरी सीमा के साथ–साथ विस्तृत है। पौधों और प्राणियों की प्रजातियाँ यहाँ कम हैं। यहाँ का धरातल बहुत सी प्रजातियों के मिश्रण से भरा हुआ है। यहाँ की बहुत सी वनस्पति प्रजातियाँ बौने आकार की हैं जैसे घास, मॉस, लिचेन, फूलों वाली जड़ी बूटी और छितरी हुई छोटी झाड़ियाँ। इस जीवोम के जानवरों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– (i) आवासी और (ii) अप्रवासी। रेंडियर, भेड़िया, लोमड़ी, कस्तूरी बैल, आर्कटिक खरगोश, सील और लेमिंग्स यहाँ के प्रमुख जीव हैं। कठोर पर्यावरण के कारण यहाँ की जनसंख्या कम है। यूरेशिया में सेमोयड्स, लैप्स, फिन्स और याकूत जनजातियाँ, कनाडा और अलास्का के ऐस्कीमो यहाँ के मूल निवासी हैं और सदियों से चलवासी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इन्होंने शिकार करके टुण्ड्रा के जीवों को नष्ट किया है। अब इनमें से बहुत सी जनजातियाँ स्थाई जीवन व्यतीत करती हैं। हाल के वर्षों में खनिज पदार्थों की खोज से खनन बस्तियों के विकास को प्रोत्साहन मिला है। लेकिन खनन क्रियाओं ने प्रदूषण और यहाँ के कमजोर पारितंत्र के लिए पर्यावरणीय समस्याएँ खड़ी कर दी हैं।

पाठांत प्रश्न

1. जीवोम क्या है? जलवायु और वनस्पति के आधार पर जीवोम के वर्गीकरण का वर्णन कीजिए।
2. सदाहरित वर्षावन जीवोम की अवस्थिति, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति तथा प्राणि जीवन की व्याख्या कीजिए।
3. जीवोम के आकार, अवस्थिति और विशेषताओं को प्रभावित करने वाले विविध कारकों का वर्णन कीजिए।
4. ''कोई अन्य जीवोम इतने परिवर्तनों से नहीं गुजरा जितना कि शीतोंष्ण कटिबन्धीय घासभूमि जीवोम''। उपयुक्त तर्कों द्वारा इस कथन की पुष्टि कीजिए।
5. टुण्ड्रा प्रदेश में पौधों और जानवरों के जीवन पर जलवायु के प्रभाव की विवेचना कीजिए।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

15.1

1. (i) 10^0 उत्तर और दक्षिण

   (ii) दोपहर

   (iii) प्रथम 20–50 मीटर की ऊँचाई वाले (i) द्वितीय – 10 से 20 मीटर (iii) तृतीय स्तर धरातल से 10 मीटर

   (iv) (अ) बड़े बाँध और जलाशयों का निर्माण (ब) सड़कों और राजपथों का निर्माण (स) इमारती लकड़ी का काटना (द) चारागाह और फसलों के लिए वनों की कटाई (य) भूमिहीन किसानों द्वारा वनों का सफाया एवं अतिक्रमण।

   (v) (अ) हरित गृह प्रभाव (ब) भूमंडलीय तापन

15.2

1. (अ) आंतरिक (ब) निम्न (c) अधिक, कम (द) खाद्य भंडार

2. (अ) iii (ब) iv (स) i (द) v (य) ii

15.3

(अ) रेंडयर, भेड़िया, लोमड़ी, कस्तूरी बैल, आर्कटिक खरगोश, सील, लैमिंग्स (कोई तीन)

(ब) सोना, लौह अयस्क और खनिज तेल

(स) (i) न्यूनतम सूर्य प्रकाश और सूर्यातप (ii) पोषकों की कमी

(iii) कम विकसित मृदा (iv) मृदा में नमी की कमी

(v) स्थाई रूप से धरातल पर बर्फ का जमना और

(vi) बहुत छोटा वर्धनकाल (कोई तीन)

(द) सेमोयड्स, लैप्स, फिन्स, याकूत, एस्कीमो (कोई दो)

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. अनुच्छेद 15.1 और 15.2 देखिए
2. अनुच्छेद 15.3 देखिए
3. अनुच्छेद 15.1 देखिए
4. अनुच्छेद 15.4 (iii) देखिए
5. अनुच्छेद 15.5 देखिए